गायत्री साधना

तांत्रिक 'बहल'



गायत्री मन्त्र जो राजर्षि विश्वामित्र की अन्तश्चेतना और त्रिगुणातीत शक्ति से निर्मित है जिसका वेदों से लेकर पुराणों तक सभी धार्मिक ग्रन्थ उद्घोष करते हैं। गायत्री मन्त्र की साधना—एक मार्ग है आत्मबोध का, यह एक सोपान है चेतना के ऊर्ध्वारोहण का। गायत्री कुंडलिनी जागृति एवं समाधि हेतु एक साधना मन्त्र है।

धर्म ग्रन्थों में गायत्री की त्रिगुणातीत उपासना अनिवार्य रूप से समाज को दी गई है। सन्ध्या का विधान आवश्यक-रूप से विसद किया गया है। भौतिकता की चकाचौंध और यांत्रिक जीवन प्रणाली में यह आध्यात्मिक आत्मचेतना की ओर ले जाने में सहायक है।

तांत्रिक बहल की अन्य उपयोगी पुस्तकें

१. सामुद्रिक ज्ञान और पंचांगुली साधना
२. हस्तरेखाएँ देखना कैसे सीखें
३. हस्तरेखाओं के गूढ़ रहस्य
४. पृथ्वी में गढ़ा धन कैसे पायें
५. मृत आत्माओं से सम्पर्क और अलौकिक साधनायें
६. परा विज्ञान की साधना और सिद्धियां
७. मंत्र साधना कैसे करें
८. तंत्र साधना कैसे करें
९. सुगम तांत्रिक क्रियायें
१०. सुखी जीवन के लिए—टोटके और मन्त्र
११. गोरख तन्त्र
१२. मुस्लिम तन्त्र
१३. शंकराचार्य विराचते—सौन्दर्य लहरी
(१०० यन्त्रों के चित्रों सहित)
१४. वेदों में तन्त्र
१५. वनस्पति तन्त्र
१६. चमत्कारी मन्त्र साधना
१७. चाणक्य विरचित—तन्त्र-मन्त्र-यन्त्र

मंगाने का पता—
रणधीर (प्रकाशन) हरिद्वार

गायत्री मन्त्र साधना

आत्मचेतना के विकास और साधना हेतु
जनमानस को सुगमतापूर्वक जानकारी
देने का प्रयास

प्रस्तुति—**तांत्रिक बहल**
प्रस्तावना—**स्वामी हरिहर दास त्यागी**

मूल्य : ३०.००

प्रकाशक :
रणधीर (प्रकाशन) हरिद्वार

प्रकाशक :

रणधीर प्रकाशन

रेलवे रोड, आरती होटल के पीछे

हरिद्वार-२४९४०१

दूरभाष : (०१३३) ४२६२९७

वितरक—

रणधीर बुक सेल्स (शोरूम)

रेलवे रोड (मुख्य चिकित्सालय के सामने) हरिद्वार

मुख्य विक्रेता—

१. पुस्तक संसार, बड़ा बाजार, हरिद्वार

२. पुस्तक संसार, नुमाइश का मैदान जम्मू तवी

संस्करण प्रथम १९९३

मूल्य : तीस रुपये मात्र

मुद्रक :

शर्मा प्रिंटर्स,

श्याम गली, मौजपुर दिल्ली-५३

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ संख्या
१. लेखकीय	९
२. शान्ति पाठ	१५
३. गायत्री की उत्पत्ति	१६
४. गायत्री विज्ञान	२९
५. गायत्री महत्व	४८
६. प्रमुख गायत्रियाँ	५५
७. विश्वामित्र संहितोक्त गायत्री कवच	६२
८. उपासना से पहले	६६
९. मुद्रायें	८२
१०. पूजन सामग्री, पूजन पात्र	८४
११. हवन के लिए औषधियाँ	८६
१२. उपासना विधि	८७
१३. मानस पूजा	१०७
१४. अर्घ्यस्थापन विधि	१०८
१५. आवरण पूजा	११५
१६. नैमित्तिक पूजन	११९
१७. अथ काम्य पूजन	१२०
१८. उपासना के बाद की आठ मुद्रायें	१३०
१९. गायत्री के चौबीस रूप	१३२
२०. गायत्री स्वरूप	१३४
२१. ब्राह्मण की गायत्री, क्षत्रिय की गायत्री	१३६
२२. वैश्य की गायत्री	१३७

२३. गायत्री विधान	१५०
२४. पूर्णाहुति	१६७
२५. गायत्री सिद्धियां	१६९
२६. श्री गायत्री चालीसा	२१५
२७. विसर्जन, अर्घ्यदान	२१७
२८. आरती गायत्री जी की	२१८
२९. आरती गायत्री जी की	२१९
३०. अन्त में	२२०

प्रस्तावना

गायत्री की अन्तश्चेतना साधना के सन्दर्भ में आज तक सैकड़ों के हिसाब से निरन्तर ग्रन्थ रचना होती रही है। प्रस्तुत किताब भी लेखक का साधना हेतु सुगमतापूर्वक जानकारी देने का एक प्रयास है। इसकी सफलता असफलता का निर्णय जन मानस पर इसके अंकित प्रतिबिम्ब से हो जायेगा।

वास्तविकता में "साधना" यह शब्द ही हमें बहुत कुछ उद्‌बोधित करता है। केवल इसका बोध होना ही आवश्यक है। जिससे साध्य (परमभक्ति) को साधा (प्राप्त किया) जाये वह पद्धति मार्ग अवलम्बन साधना कही जाती है। आजकल साधकों से अनमने से साध्य छूट जाता है और एक मायाजाल के भंवर में आडम्बरी अपने आपको ही समझाने हेतु कर्मकाण्ड के कूप में गिर जाते हैं। जिससे पूरी की पूरी साधना के प्रयास निष्फल राहगीर की राह भटकने जैसे हो जाते हैं।

'साधना' यह एक सोपान है चेतना की ओर उन्मुख होना या ऊर्ध्वारोहण का। साधना एक पगडण्डी है यानी परम शक्ति के मिलन और अनुभूतियों का मार्ग। साधना एक जागरुकता है आत्मा के जागरण की। साधना एक मार्ग है आत्मबोध का। साधना एक चक्षु है दिव्यज्ञान-सम्यक दृष्टि का, आध्यात्मिक उपलब्धता का।

'गायत्री मन्त्र' यह भी आत्मिक—कुण्डलिनी जाग्रति, समाधि हेतु एक साधना मन्त्र है। जिसका उद्‌घोष हमारे पुरातन सभी धर्म साहित्य, वेदों से लेकर पुराणों तक एक मुख से करते हैं। इसका सबसे प्रबल प्रमाण गायत्री मन्त्र ही है जो

राजर्षि विश्वामित्र की अन्तश्चेतना से त्रिगुणातीत शक्ति से प्रादुर्भूत है। हिन्दु धर्म ग्रन्थों में गायत्री की त्रिगुणातीत उपासना अनिवार्य रूप से समाज को दी है। विशेषतः हमारे पूजनीय धर्मशास्त्रों में सन्ध्या का विधान अनिवार्य रूप से विशद किया गया है। समाज के सभी वर्गों के साथ-साथ ब्राह्मण वर्ण को तो त्रिकाल सन्ध्या अर्थात् ईश्वरोपासना का विधान है। इस विधान की पूर्णता जो ब्राह्मण नहीं कर पाता या नहीं करता, वह ब्राह्मण नहीं है, ऐसी भी घोषणा हमारे शास्त्र मनु-स्मृति से पुराणों तक सभी में की गई है।

फिर भी आजकल के अर्थ प्रधान व्यवसायवादी समाज में कितने व्यक्ति ब्रह्मनिष्ठ, ब्रह्म उपासना और सन्ध्या वंदन करते हैं, यह एक अलग बात है क्योंकि भौतिकता की चकाचौंध, आपाधापी की जीवन प्रणाली व यांत्रिकीकरण से ये आत्म चेतना के आध्यात्मिक मार्ग से छूटते जा रहे हैं।

आज के सांप्रत मानव समाज को पशुता से पुनः मानवता की ओर लाने के लिए एक मनुष्य दूसरे मनुष्य के साथ मानवीय ढंग से सुख-शांतिमय जीवन यापन के लिए अहं-स्वार्थ लोभ विहीन समाज के जन जागरण हेतु ऐसे प्रयास अवश्य ही स्तुत्य व भगवद् कार्य स्वरूप हैं सार रूप में परब्रह्म को पाईये, मन के ही परतीत।

—स्वामी हरिहर दास त्यागी

लेखकीय

सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर वर्तमान अंतरिक्ष युग तक आस्था पूर्ण साधना साधक का एक मात्र, अंतिम और सबसे बड़ा सम्बल है। कहावत है—'हारे को हरिनाम' अर्थात् पुरुषार्थ, बुद्धि, साधन और समस्त प्रकार के सम्बलों से निराश होने की स्थिति में असहाय मानव के लिए जो अंतिम साधन बचा रहता है। वह है उस रहस्यमय, शक्ति की शरण में जाने का। वास्तव में आस्थापूर्ण साधना एक बहुत बड़ा सम्बल है। ये पूजा, प्रार्थना और विश्वास के प्रतीक किसी एक धर्म तक ही सीमित नहीं है वरन् ये संसार के सभी धर्मों, तथा सम्प्रदायों से जुड़े हैं तथा इनके चमत्कारों का अनुभव विश्व के हर कोने में रहने वाली मानव जाति के सामने आया है।

श्रद्धा और विश्वास के बाद जो दूसरी बात साधना में आवश्यक है वह है अभ्यास। अभ्यास के द्वारा साधक हर साधना में सफलता प्राप्त कर सकता है कहा गया है—'करत करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान।' इस संदर्भ में एक कथा प्रस्तुत हैं—

एक दिन भगवान शंकर ने डमरू बजाया। डमरू की ध्वनि सुनकर इंद्र अत्यधिक प्रसन्न हो उठे। थोड़ी ही देर में चारों ओर बादल घिरे और बरसने लगे। यह देख किसान काम में जट गए। थोड़े-थोड़े समय के बाद यह सिलसिला चलने लगा। फसलें लहलहा उठीं।

एक दिन शंकर और डमरू की किसी बात को लेकर अन-बन हो गई। भगवान शंकर डमरू से और डमरू उनसे रुठ गया। इस प्रकार कई दिन बीत गए। शंकर ने डमरू को हाथ नहीं लगाया। न डमरू बजा और न उसे राजा इन्द्र ने सुना। इस कारण बादल न बरसे। फसलें सूखने लगीं। देखते-देखते अकाल पड़ गया। मिट्टी फट गई। दरारें पड़ गईं। नदियाँ सूखने लगीं। हाहाकार मच गया। पशु-पक्षी प्यासे मरने लगे।

इस विनाश को देखकर पार्वती दुखी हो उठीं। उन्होंने कहा नाथ कई दिनों से आपने डमरू नहीं बजाया। डमरू बजाइए न। लेकिन भगवान शिव ने पार्वती की एक न सुनी।

एक दिन पार्वती चिंता में डूबी थीं कि उन्हें एक उपाय सूझ गया। बोली : प्रभु मैं कैलाश पर रहते-रहते ऊब गई हूँ। मुझे मृत्यु लोक ले चलिए। भोले शंकर झट तैयार हो गए। चलते-चलते दोनों एक क्षेत्र में पहुँचे। वहाँ बुरा हाल था। जगह-जगह कंकाल पड़े थे खेती सूख गयी थी। जनता अन्न के लिए तरस रही थी। यह दुर्दशा देखकर पार्वती कराहकर रह गई। बोली—नाथ! आपने डमरू नहीं बजाया न, इसलिए यह हुआ है। आप के झगड़े में ये मारे जा रहे हैं। शंकर मौन रहे। फिर दोनों चलते-चलते एक गाँव में पहुँचे। गाँव में एक किसान सूखे खेतों में हल चला रहा था। उसे देख पार्वती बोली : प्रभु। देखो तो, यह किसान कितना मूर्ख है। सूखे खेतों में हल चलाकर स्वयं तो कष्ट पा ही रहा है, इन बैलों को भी कष्ट दे रहा है।

पार्वती की बात सुनकर भोले बाबा का माथा ठनका। वह तुरन्त किसान के पास पहुँचे। किसान ने उनको देखकर

हल रोक दिया और पूछा : कहिये आपकी क्या सेवा करूँ ?

भगवान शंकर ने कहा : वत्स ! भयंकर सूखा पड़ा है। तुम हल चलाकर इन बैलों को क्यों सता रहे हो ?

किसान बोला : महाराज। मनुष्य के जीवन की सफलता की कुंजी अभ्यास है। जानता हूँ पानी नहीं बरसा है चारों ओर सूखा है। लेकिन मैं इसलिए यह सब कर रहा हूँ कि अगर हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाऊँगा तो मेरा और इन बैलों का हल चलाने का अभ्यास छूट जाएगा। अभ्यास छूट गया तो हम शनैः शनैः आलसी हो जायेंगे। मान लें अगर कुछ दिनों के बाद पानी बरस ही गया तब ?

इतना सुनते ही भगवान शंकर प्रसन्न हो गए। उन्होंने सोचा : कितनी बड़ी बात बतलायी है इसने। यह तो मेरा गुरु है। मैंने डमरू पर क्रोध कर अपना ही अहित किया है। डमरू बजाना तो हल चलाने से अधिक कलापूर्ण है। ऐसा करने से तो मेरा अभ्यास ही छूट जायेगा। बस, देखते देखते भगवान शंकर कैलास पर पहुंचकर भंग में मस्त होकर डमरू बजाया। डमरू की आवाज सुनकर बादल बरसने लग गये।

इस कथा के माध्यम से मैं साधकों को केवल इतना ही बतलाना चाहता हूँ। साधना, उपासना में निरन्तर अभ्यास परम आवश्यक है। गायत्री उपासना में तो निरन्तर साधना और अभ्यास तो परम आवश्यक है। साधना और अभ्यास के बाद हर साधक को संयम का पाठ भी पड़ना होगा। संयम मन को बांधने, उस पर अंकुश रखने से ही आयेगा। यह एक सनातन नियम है—हर वस्तु अपने अंश की ओर जाती है। आप

स्वयं देखें अग्नि जलाने पर उसकी लपटें ऊपर को जाती हैं क्योंकि अग्नि सूर्य का अंश है और वह अपने अंशी की तरफ जाती है। पानी का बहाव तेजी से नीचे की ओर जाता है। वह भी अपने अंशी को पाने के लिए तत्पर रहता है।

मन का कार्य ही सदैव भटकना और चंचल रहना है। वह तो भागेगा ही, हमें उसे संयम का पाठ पढ़ाना है।

अकबर के मन में अपने दरबारियों को अपने प्रशिक्षण का चमत्कार दिखलाने की इच्छा उमड़ी। उन्होंने कुछ बिल्लियाँ मंगवाई और उन्हें कुछ ऐसा सिखलाया कि भोजन के समय वे बादशाह के सामने आ बैठती। बादशाह उनके सिर पर मशालें जलाकर रख देता है। बिल्लियाँ थीं कि टस-से-मस न होतीं। अकबर मंत्रिमंडल से कहते-ऐसा होता है, प्रशिक्षण। किसी को संयम, का पाठ सिखलाना हो तो इन बिल्लियों की तरह ही बनाना पड़ेगा।

अकबर के इस प्रशिक्षण और बिल्लयों के संयम को देखकर सारे दरबारी चकित थे। एक बार भोजन के समय बिल्लयों को अनुशासन में बैठा दिखाकर बादशाह बोले : देखो, हम मनुष्य हैं। हमारे पास विवेक है और बुद्धि भी। हम पशुओं को तो पाठ सिखा लेते हैं, लेकिन स्वयं कुछ नहीं सीखते।

बीरबल से नहीं रहा गया। बोला : यह कोई चमत्कार नहीं है। इन बिल्लियों के इस खेल पर हैरान मत होइये। अगर ये बिल्लियाँ कल भी ऐसा कर दिखायें तो मानूं। अकबर को क्रोध आ गया : क्या कहते हो ? यह मेरी पढ़ाई हुई बिल्लियाँ हैं। तुम्हारी चुनौती स्वीकार है।

अगले दिन अकबर भोजन करने बैठे। बिल्लियां भी लाई गयीं। बिल्लियों के सिरों पर मशालें रख दी गयीं। उधर अभी बादशाह ने पहला कौर मुंह की ओर बढ़ाया ही था कि बीरबल ने उनके सामने चूहे छोड़ दिए। बिल्लियाँ चूहों पर टूट पड़ीं।

चूहों के पीछे भागना बल्लियों की नियति है। इसी प्रकार मन की नियति भटकना है। वह तो भटकेगा ही, लेकिन हमें संयम के पाश में उन्हें बांधना है, आशा है साधक गण मेरी इस बात पर ध्यान करेंगे।

प्रिय पाठकों। इस पुस्तक को लिखकर मुझे बहुत आनन्द प्राप्त हो रहा है, सन्तोष प्राप्त हो रहा है, कृतज्ञ हूँ मैं माँ गायत्री का। और सदैव प्रेरणा देने वाली, सत्यनिष्ठ, वेदपाठी, संस्कारित, ईश भक्त धर्म पत्नी का।

गायत्री वेदों की माता है, जननी है। यह वेद-वेदाँग आध्यात्मिक व भौतिक उन्नति, ज्ञान-विज्ञान का अक्षुण्ण भंडार अपने में समेटे हैं। अतः गायत्री उपासना कल्याण का साधन है। इसी से हम उन्नति, सुखमय जीवन-भक्ति, सत्-पथगामी बन सकते हैं।

अगर पाठक वर्ग को कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपना तुच्छ प्रयास सफल समझूंगा। मार्गदर्शन आलोचना व विरोध के लिए, आप सब प्रकार से स्वतन्त्र हैं पर पहले सच्चे साधक बनें फिर आलोचक, तो मुझे प्रसन्नता होगी।

कोई समस्या अथवा जिज्ञासा हो तो निःसंकोच पत्र व्यवहार कर समाधान प्राप्त कर लें। आपके पत्रों का सदैव स्वागत है।

धन्यवाद।

ताँत्रिक बहल
"तंत्र सबके लिए मिशन"
डी-4, राधापुरी, कृष्णनगर,
(जमुनापार), देहली-110051

शान्ति-पाठः

ॐ स्वस्ति न ऽ इन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः ॥ स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो ऽ अरिष्ट्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

ॐ पथः पृथिव्याँ पय ऽ ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः ॥ पयस्वतीः प्रविशः सन्तु मह्यम् ॥

व्विष्ण्णोर राटमसि व्विष्ण्णोः श्नप्त्रेस्थो व्विष्ण्णोः स्यूरसि व्विष्ण्णोध्रुर्वोसि ॥

व्वैष्ण्णवमसि व्विष्ण्णवे त्त्वा ॥

अग्निर्द्देवता व्वातोदेवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो देवता रुद्द्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता व्विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्द्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता ॥

चत्वारि शृंङ्गा त्रयो ऽ अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो ऽ अस्य ॥

त्रिधा व्वद्धो व्वषभो रोरवीति महादेवो मर्त्या ऽ आविवेश ॥

नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥

अदितिद्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्म्माता स पिता स पुत्रः

व्विश्श्वेदेवा ऽ अदितिः पञ्चजना ऽ अदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम् ॥

दीर्घायुत्वाय बलाय व्वर्च्चसे सुप्रजास्त्वाय सहसा ऽ अथो जीव शरदः शतम् ॥

द्द्यौः शान्तिरंतरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः व्वनस्पतयः ॥

शान्तिर्व्विश्श्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व्व ँ शान्ति रेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ॥

गायत्री की उत्पत्ति

बात उस समय की है जब सत्यव्रत निर्वासित जीवन व्यतीत कर रहा था। अकाल की छाया लगभग समाप्त हो गयी थी। जनता परिश्रम कर धरती पर हरियाली को वापस ले आयी थी। घोर परिश्रमकर सबने जीवनस्तर पुनः प्राप्त कर लिया था। घर त्यागकर गये लोग अपने-अपने घर पर आ गये थे। जीवन ठीक ठाक हो गया था। सत्यव्रत भी कान्य कुब्ज देश आ गया। विश्वामित्र के पुत्र का राज्याभिषेक कर उसे राज-सिंहासन पर आसीन कर दिया गया था।

विश्वरथ की पत्नी राजमाता के गौरवशाली पद पर आ गयी थी। सब कुछ ठीक कर सत्यव्रत कौशल देश जाकर विश्वरथ की खोज करना चाहता था। विश्वरथ को खोज निकालना चाहिए। कहाँ है वह ? खोज निकलेगा। इसका उसने पक्का निश्चय कर लिया था।

अपने इस अभियान पर वह जाना ही चाहता था कि एक अत्यन्त दुख भरा समाचार आया। राजा निबंधन का स्वर्गवास हो गया। वशिष्ठ ने सत्ता अपने हाथ में ले ली है। सत्यव्रत में उबाल आ गया। वशिष्ठ का यह दुस्साहस ! सत्ता स्वयं संभाल ली···क्या इसी दिन के लिए महर्षि ने उसे निष्कासित किया था। अयोध्या पर भीषण आक्रमण करने का विचार उसने मन ही मन बना लिया।

वशिष्ठ ने जब मर्यादा का उल्लंघन किया है, तो वह भी

अवश्य करेगा। राजपुरोहित पर आक्रमण, विचार भयानक था। कान्यकुब्ज उसकी सहायता करेगा ही। वहां की सारी सेना उसके नियंत्रण में है··· पर क्या यह कार्य धर्म विपरीत होगा ?

धर्म विपरीत ही सही·· राजपुरोहित द्वारा आखिर यह दुःसाहस क्यों ?

सत्यव्रत तैयारियाँ करने में जूट गया। अयोध्या से समाचार लगातार आ रहे थे। वशिष्ठ के हाथ से सत्ता के सूत्र छूट रहे हैं। राजकाज उनसे संभाला नहीं जा रहा है। वह बहुत परेशान हैं। राजकुमार सत्यव्रत की खोज जारी है। समाचार पाकर सत्यव्रत को शांति मिली।

तभी वशिष्ठ का दूत आ गया। सत्यव्रत को वहाँ पाकर उसे वशिष्ठ का आमंत्रण दिया। सत्यव्रत ने तुरन्त स्वीकार कर लिया। आखिर वशिष्ठ को बुद्धि आ ही गयी। सुबह का भटका शाम को घर आ गया। यह क्या कम था ! वह अयोध्या जाने की तैयारियाँ करने लगा। अयोध्या का सिंहासन प्राप्त कर लेगा, पर सर्व प्रथम विश्वरथ की खोज करेगा।

पुत्र मधुछंद से कहा, मैं तुम्हारे पिता की खोज करके रहूंगा। वह मिल जायेंगे, पर अगर ब्राह्मण पद प्राप्त कर लिया है, तो वह राजमहल में कदम न रखेंगे।

मैं तो केवल उनके दर्शन चाहता हूं।

यह हो ही जायेगा।

मधुछन्द को आश्वस्त कर अयोध्या प्रस्थान कर गया। उसके मन में प्रतिशोध की भावना न थी सत्यव्रत अयोध्या आ गया।

अयोध्या में प्रवेश करते ही जनता से उसका भव्य स्वागत किया गया। अयोध्या की जनता उसका जय-जयकार कर उठी। स्वयं महर्षि वशिष्ठ ने उसका स्वागत किया। फिर राजसिंहासन पर बैठा दिया। वशिष्ठ राजगुरु के पद पर बने रहे। इस पद पर बने रहने का मेरा अधिकार है—वशिष्ठ ने कहा। स्वीकार है, गुरुवर आप पीढ़ियों तक राज गुरु पद पर रहेंगे। क्योंकि महर्षियों की आयु लम्बी होती है। फिर भी एक निवेदन है।

कहो पुत्र ? वशिष्ठ बोले।

"मित्र विश्वरथ ने अगर ब्राह्मणत्व स्वीकार कर लिया होगा, तो यह पद उनको देना पड़ेगा।

स्वीकार है, पर विश्वरथ ब्राह्मणत्व प्राप्त कर ही नहीं सकता है। क्या उसने कभी यजुष किया है ?

"यजुष"...

हाँ ! जो यजुष नहीं कर सकता, वह ब्राह्मण कैसा ?

सत्यव्रत मौन रह गया।

जब तक सभी श्रेष्ठ मुनि विश्वरथ का ब्राह्मणत्व स्वीकार नहीं करते तब तक वह इस पद पर कैसे आ सकता है ? इस कारण विश्वरथ से मुझे कोई डर नहीं है। बात ठीक ही थी।

सत्यव्रत मौन रहा। वशिष्ठ का कथन उचित था। जब तक सभी मुनि पुष्टि नहीं कर देंगे, विश्वरथ का ब्राह्मणत्व कैसे स्वीकार किया जायेगा ? विश्वरथ के स्वकथन मात्र से ही तो समाज स्वीकार न कर लेगा। विश्वरथ राजगुरु न बने, पर परामर्श दाता के रूप में साथ तो रख सकता हूँ।

विश्वरथ रहेगा। अथवा नहीं यह सब बाद की बातें हैं।

वर्तमान तो यह है कि विश्वरथ का पता लगाया जाये। वह हैं कहाँ ?

सत्यव्रत ने हर ओर अपने जासूस भेज दिये। विश्वरथ की खोज की जाये? कहाँ है ? सब ओर विश्वरथ की खोज थी। लेकिन निराशाजनक समाचार आते रहे। सत्यव्रत का मन बेतरह टूट गया। कहीं वह हिमालय तो नहीं चले गये। संसारी का सबसे अन्तिम और श्रेष्ठ स्थान हिमालय की गोद में ही है। उनका मन बेतरह टूटने लगा। क्या अब कभी विश्वरथ से न मिल सकेंगे··· वह इसी दुःख से डूब गया। अयोध्या का शासन सूत्र सत्यव्रत ने भली भाँति संभाल रखा था। प्रजा सुखी थी, पर सत्यव्रत प्रसन्न न था।

"नरेश की जय हो।" प्रतिहारी की ओर देखा सत्यव्रत ने।

"गुप्तचर नायक आये हैं ?"

"प्रवेश की आज्ञा है।" सत्यव्रत ने कहा !

गुप्तचर नायक सामने आया। वह बहुत प्रसन्न दीख रहा था। उसके मुख से ही अनुभव हो रहा था कि अवश्य ही कोई शुभ समाचार है।

"कहो, क्या समाचार है ?" पूछा सत्यव्रत ने।

राजा विश्वरथ का पता चल गया है। अजयमेरू पर्वत के समीप पुष्कर सरोवर के तट पर वह गाथी रूप में है। जनता उनके प्रवचन सुनने टूटी पड़ रही है उन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया है। अब बड़े-बड़े मुनिगण उनके प्रशंसक हैं। वह गाथी रूप में जाने जाते हैं।

सत्यव्रत प्रसन्नता से भर गये !

"उन्हें ब्राह्मणत्व प्राप्त हो गया है ?" सत्यव्रत ने प्रसन्नता छुपाते हुए पूछा !

हाँ महाराजा यह पूर्ण रूप से महर्षि हो गये हैं। उन्होंने अपना नामकरण भी विश्वामित्र कर लिया है।

विश्वामित्र यह नाम हो गया है।

हाँ महाराज।

वह तो बड़ा शुभ समाचार है। उनको हमारा निमन्त्रण दो। अयोध्या उनके स्वागत की प्रतीक्षा कर रहा है।

जो आज्ञा महाराज।

"उनके स्वागत का प्रबन्ध किया जाये।"—सत्यव्रत ने आदेश दिया—महर्षि विश्वामित्र का स्वागत विचार कर वह प्रसन्न हो गये !

गुप्तचर चला गया।

सत्यव्रत की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। विश्वरथ ब्राह्मणत्व प्राप्त कर विश्वामित्र बन गये। यह सचमुच एक महान चमत्कार था। सत्यव्रत तत्काल वशिष्ठ की सेवा में गया—"बोला, गुरुवर ! समाचार ज्ञात हुआ ?

हां गाथी विश्वामित्र···

सत्यव्रत ने देखा। वशिष्ठ के मस्तक पर वितृष्णा थी।

वशिष्ठ बोले, गाथी···गाथी का अर्थ कथाएं कहने वाला—और क्यों ? उन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया है ?

बिना यजुष का निर्माण किये···

सत्यव्रत मौन ही रहा।

यजुष निर्माण किये बिना ब्रह्माणत्व कैसा ? वशिष्ठ पुनः बोले ?

सत्यव्रत ने कुछ न कहा । बिना उत्तर दिये वह लौट पड़े ।

विश्वामित्र भगवान आदित्य को देखकर मुग्ध हो गये । मन बेतरह छटपटाने लगा ।

उन पर सूर्य की लाली पड़ रही थी । उनका गौरवपूर्ण ताम्र रंग में परिवर्तित हो रहा था । हाथ पदमासन में पाँवों पर रखे थे । ध्यानस्थ थे । मन मंथन चल रहा था दृष्टि केवल सूर्य पर केन्द्रित थी । क्या सूर्य इस जगत के प्राणों का आधार नहीं है ?

कुछ तो कारण है कि उसके उदय होते ही सम्पूर्ण विश्व में पंछी चहचहाने लगते हैं । सारे पशु पक्षी अपनी तंद्रा और निंद्रा का त्यागकर चैतन्य हो जाते हैं ।

उसकी ऊष्मा से अन्न पकता है । फलों में माधुर्य का संचार होता है । उसकी गरमी से बर्फ पिघलती है । नदियों को जल मिलता है । शरद, हेमन्त, वर्षा और ग्रीष्म का वह जन्मदाता है । अगर सूर्य न हो तो'' सूर्य रहित विश्व की कल्पना मात्र से वह कांप उठे । बिना सूर्य के यह संसार कुछ नहीं । विश्वामित्र सूर्य के प्रति श्रद्धा से भर गये । इतना सब होने पर भी किसी ने सूर्य की स्तुति नहीं की । उसका गुणगान नहीं किया । यह कैसा आश्चर्य है ।

सचमुच पुष्कर के तट पर बैठकर विश्मामित्र को एक नवीन संचार मिला था । सूर्य चिन्तन'''सूर्य में ही सब है । यजुष की अपेक्षा उनको सूर्य की गायत्री कहीं अधिक मधुर लग रही थी । उनका मन धीरे-धीरे गुनगुनाने लगा, पर कुछ समझ न

आ रहा था। क्या गुनगुना रहे हैं – ॐ···अरे : यह तो ब्रह्मा है···

भू: भुर्व: स्व:·····

गुनगुनाते विश्वामित्र यकायक रुक गये।

बड़े मधुर स्वर हैं···भू लोक, अन्तरिक्ष लोक, स्वर्ग लोक—सभी लोकों को प्रभावित करने वाला सूर्य—विश्वामित्र ध्यानस्थ हो गये। समय का ज्ञान ही समाप्त हो गया था। अचानक मन्दिर के घंटे बजने लगे। हड़बड़ाकर खड़े हो गये। अरे प्रवचन का समय हो गया। अपनी ही दिनचर्या भूल गये। तत्काल बाहर आये। लहराता जनमानस उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। आसन पर आये। जनसमूह जय-जयकार कर उठा।

"विश्वामित्र की"
"जय !"
"विश्वामित्र की"
"जय !"

विश्वामित्र मन ही मन प्रसन्न हो गये। फिर बोले—"मेरे प्रवचन आपको अच्छे लगते हैं। यह प्रसन्नता की बात है, पर मेरे आत्मन्···जय-जयकार न करो। आज मैं तुम्हें एक नयी गाथा सुनाता हूँ।

उस दिन विश्वामित्र ने एक नयी कथा सुनायी, जिसमें एक ऐसे देश की कल्पना की गयी थी, जो सूर्य विहीन था। उसका रोमांचक विवरण सुनकर श्रोता घबरा गये। कथा की एक एक बात चुभने वाली थी। बिना सूर्य के जगत का रहना तो मृत्युरूपी है। मृत जीवन···।"

सूर्य न हो तो आप संसार की कल्पना करें।

सब डर गये। एक डरावनी कल्पना थी। सूर्य का न होना। सब आश्चर्य से उनको देख रहे थे। विश्वामित्र ने एक महत्व-पूर्ण बात कह दी थी। मन को स्पर्श करने वाली बात। एक अधूरी बात !

क्या किसी ने सूर्य की प्रशंसा के कभी दो शब्द कहे हैं? बेचारा सूर्य···। उन्होंने अपना प्रवचन समाप्त कर दिया। वह उठकर कुटिया के भीतर आ गये। श्रोताओं के सामने विश्वा-मित्र ने एक नया प्रश्न रख दिया था। यह ऐसा प्रश्न था, जिसका उत्तर किसी के पास न था।

सर्वत्र चर्चा का विषय बना। शिष्यगण चकित थे। सूर्य की यह महत्ता तो सब देवताओं से बढ़कर है। सूर्य के इस कर्म के समक्ष तो सभी देवता हलके हैं। सूर्य ने तो सब संतुलित कर रखा है।

विश्वामित्र को स्वयं पर आश्चर्य था। ऐसी बात कहाँ से आ गयी? एक सटीक प्रश्न···?

विश्वामित्र मुस्करा उठे। फिर होंठ गुनगुनाने लगे। ॐ भूः भुवः स्वः···इससे आगे न बढ़ पा रहे थे, पर प्रयत्न न छूटा था। रह-रह कर ऐसा लग रहा था, मानो भीतर से शीघ्र कुछ आने वाला है, आ रहा है···इस बीच ध्यानस्थ हो गये।

उनको इस बात का जरा भी आभास न मिला कि मन की कथा ने बाहर और भीतर कैसी हलचल मचा दी है। बिना सूर्य के कहीं··· इस कल्पना ने मन को रोमांचित कर दिया था। विश्वामित्र के सम्पूर्ण अस्तित्व को झकझोर दिया था।

प्रातः की बेला उगता सूर्य।

विश्वामित्र के होंठ अचानक ही गुनगुना उठे—ॐ भूः भुवः स्वः···ॐ भूः भुवः स्वः···

होंठ गुनगुना रहे थे। आंखें उगते सूर्य पर टिकी थीं। भ लोक, अन्तरिक्ष लोक, स्वर्ग लोक, समस्त लोकों में व्याप्त··· बस। और आगे कुछ भी न सूझ रहा था। विश्वामित्र बार-बार कहते जा रहे थे।

सारा शरीर एक अद्‌भुत अनुभव से भरा था। रोम-रोम जाने किस आनन्द का अनुभव कर रहा था। बड़ी लयात्मक ध्वनि में स्वर आ रहा था।

ओम् भः भुवः स्वः

बड़ा आकर्षण है इस शब्दावली में। और अनजाने ही विश्वामित्र के मुंह से निकल गया—तत्स वितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य··

अरे! विश्वामित्र गुनगुना उठे, "ॐ भूः भुवः स्वः तत्स—वितुर वरेण्य भर्गो देवस्य" "भू लोक, अन्तरिक्ष लोक, स्वर्ग लोक समस्त लोकों में व्याप्त···वेदादि समस्त शास्त्र प्रसिद्ध दिव्य प्रकाश स्वरूप, समस्त ब्रह्माण्ड के उत्पादक आदित्य को वरणीय सर्वश्रेष्ठ, सभी दुःखों पापों के निवारण में समर्थ तेज-स्वरूप को···

विश्वामित्र गुनगुनाते जा रहे थे। उनका रोम-रोम पुलक रहा था। जाने कहाँ खो गये थे। बार-बार वह यही शब्दावली गुनगुना रहे थे।

ॐ भूः भुवः स्वः तत्सविधुतुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य···

अनगिनत बार दुहरा रहे थे। ॐ भूः भुवः स्वः···

और फिर सहसा जैसे भयानक विस्फोट हुआ हो, एक विशाल प्रकाश पुन्ज आकाश से टूटता हुआ उनको दिखलायी पड़ा। उनके होठों से अचानक निकल गया···

धीमहि धियो योन : प्रचोदयात्
धीमहि धियो योन : प्रचोदयात

विश्वामित्र चीख पड़े। चमत्कार हो गया। चमत्कार··· ऐसा लगता है, मानो स्वयं सूर्य भगवान की कृपा हो गयी है। सूर्यदेव ने स्वयं उनके कानों में आगे की पंक्ति बतला दी—

धीमहि धियो योन : प्रचोदयात्।

पूरा छन्द बन गया। एक सार्थक छन्द। ऐसा छन्द, जो मंत्र बन गया है। विश्वामित्र पूरी लय के साथ गुनगुना उठे। ओम भूर्भुवः स्वः तत्सवितुवरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योन प्रचोदयात विश्वामित्र का स्वर और तीव्र हो गया।

वह एकाग्रता के साथ स्वरचित छन्द जो मंत्र से टक्कर ले रहा था·· कितना मिठास भरा···कितना सरल···बार बार विश्वामित्र गुनगुनाये जा रहे थे। वह इतने विभोर हो गए थे कि अपने आसपास के वातावरण का ज्ञान ही न था। वह अपना सुरचित छंद गाये जा रहे थे।

छंदता लालित्य पर स्वयं मुग्ध हो गये थे।

हठात् चौंक गये।

बहुत से कंठों से यह छन्द समवेत स्वर में मुखर हो रहा था। कहीं स्वप्न तो नहीं। दृष्टि उठी···स्तब्ध। उनके ही अनेक शिष्य अत्यन्त तन्मय भाव से उनका छन्द गुनगुना रहे थे।

आश्चर्य से देखने लगे। समवेत स्वर थम गये। सभी शिष्य सामने खड़े थे। सभी आखें मीचे नतमस्तक थे!

इस छन्द को आपने रचा है गुरुवर।

तुम लोगों ने क्या देखा ?

आप गुनगुना रहे थे। कुछ स्मरण करने के लिए छटपटा से रहे थे, फिर आप अचानक गाने लगे। हम सबको यह इतना प्रिय लगा कि हम अपने आपको रोक न सके। आपका साथ देने लगे। याद कर लिया क्या ?

स्मरण क्या करना गुरुदेव। यह तो अत्यन्त सरल है।

यह सूर्य की स्तुति है, पर इस छन्द ने तो मंत्र का रूप दे दिया है।

हां गुरुवर।

मैं इसका नामकरण करना चाहता हूँ। सूर्य हमारे शरीर की रक्षा करता है। उनका जप करने वाले का शरीर सूर्य की कृपा से रक्षित रहेगा। मैं···मैं इसका नाम 'गायत्री मंत्र' रखना चाहता हूँ।

गायत्री ! गायत्री ! हां गुरुदेव ! आप गायत्री ही नामकरण करें। नाम बड़ा सुन्दर है। गायत्री !···और सब मिलकर गुन-गुनाने लगे। विश्वामित्र देखते रह गये। इस बार उन्होंने नहीं गाया केवल सुनते रहे। सुनकर विभोर हो गए। सम्पूर्ण शरीर तरंगित हो उठा। लय और उच्चारण का अद्भुत संगम था।

विश्वामित्र चकित थे।

क्या यह उनकी ही रचना है। विश्वास न हो रहा था ? किस शक्ति की प्रेरणा से वह इसकी रचना कर सके हैं। किसी अज्ञात, अदृश्य शक्ति ने उनको प्रेरित किया है। श्रद्धा से मन

भर गया। सभी शिष्य मिलकर गा रहे थे। स्वर दूर-दूर तक बिखर रहे थे।

विश्वामित्र के होठों पर मुस्कान फैल गयी। हो गया मंत्र का निर्माण ··लो वशिष्ठ···पद्य में यजुष का निर्माण·· गद्य की परम्परा से हटकर। यजुष का निर्माण—विश्वामित्र का रोम-रोम नाच उठा अब उन्होंने पूर्ण ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया।

दिगदिगन्त में उनको अपना यजुष गूंजता सुनाई पड़ा। वह चकित थे। सारा शिष्य समुदाय प्रसन्न था। विश्वामित्र को लगा, उन्होंने पूर्णता प्राप्त कर ली। उनके मस्तक पर तेज आ गया।

निर्धारित समय पर जब वह जन समूह के समक्ष आये, तो सर्वप्रथम बोले, मैंने यजुष का निर्माण किया है। यह पद्य में है। सुनें! प्रभात की बेला में पुष्कर तीरे जब विश्वामित्र ने गायत्री का पाठ किया, तो सारा वातावरण झूम उठा। एक ही बार का पाठ जब वह दुहराने लगे, तो सम्पूर्ण जनसमूह बिना किसी संकेत के स्वयं ही स्वर में स्वर मिलाने लगा। अवर्णनीय आनन्द सब ओर बिखर गया। प्रत्येक मुग्ध था। जाने कब तक जनसमूह पाठ करता रहा। तब विश्वामित्र ने अपने यजुष गायत्री की व्याख्या की।

"ॐ भूर्भुवः स्वः तत्स वितुरवरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।"

पहले इस महामंत्र का शाब्दिक अर्थ समझ लिया जाये। इस मंत्र का शाब्दिक अर्थ इस प्रकार है—

ॐ भूः	भू लोक
भुवः	अन्तरिक्ष लोक

स्वः	स्वर्गलोक। समस्त लोकों में व्याप्त।
तत्	वेदादि समस्त्र शास्त्र प्रसिद्ध।
देवस्य	दिव्य प्रकाश स्वरूप।
सवितु	समस्त ब्रह्मांड के उत्पादक सूर्य को
वरेण्यं	वरणीय, सर्वश्रेष्ठ।
भर्गो	सभी दुःखों, पापों के निवारण में समर्थ, तेजस्वरूप का,
धीमहि	हम ध्यान करते हैं।
यः	जो दिव्य तेज
धियः	बुद्धि प्रवृत्तियों को
प्रचोदयात्	शुभ कर्म (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) में प्रवृत करें इस सम्पूर्ण मंत्र का अर्थ निम्न प्रकार है—

भूलोक, अन्तरिक्ष लोक, स्वर्गलोक अर्थात समस्त लोकों में व्याप्त वेदादि समस्त शास्त्र प्रसिद्ध दिव्य प्रकाशस्वरूप समस्त ब्रह्मांड के उत्पादक सूर्य को वरणीय सर्वश्रेष्ठ समस्त दुखों और पापों के निवारण में समर्थ तेज के स्वरूप का हम ध्यान करते हैं, जो वह दिव्य तेज हम सांसारिक मनुष्यों की बुद्धि-वृत्तियों को शुभ कर्म में अर्थात धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में प्रवृत्त करें।

व्याख्या सुनते ही जनसमूह जय-जयकार कर उठा। इस सफलता पर स्वयं विश्वामित्र हतप्रभ थे।

और उस दिन कोई गाथा न कही। केवल गायत्री गायन चलता रहा। कार्यक्रम पूर्ण होने के उपरान्त देखते-देखते उनकी गायत्री जाने कितनी-कितनी दूर तक फैल गयी। जो सुनता, गुनगुनाने लगता और एक अपूर्व शांति सुख का अनुभव करता।

चर्चित हो गयी, उनकी गायत्री।

उनका यश और बढ़ गया।

हठात् लोगों के मुख से अपने आप निकल गया, महर्षि विश्वामित्र की जय। ऋषियों, मुनियों में धूम मच गई। यह तो बड़ा अनुपम मंत्र है। सबने विश्वामित्र को अपने से श्रेष्ठ घोषित कर दिया। इस मंत्र के रचनाकार का वह नमन करने लगे। भार्गव ने तो इसे सर्वश्रेष्ठ घोषित कर दिया। अब ऋषि विश्वामित्र, महर्षि विश्वामित्र हो गये। उन्हें पूर्ण ब्राह्मणत्व प्राप्त हो गया। सबने उनकी सत्ता चुपचाप स्वीकार कर ली। इस प्रकार गायत्री मंत्र का जन्म हुआ। इसके बाद महर्षि विश्वामित्र ने यात्रा प्रारम्भ की।

गायत्री विज्ञान

स्वभाव के सिद्धान्तों के समर्थन-पुष्टि में मानव ने अनेक मनोवैज्ञानिक सूत्रों की रचनाएं की और मनोवैज्ञानवर्षों से इसी खोज में निरंतर लगे हैं, पर स्वभाव ताकिक विशेषणों के बाहर है। आध्यात्म ज्ञान भी मनोबल, स्वभाव, अन्तर्चक्षु और बुद्धि के समत्व प्रयोग द्वारा चेतन और अवचेतन मन के संचालन से युक्त राज्योग है।

प्रत्येक मनुष्य में आत्म-शक्ति होती है। जीवन के जिस भी क्षेत्र में कार्य करता है, उसमें वह अपनी आत्म-शक्ति का प्रयोग अवश्य करता है। इसके बिना किसी कार्य में भी सफलता

प्राप्त नहीं हो सकती है। इसलिए अगर आत्म-शक्ति के स्वरूप को उचित रूप से लगाया जाय तो साधना के द्वारा यह शक्ति चमत्कार की शक्ति में सफल हो सकती है। मानव ने जीवन के आरम्भ से ही अपने सुखों को साधना में तल्लीन रखा है और जहाँ से भी उसे तनिक सुख मिलता है, वह उसे प्राप्त करता है, पर साधना में ऐसा होता है कि पहले दृढ़ निश्चय एवं संकल्प से परिश्रम करना पड़ता है, तब शक्ति का अनुभव होता है। आज का जिस तरह से देवताओं में विष्णु, मनुष्यों में ब्राह्मण, पर्वतों में सुमेरू, पशुओं में गौर और धातुओं में सोने की श्रेष्ठता स्वीकार की जाती है, उसी तरह व्रतों में चान्द्रायण व्रत की श्रेष्ठता स्वीकार की गई।

चांद्रायण व्रत स्वयं में आत्म-शुद्धि की एक भावना है। इसके द्वारा साधक के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं और वह पूर्णतः पवित्र हो जाता है। चान्द्रायण व्रत प्रत्येक साधक को एक बार अवश्य करना चाहिए। वह गायत्री उपासना और सिद्धियों में बड़ा लाभदायक है। इससे सिद्धियाँ सरलता और शीघ्रता से मिलती हैं।

यह युग कलियुग है। आत्मिक शक्ति चुम्बकीय शक्ति के बहुत निकट है। यही कारण है कि आत्मीय शक्ति द्वारा चेतन मन दूसरों के अवचेतन मन से सम्पर्क प्राप्त कर उसे निर्देश दे सकता है। इसलिए प्रत्येक फल की प्राप्ति के लिए साधना का होना आवश्यक हैं। पर वह तभी सफल हो सकती है जब उसका कोई निश्चित आकार हो। आधारहीन भावना निरर्थक है। आत्मविश्वास अगर दृढ़ संकल्पित है तो वह अवश्य सफल होगा। साधना की भावना में कल्प-विकल्प उठते हैं तब चेतन मन और अवचेतन मन आपस में संघर्ष करते हैं। अपने लक्ष्य

की प्राप्ति के लिए चेतन मन और आसपास की स्थिति पर नियंत्रण रखने के लिए अग्रसित होता है। चेतन मन बहुत-सी सामग्री जुटाने के लिए तत्पर रहता हैं।

ध्यान योग में थोड़ा-सा यत्न करने पर ही साधना को साधना की शक्ति प्राप्ति हो जाती है। जब वृत्ति दूषित भावनाओं से उत्पन्न होती है तो उसका अस्तित्व डगमगाने लगता है और अपनी भावनाओं के कारण कुमार्ग पर चलने लगता है। कई वार तो साधना में थोड़ी-सी सफलता आने पर स्वार्थ के कारण उसका दुरुपयोग कर लोग साधना को नष्ट कर देते हैं।

साधक स्वयं को शक्तिशाली जानकर कुमार्ग का अनुसरण करता है। वास्तविकता को वह मोह निद्रा में भूल जाता है। अगर कोई वास्तविकता को न भूले, तो मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है।

लोग यह सोचते है कि बौद्धिक तत्वों द्वारा ही भगवान का चिन्तन मनन करे बिना किसी तपस्या के साधना की सीमा पर पहुंचा जा सकता है, पर यह केवल भ्रम हैं। जब हम मन को साधना की दृष्टि से एकाग्रचित करने की चेष्टा करते हैं, उस समय नाना प्रकार के विचार मस्तिष्क पर हमला करते हैं। एकाग्रचित होना असंभव सा प्रतीत है। अवचेतन मन कभी भी क्रियाहीन नहीं रहता है। बौद्धिक तत्वों में भगवान का चिन्तन करने से साधना सशक्त होती है। अगर बुद्धि में अवचेतन मन कोई न कोई चित्र बनाता रहे, तो इस अवस्था को हम योग अवस्था कहते हैं, जिसमें साधक सोचते हैं कि यह बड़ा तपस्वी हो चुका है, पर यह कहना चाहिए कि सिद्धि के द्वार देखकर

वह मूर्छित होकर बाहर गिर गया। वह तो लक्ष्य तक पहुंच ही नहीं पाया। इस प्रकार अपने मन को विचार रहित करना और विचार रखने के लिए पहले साधक को शक्ति प्राप्त करनी पड़ेगी। साधना करने की शक्ति प्राप्त करने के पश्चात साधक सम्मोहक बन सकता है।

सम्मोहक से तात्पर्य है कि अपने ही अवचेतन मन अन्तरात्मा में चेतन का भ्रमण। आत्म-सम्मोहक में कहीं भी अर्द्धमूच्छित अवस्था न रहे। अपने आपमें मग्न, आसपास के संसार का ख्याल न कर साधक चिन्तन में लीन रहे। उसे स्वयं का ही नहीं पता कि वह कहाँ तक पहुंचा है। प्रत्येक साधना से पूर्व मन का विचार रहित होना आवश्यक है। अपने लक्ष्य को चैतन्य बुद्धि में रख अवचेतन मन की लगाम पकड़ निर्दिष्ट मार्ग के अध्ययन ही को 'सम्मोहन' कहते हैं। अतएव गायत्री मंत्रों के जाप में इनका ध्यान आवश्यक है।

साधक में जिज्ञासा का होना जरूरी है। अगर गहराई तक जाने की भावना न रखकर केवल मात्र कुछ खेल तमाशे ही करने की भावना रखें तो साधना की शक्ति से लाभ नहीं उठा सकते हैं। वास्तव में जिज्ञासु ही गहराई तक पहुंच सकता है। जिज्ञासु में लगन होती है। जितनी जिज्ञासा होती है, ज्ञान बढ़ता है।

गायत्री साधना के लिए कुछ सरलतम उपाय इस प्रकार है, साधना में एकदम सीधा होकर बैठ जाए, दोनों घटनों पर हाथ रखकर शान्त मन से आखें बन्द कर बैठे रहें। आंखें बन्द करते ही दिव्य दृष्टि प्रकट होगी, पर उसके साथ आप बृद्धि को विचार रहित रखने की चेष्टा करें। जब ऐसा हो जाए तब

अपने हाथ की उंगलियों की सबसे छोटी अंगुली एक-एक बार अंगूठों से जोड़कर बन्द कीजिए। उसी प्रकार अंगूठे से हाथ खोल दीजिए। ऐसा करते समय जब धीमी गति से साँस ले रहे हो, तब ये बोलें ॐ तत् सत् ऐसा अभ्यास निरन्तर १० मिनट करने वालों के मन की शान्ति, रक्तचाप एवं हृदय गति के लिए भी लाभदायक है, बुद्धि को केवल विचार रहित करना है और ॐ तत सत् का पाठ करते हुए अंगूठे से उंगलियों को बन्द कर खोलते रहें। मस्तिष्क को विचार रहित बनाएं। फिर चेतन मन द्वारा अवचेतन मन को निर्देश दें। निर्देशन करते समय ध्यान एकाग्रचित रहना चाहिए। अपने शरीर को आप जैसी भी आज्ञा देंगे, वैसी ही स्थिति आती जाएगी। मन प्रेरित होता रहेगा। यहां भुवों के मध्य देखकर आप आज्ञा दे सकते हैं। भगवान को बहुत निकट पाकर साधारण तीन शब्दों में प्रार्थना करें। ऐसी प्रार्थना करने पर आपको सफलता के साधन प्राप्त होने शुरू हो जायेंगे। बन्द नेत्रों द्वारा ऊपर ब्रह्मरंध्र का ध्यान करते हुए भुवों के मध्य देखने का अभ्यास मन को विचार रहित रखकर थोड़े समय ही करें।

रात्रि में सोते समय आराम से बिस्तर पर सीधे लेट जायें। सिर के नीचे से तकिया निकाल कर एक दिन के पूरे कार्यक्रम सोच डालें। इसमें नियमित समय होना चाहिए। अगले दिन की दिनचर्या पर भी सोच डालिए। इसके पश्चात आपको क्या चाहिए? कैसे प्राप्त हो सकता है? यह विचार होना चाहिए। यह वहीं कि आप करोड़पति होने की सोचते रहें ऐसी भावनाएं जो होने योग्य हो, उन्हें सोचकर फिर मस्तिष्क से निकाल दें। इसके पश्चात् कोई दिव्य ज्योति हाथ में लिए हुए वात्य रूप में एक कंधा प्रकट होगी और आपको अनेक प्रकार के साधन

उपलब्ध कराएगी। अगर आपने लिप्सा, वासना या हीन दृष्टि के विचार रखे तो वह लुप्त हो जाएगी। गायत्री केवल बुद्धि के सब विचारों सहित होने पर ही दर्शन देगी। आपने विचार बदले तो वह चली जायेंगी। मन उस पर एकाग्रचित करें। यह अभ्यास जारी रहना चाहिए। अगर पहले अभ्यास करते समय दर्शन नहीं हों तो कुछ दिनों के बाद वह आरम्भ हो सकते हैं। गायत्री को देखने से पहले उसका भयंकर रूप दिखाई दे तो आंखें धो लेनी चाहिए। इससे स्पष्ट होता है कि आपके अतीत की भावना के अपराध कुछ कष्टदायक हैं। आपकी मनोवृति आप हो को स्पष्ट नहीं है।

तीन दिन आपने क्या कार्य किया और जो बच गए हैं, उसे किस प्रकार अगले पाँच दिन आप क्या करेंगे ? ऐसी अवस्था में जब आप अपने कार्य को ठीक प्रकार से बाँट लेंगे, तो आपको ज्योति का आभास होगा। उसके आधार पर ही मोह निंद्रा आरंभ हो सकती है। अगर आप उसके स्वरूप की ओर टकटकी लगाये देखते रहे तो कार्यक्रमों के साधन आने लगेंगे। उन साधनों को एक तरफ रख कर मस्तिष्क को केवल विचारहीन बनाकर उस अलौकिक मूर्ति की ओर देखते रहना ही साधन है। इसमें कुछ बाधायें हो सकती है। अगर किसी प्रकार की ध्वनि चल रही हो तो वह स्थिर नहीं रहने देगी। अपनी मानसिक स्थिति इसप्रकार बनायें कि आपको कोई आवाज सुनाई न दें। ऐसे समय में चंचल होना सम्भव है। इस साधना से पूर्व २१ दिन अभ्यास करना आवश्यक है। साधक के नेत्रों में चुम्बक शक्ति उत्पन्न होगी। इस प्रकार इस शक्ति को प्राप्त कर इच्छाओं की पूर्ति के लिए भी बहुत प्रयोग करने चाहिए।

आप गलती भूल को लने की चेष्टा कर अपने अधिकार को

प्राप्त करने का लाभ उठाना चाहते हैं तो अगर आपकी प्रेरणा जितनी सत्य होगी आपको चुम्बकीय दृष्टि प्राप्त होगी। मोह-निद्रा से थकावट कम होती है और आकर्षण बढ़ता है और मोह-निद्रा का आनन्द लेने की मन बार-बार इच्छा करता है। यही कारण है कि साधक के मन और शरीर की अभिव्यक्तियाँ शरीर में भी विचरण करती है और कई बार उसके अनुरूप भी हो जाती हैं।

संसार में प्रत्येक अपनी अपनी कर्मगति के अनुसार किसी न किसी स्थान पर जन्म लेता है और वहाँ का आर्थिक, भौगोलिक और बौद्धिक स्थितियों द्वारा प्रभावित होता है। जैसे विचारधार मन और भावनाओं को घर लेती हैं। वह उन्हीं के द्वारा प्रेरित होकर उस स्थिति के अनुसार कार्य करता है। कुछ लोगों में पिछले जन्म के पुण्यों द्वारा ही साधना की भावनाएं उत्पन्न होती हैं। वह अपनी कर्मगति को सुधारने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। आत्मविश्वास, निष्ठा, प्रयत्नशील और दृढ़ संकल्प रहता है। थोड़ा सा डगमगाने पर साधक अपनी स्थिति को डावाँडोल कर सकता है। साधना का श्रेय तभी प्राप्त होता है, जब मर्मेन्द्रियां और ज्ञानेन्द्रियां दो के संयोग से मानव की भावनायें साधन में तटस्थ हों। किसी साधना सम्पन्न गुरु का होना आवश्यक है। उसके द्वारा पहले अभ्यास करा जाए।

जिस किसी को भी वे गुरु मानते हों, पहले उन्हें गुरु धारण करें। गुरु के आशीर्वाद के बिना साधना में सफलता का होना संदिग्ध है। किसी-न-किसी को गुरु मानना आवश्यक है। हमारे अवचेतन मन को सहारा देकर तटस्थ बनाता है। इसलिए किसी भी विद्या में गुरु का होना आवश्यक है। गुरु वह होना चाहिए जिसके प्रति पूर्ण विश्वास, दृढ़, श्रद्धा और किसी भी रूप में

कमजोरी अथवा बुराई की ओर ध्यान देने में तत्पर न हों। इसलिए किसी को अपना गुरु मानकर अपने लक्ष्य बना लें, तो उत्तम होगा। गीता में भगवान ने कहा है—

(यानि-यानि हन्वधानि कर्माणि तानि तानि लया उपास्याणि नोइतराणि) अर्थात जो-जो मेरे अच्छे कर्म हैं तुम उन्हीं को धारण करो। वास्तव में यह आत्मिक शक्ति आपकी ही शक्ति है, जो शरीर से बाहर निकलती है और साधना प्रक्रियाओं द्वारा आप उसके दर्शन किसी भी स्वरूप में कर सकते हैं। आत्मस्वरूप का ज्ञान होना आवश्यक है चाहे वह आत्म साक्षात्कार स्वय के प्रतिबिम्ब को गुरु व देवप्रतिमा के रूप में देखता हो। आत्मदर्शन के लिए अभ्यास, दृढ़ संकल्प और आत्मविश्वास भी आवश्यक है। इसी कारण गायत्री देवी की मूर्ति या मंत्र की स्थापना आवश्यक है।

देखा जाय तो यह मानव शरीर पाँच तत्वों का बना है। पांचों तत्वों की सब शक्तियां यानी पृथ्वी पर उत्पन्न होने वाले सब रसायन, उसके शरीर में किसी-किसी रूप में रहते हैं। हमारे शरीर में सभी धातुएँ और खनिज पदार्थ किसी न किसी रूप में अवश्य मिलेंगे। बुद्धि और मस्तिष्क में सूर्य एवं चंद्र शक्ति और आकाश में विचरण करने वाले सभी ग्रहों का हमारे शरीर मन, कर्म और भाव से पूर्ण संबंध है। सूर्य की किरणों से उत्पन्न वनस्पतियों का हमारे रक्तचाप पर पूर्ण प्रभाव है। जब स्मरण शक्ति में साधक की एकाग्रता से विद्युत उत्पन्न करते हैं। तो किसी भी चेतना और अवचेतन मन को आकर्षित कर लेते हैं। भौगोलिक स्थिति, भावनात्मक वृत्ति, सभी परिवर्तनशील रहती हैं। "पृथ्वी, आकाश, जल, वायु और अग्नि यह पांचों तत्व प्रत्येक शरीर में विद्यमान है। मान-

वीय भावनायें भी इन तत्वों के अनुरूप ही प्रेरित होती हैं। इससे स्पष्ट है कि शरीर में विद्युत शक्ति की अग्नि पूर्ण मात्रा में तब तक बनी रहती है, जब तक रक्त सचालन और मांस-पेशियों, धमनियों, नाड़ियों आदि का कार्य सुचारू रूप से चलता है। जब ये शक्ति क्षीण होने लगती है, तब धीरे-धीरे अंग ढीले हो जाते हैं। इस ऊर्जा की उत्पत्ति कम होने लगती है। फलतः बुढ़ापे में मांसपेशियाँ शिथिल हो जाती है। चेतन मन और अवचेतन मन इसी शारीरिक पिंजरे का पक्षी है।

वैसे तो मन कार्य करता है। अपनी शक्ति उस कार्य में लगाता है। इस मनोवृत्ति को कुछ लोग अहं भाव से प्रयोग में लाते हैं, तो जैसा वह कहते हैं, मैंने किया, मैं यह कर सकता हूँ, मैं वह कर सकता हूं इत्यादि, स्वाभिमान शक्ति को लेकर चलते हैं। प्रायः देखा गया है कि उनमें दृढ़ निश्चय वाले ही सफल होते हैं और जिनके निश्चय में कमजोरी होती है, वह पिछड़ जाते हैं। इसी कारण गायत्री साधना उसी शक्ति को उभारने के लिए एक विधिवत कार्य करता है। वह निश्चय आत्मिक शक्ति को प्राप्त कर अपनी धारण के बल से संसार की शक्तियों को खींच सकता है। इसके लिए साधना बहुत उपयोगी है। सतत् साधना के बिना कोई सिद्धि नहीं प्राप्त हो सकती है।

सबसे पहले साधना के लिए आत्मविश्वास, दृढ़ निश्चय और कठोर परिश्रम कर सफलता के लक्ष्य पर पहुंचने की भावना होनी चाहिए। इसके साथ-साथ ज्ञान भी आवश्यक है। ज्ञान द्वारा ही हम त्याज्य और अत्याज्य के निर्णय को लेकर आगे बढ़ सकते हैं।

अपनी साधना में दृढ़ता के साथ अभ्यास कर चेतन मन

द्वारा जब हम भीतर की शक्ति पा लेते हैं तो उसे अध्यात्म में 'ऋण' कहते हैं। साधना ही वह मूल शक्ति है, जो शारीरिक, मानसिक और भौतिक शक्तियों का प्रसार करती है। इसमें किसी प्रकार की हानि को आशंका नहीं। अगर नियमों का पालन विधिवत् हो तो यह इतनी सरल है कि थोड़ी चेष्टा करने पर ही आप सफल हो सकते हैं और आप नयी दिशा प्राप्त कर सकते हैं। आत्म-शक्ति को प्राप्त करने के पश्चात उसका सदुपयोग भी आवश्यक है। इसलिए साधना केवल मात्र शुद्ध भावना से किसी के प्रति द्वेष न रखकर ही प्राप्त हो सकती है। साधना योग के बिना प्राप्त नहीं हो सकती है। साधना से आत्म-विश्वास, और सात्विक-भावनाएं जन्म लेती हैं।

आपकी साधना में किसी प्रकार की त्रुटि नहीं होनी चाहिए। किसी भी प्रकार की मानसिक दुर्बलता का संशय हो तो पहले आप अपने निश्चय को बलवान करें। स्वयं को संकल्प द्वारा अनुशासन में रखकर ही लाभ प्राप्त कर सकते हैं। मन और वचन से कहा गया शब्द अपना पूर्ण प्रभाव रखता है। अगर आपने पहले किसी बात को सोच लिया कि ऐसा नहीं हो सकता, तो ऐसा नहीं होगा पर भावना तटस्थ रहनी चाहिए कि ऐसा होकर रहेगा। इससे प्रभुत्व मिलेगा एवं समृद्धि प्राप्त होगी, भावना 'सर्वजन सुखाय: सर्वजन हिताय' होनी चाहिए। शब्दों की ध्वनि भावना की प्रेरणा-शक्ति को इतना बलवान कर देती है कि विजय प्राप्त हो जाती है। ध्वनि के गुण मन में विद्यमान हैं। ध्वनि के आगे नृत्य करना, ऋषि मुनियों का ध्वनि के आगे झूमना, इसी प्रकार की ध्वनि और संगीत में रोग का निदान संभव है। अनावश्यक ध्वनि से बुद्धि पर प्रभाव यहाँ तक कि ध्वनि के लिए तो ऐसा भी कहते हैं कि अगर कोई

मुझे प्रेम से चाहे तो मेरी गर्दन भी कटवा सकता है परन्तु मैं किसी की अकड़ के आगे झुकने वाला नहीं हूं। इससे सिद्ध होता है कि कोई भी मनुष्य ध्वनि के आगे वशीभूत होने को तैयार है, पर वह ध्वनि में सद्भावना, नम्रता और प्रेम चाहता है। इसलिए मंत्र में ध्वनि का विशेष आकर्षण है। ध्वनि जिस प्रकार सम्मिलित होती है। उसका मात्र साधन एक विद्युत का यंत्र है। मानव शरीर में भी अधिक विद्युत है। मंत्र के पूर्व तत्व भी मानव शरीर में विद्यमान है। केवल मात्र एकाग्रचित होकर हम अपनी मनोभावनाएं किसी स्थान अथवा किसी सीमा तक पहुंचा सकते हैं।

किसी भी मंत्रोच्चारण से मनुष्य में कम्पन होता है। जो ध्यान के रूप में संचलित होता है, जैसे अच्छी मुद्रा प्राकृतिक सौन्दर्य देखने पर मनुष्य प्रसन्न रहता है और उसकी प्रसन्नता से उसका नाड़ी संस्थान शान्ति, सुख, ऐश्वर्य का अनुभव करता है। इसी प्रकार भयंकर वस्तु देखने से भय का संचार होता है और यर्थात्मक वस्तुओं को देखने से रसों की उत्पत्ति होती है। उसी प्रकार सौन्दर्य भय आदि रसों का संचार मनुष्य की नाड़ियो में भी रहता है। भावना शक्ति अनुसार मनोवृत्ति और मनोवृति के अनुसार ही रक्त धमनियां संचालित होती हैं। ध्यान को लगाने के लिए ऋषि-मुनियों ने शास्त्रों की रक्त धमनियां संचालित होती है। ध्यान को लगाने के लिए ऋषि-मुनियों ने शास्त्रों की रचनाएं कर डालीं है, ध्यान को आधीन करना मानव प्रकृति के लिए कठिन है। मनुष्य की बुद्धि में तीन प्रकार की क्रियाएं निरन्तर कार्य करती हैं। चेतन, मन, इच्छा और भावना तथा अवचेतन मन। मनुष्य कई बातों को काल्पनिक कहकर छोड़ देने की चेष्टा रखता है। उसे पता है। कि जिसे

वह काल्पनिक कहने की चेष्टा कर रहा है, वास्तव में वह उससे पीछे हटना चाहता है। अगर गम्भीरता से देखा जाए तो कोई कल्पना सत्यता के आधार के बिना नहीं हो सकती। पृथ्वी के आकर्षण में विचरने वाले जितने भी वायु तत्वों में निहित सब ध्वनियां हमारी बुद्धि का संचालन करती हैं। वह ध्वनियां आत्मा की तरह अमर हैं ही।

भारतीय संस्कृति में प्रत्येक शक्ति को कोई स्वरूप अवश्य दिया गया है। जिससे हमारी भावनाएं प्रेरित होती हैं। जैसे जल की प्राप्ति के लिए वरुण को एक रूप दिया है। गृह नक्षत्रों को भी रूप में देखकर भावनात्मक बल से पूजा। इसी प्रकार देव शक्तियों के स्वरूप को भी शक्तियों में बांटा गया। जैसे ब्रह्मा ज्ञान के, विष्णु पालन-पोषण के स्वरूप हैं, शिव पुर्नजन्म एवं मृत्यु के स्वरूप हैं और कलात्मकता के लिए विश्वकर्मा, धन के लिए लक्ष्मी, तांत्रिक गुण के लिए काल भैरव। इसी प्रकार जल, अग्नि, वायु, पृथ्वी, समुद्र आदि प्रत्येक प्राकृतिक शक्ति को हमने प्राप्त करने के लिए एक मानवीय शरीर के रूप में देखना चाहा है ताकि उस स्वरूप के अनुसार हमारे भीतर वह शक्तियां उत्पन्न हो सकें। तात्पर्य है कि किसी स्वरूप को धारण-शक्ति में लाना आवश्यक है, यही धारण या सिद्धि का प्रादुर्भाव होता है।

जब हम किसी स्वरूप की परिभाषा को जान लेते हैं, तो उसके नाम के अनुसार उसके गुण का भी अधिकार हमारी बुद्धि पर छा जाता है। फिर जब हम उसे देखते हैं तो ध्यान पटल पर उसकी एक मूर्ति आती है। और उसका फल प्राप्त होता है।

अवचेतन मन का स्थिति मात्र से चेतन मन प्रभावित होकर

अवचेतन मन को जीवन का संचालन देना है और स्वयं मनुष्य सोता हुआ स्वप्न के प्रभाव से संचारित होता है, यद्यपि स्वप्न को लोग भ्रमात्मक कहते हैं, पर उसका हमारे जीवन से अभिन्न सम्बन्ध है। ध्यान-ज्ञान में हम अपनी चेतना शक्ति के द्वारा दूसरे माध्यम की चेतना-शक्ति को चाहे निद्रा में लाकर उसके अवचेतन मन से अपने चेतन मन के निर्देशों का पालन करवाने का चमत्कार मानते हैं। परन्तु इसी में वह निहित हैं।

योग के विषय में गीता में कहा गया है। 'योग ऐश्वर्य आसक्तानां' योग और ऐश्वर्य में आसक्त जिनकी बुद्धि कर्म-कांड तथा प्रभुत्व चित्त लुप्ति के कारण अन्तःकरण अनेक व्यसायों में फंसा है, उनकी बुद्धि में समाधि की स्थिति उत्पन्न नहीं होती है। साधना में समाधिस्थ का होना आवश्यक है। किसी क्षेत्र में आप कार्य करते हैं तो किसी न किसी समाधि का आसरा लेना पड़ता है। साधना ज्ञान में यह हमें साधना के अभ्यास द्वारा ही सरल से सरल रूप में प्राप्त हो सकती है, जिससे कि आप अपने शरीर में स्फूर्ति लाकर किसी सम्मोहित भाव्यक्त द्वारा अपनी सफलता के साधन जुटा सकते हैं। समाधि के बाद योग आवश्यक है। योग के लिए आपको पहले शारीरिक अवस्था को सही रूप में लाना आवश्यक है। यही योग साधना का मार्ग है और रूप साधना से समाधि के क्षेत्र में आप उतर सकते हैं।

शारीरिक अग्नि समाधि द्वारा ही विद्युत प्रकाश में होकर अवचेतन मन के लिए सब प्रकार के मार्ग सुलझाए जाते हैं। समाधि के प्रकार बताने से पहले शारीरिक सुधार के लिए प्राणायाम की आवश्यकता अवश्य होती है। अचेतन मन को अवचेतन मन के साथ जोड़ने के लिए प्राणायाम के तीनों भेद

पूरी तरह से सिद्ध कर लेने चाहिए। हम बाह्य रेचक, आभ्यन्तर पूरक और स्तम्भवृत्ति में कुम्भक। प्राणायाम की यह तीन स्थितियाँ हैं –

प्राणायाम—आभ्यन्तर पूरक से यह अभिप्राय: है कि १० सेकिण्ड तक धीमी गति से साँस ली जाए, इसके पश्चात कुम्भक द्वारा ५० सैकिण्ड तक सांस को रोककर रेचक द्वार १५ सैकिण्ड तक सांस को धीरे-धीरे छोड़ा जाए। तब ८ सैकिण्ड का विश्राम लेकर साधारण साधक को ये तीनों क्रियायें कम से कम तीन-तीन बार अवश्य कर लेनी चाहिए। प्रत्येक क्रिया ७५ सैकिण्ड, विश्राम ८ सैकिण्ड लगभग ८२ सैकिण्ड का हो तो तीन बार में कुल ४ मिनट १० सैकिण्ड या अधिक से अधिक ५ मिनट का उपरोक्त प्राणायाम प्रतिदिन साधना से पूर्व आवश्यक है। अगर कुम्भक और रेचक ५ बार पाने ७ मिनट करें तो वह अधिक लाभदायक है।

आरम्भ से पूर्व यह प्राणायाम करने से मनोबल प्राणायाम द्वारा सिंचित होकर स्वच्छ एवं नवीन हो जाता है। ७ मिनट की इस प्रक्रिया से सफलता के साधन रुचिकर होने लगते हैं। उपर्युक्त संदर्भों में दृढ़ निश्चय आत्मविश्वास, परिस्तभ ध्वनि, सर्वज्ञान, ध्यान और समाधि स्थिति का निवेदन है। उपरोक्त तत्वों का पूर्ण प्रभाव कर्ता के ध्यान में निरन्तर रहना आवश्यक है, जिससे प्रत्येक ध्वनि ध्यानगम्य हो सके। किसी गीत का चुनकर उसका हृदय आँखों के सामने नृत्य करने लगता है। और ध्वनि में निहित शब्द अर्थ शक्ति द्वारा भावनाओं को बचाने लगती है, उसी तरह पूरक कुम्भक और रेचक साधना शक्ति को लाभदायक बना देते हैं।

एकान्त मन—जैसे अभ्यास के आरम्भ में अपने गुप्त भेद

किसी को न बतलाना, दूसरे की बात को पूर्णतया समझना और कम बोलना, दूसरे के भेद को लेना अपने भेद को प्रकट न करना, उपेक्षा और लोभ को भीतर ही रखना, अधिक अधीर न होना, दूसरे के विचार अधिक सुनना अच्छी इच्छा को कम प्रकट करना, अपने गुणों के वर्णन में अपनी इच्छाएं न प्रकट कर दूसरे गुणों के वर्णन में उनकी कमजोरियों और इच्छाओं का ज्ञान प्राप्त करना, नाकारात्मक ध्वनि से बचना और अपनी धारणा शक्ति को गुप्त रख के उत्तम स्वरूप से मनन करना।

तरंगित शक्ति—मन के स्वाभिमान को छोड़कर क्रोध त्याग कर, शान्त वातावरण को ध्यान में रखना और भीतर से सशक्त होते हुए अपनी धारणा एवं इच्छा शक्ति को प्रकट करना, अधिक इच्छा शक्ति को कम प्रकट करना, अधिक इच्छा और लालच को त्यागकर, प्रायः लोभ और मोह से बचकर अहंकार और लिप्सा से बचने की चेष्टा करना।

एकाग्रचित—अपने एकाग्र मन को सच्ची लगन के साथ आत्मस्वरूप में भगवान मानकर उसके तटस्थता से भुवों के मध्य में छपी शक्ति द्वारा संसार को देखने की चेष्टा करें। मनोभाव तरंगों को रोकना भी एकाग्रचित का एक रूप है। मन में किसी कार्य को करने की इच्छा या किसी भोग को ग्रहण करने की भावना इस प्रकार की जानी चाहिए। यही है एकाग्रचित द्वारा एवं सृष्टि के आनन्द का स्वरूप है। इसका अर्थ भावना में प्रबलता न होकर इच्छा भोग को पूर्ण करने मात्र से ही लिप्त ही थी।

निर्देशन शक्ति—निर्देशन शक्ति में भी विशेष प्रकार की भाषा, शब्द एवं अर्थ का होना आवश्यक है। शब्द अर्थ स्वरूप

में जरा भी कटुता विरोध या अज्ञान रहेगा तो इसका प्रयोग विफल होना स्वाभाविक है।

आज्ञा-शक्ति में भावनात्मक प्रेरणा का होना आवश्यक है अगर उसमें प्रेरणा नहीं तो आज्ञा क्षणिक प्रभावक रखती है और प्रेरणा देने के लिए प्रयोक्ता के मन पर प्रबल प्रभाव के लिए कोमल अर्थ भेदी शब्दों में मृदु वाणी का होना आवश्यक है पर यह भी ठीक है कि किसी व्यक्ति विशेष के बारे में आपकी धारणा पहले ही दूषित होती है तो उसका स्पष्टीकरण न मिलने के कारण आप अपने आपको शक्तिशाली मानकर छा जाने की चेष्टा करते हैं। इसलिए सन्तुलन की आवश्यकता है कि निर्देश देते समय आप यह सोच लें कि किन शब्दों से प्रोत्साहित होकर माध्यम आपके अधीन चलता रहेगा।

एकाग्र दृष्टि—अपनी दृष्टि में वाणी के आकर्षण के साथ-साथ आकर्षण शक्ति को भी रखें। आंखों की तरफ आकर्षित होकर देखता ही रहे और आपकी विद्युत शक्ति उसके चेतन मन पर काबू पा लें। सही साधना, त्राटक का विषय है।

विश्वास किया जाता है कि पांच अक्षरों के मन्त्र से अर्थात् "ओम नमः शिवाय"—इस मंत्र के द्वारा जो कोई पत्र-पुष्प और जल का समर्पण भगवान गायत्री के लिए किया करता है, उसके एक बार करने से ही उसका अनन्त फल हुआ करता है। गायत्री के मुखारबिन्द से सात करोड़ मंत्र विनिर्गत हुए थे किंतु वे सभी मंत्र मिलकर भी इस पंचाक्षरी मंत्र की सोलहवीं कला के ही समान भी नहीं होते हैं। विधान दीक्षित हो अथवा अदीक्षित हो कैसा भी क्यों न हो जो प्राणी इस पंचाक्षरी मंत्र का जाप किया करता है वह अवश्य ही गायत्री का अनुचर हो जाया करता है। भ्रूण हत्या करके भी तथा बहुत से अन्य पापी

को भी करके जो इस पांच अक्षरों वाले मंत्र को जपता है उस पाप से तुरन्त ही मुक्त हो जाया करता है, उसमें लेशमात्र भी संदेह नहीं है। इन तीनों भुवनों में इन पांच अक्षरों वाले मंत्र से अधिक कुछ भी श्रेय नहीं है। इस प्रकार समझकर ही विद्वान को इस परम शुभ पंचाक्षरी विद्या का जाप करना चाहिये। इसे पंचाक्षरी मंत्र के द्वारा बिल्व के पत्रों से जो गायत्री का समर्थन किया करता है और परम श्रद्धा की भावना से जो करता है वह ईश्वरीय पद को प्राप्त किया करता है। बिल्व पत्र की बड़ी महिमा है, क्योंकि यह भगवान् शिव का परम प्रिय वृक्ष है। इसके दर्श से—इसके स्पर्श करने से और इसकी वन्दना करने से, एक अहोरात्र का किया हुआ पाप नष्ट हो जाया करता है।

जो मनुष्य अन्तकाल में बिल्व वृक्ष के मूल की मृत्तला कसे अपने समस्त अंगों का विलेपन किया करता है। वह सुत होकर परागति को प्राप्त किया करता है। बिल्व वृक्ष का समाश्रय करके जो द्वादश दिन तक भोजन नहीं किया करता। वह भूणहा पाप से मुक्त हो जाया करता है। बिल्व वृक्ष का समाश्रय ग्रहण कर जो तीन रात्रि पर्यन्त शुचि होकर उपवास किया करता है और एक लक्ष गायत्री के नाम का जाप किया करता है वह भूण हत्या के पाप को नष्ट कर दिया करता है। बिल्व-पत्रों से तथा उसके खण्डों से इन्दुशेखर भगवान शिव का एवं देवी गायत्री का माघ मास को कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी में पूजन करना चाहिए। भक्ति की भावना से बिल्व पत्रों के द्वारा मौन होकर रात्रि में नाम का जप करना चाहिए। वह समस्त पापों से निर्मक्त होकर अन्तकाल में परमपद,को प्राप्त हो जाया करता है। शुष्क, पर्यषित बिल्व के पत्रों से भी यदि गायत्री के

साथ का पूजन किया करता है तो मनुष्य सभी पातकों में मुक्त हो जाया करता है। पुष्प फलों से युक्त अर्घ्य का जो गायत्री के लिए निवेदित किया करता है। वह मनुष्य डेढ़ अयुतयुगों तक स्वर्ग लोक में निवास किया करता है।

जब, दूध कूआं के अग्रभाग, घी, दही, चावल, तिल सरसों इन सबका अर्घ्य आठ अंगों वाला होता है—ऐसा कहा गया है।

जो मनुष्य सुवर्ण की पलकोटि को किसी वेदों के पारगामी को देता है, गायत्री के लिए एक रत्ती मात्र ही अथवा अधिक दिया करता है, इस कारण से पत्र, फल, पुष्प और जल से ही देवी गायत्री का पूजन करना चाहिए। इसका अनन्त फल बतलाया गया है किंतु इसमें भी एकमात्र भक्ति ही कारण होता है। चन्दन के लेप से सुगन्धित पदार्थ के लेप से द्विगुना पुण्य हुआ करता है। चन्दन से भी आठ गुना अधिक पुण्य अगरू के लेप से हुआ करता हैं ऐसा ही जानना चाहिए। अगरु होता है उसके लेप से विशेष रूप से दुगुना फल हुआ करता है उससे भी सौ गुना पुण्य फल कुंकुम का होता है। चन्दन, अगरु, कपूर, नाभिरोच, कुमकुम का होता है। चन्दन, अगरु, कर्पूर, नाभि रो, कुमकुम इन सबके द्वारा गायत्री का विलेपन कर मनुष्य गाणपत्य पद की प्राप्ति किया करता है।

तालवृन्त से संजीवन कर लेप करे तो ऐसा करने से मनुष्य दस सहस्त्र वर्ष पर्यन्त स्वर्ग लोक में प्रतिष्ठा प्राप्त किया करता है। वह मनुष्य सौ करोड़ वर्ष तक जोकि दिव्य वर्ष होते हैं गायत्री का भक्तमणि और रत्नों से विभूषित चमर उन पर डुलाया करता है जिसका दंड स्वर्ग रौप्य आदि का हो उसका जो पुण्य-फल होता है, उसे भी सुन लो, चामरों से समासक्त

हाथों वाली दिव्य स्त्रियों के द्वारा परिवारित होता हुआ गुणों के साथ परम श्रेष्ठ विमान पर स्मारुढ़ होकर वह मनुष्य अंत में भगवान के पद को प्राप्त किया करता है। जंगलों में समुत्पन्न पुष्पों पत्रों से जो पर्वतों में समुत्पन्न हुए हों और वे अपर्युषित निश्छिद्र अरक्त और जन्तुओं से वर्जित होने चाहिए अथवा आत्मारामोद्भव हों अर्थात अपने बाग से पैदा हुए हों, ऐसे पुष्पों से गायत्री का पूजन करना चाहिए। पुष्प जाति विशेष अधिक पुण्य होता है। तप शील और गुणाढय तथा वेद वेदाँगों का ज्ञान ब्राह्मण के लिए दश सुबर्ण फल देकर वही पुण्य प्राप्त होता है।

चंपक और जलज के बिना कलियों से कभी भूलकर भी गायत्री की अर्चना नहीं करनी चाहिए। जलज, उत्पल और चम्पकों में कभी पर्यूषित के होने का दोष नहीं हुआ करता है। यदि पुष्पों का लाभ न हो तो ऐसी दशा में पत्रों को ही भगवान को निवेदन कर दे। फलों के लाभ न होने पर भी तृष्णा, गुल्म और औषधियों से समर्थन करे और औषधों के भी अभाव में शक्ति से ही उनको पूजित किया करे। अखण्ड बिल्व पत्रों से एक बार ही पूजन करना चाहिए। वह आदमी सब पापों से विशेष रूप से निर्युक्त होकर प्रतिष्ठा प्राप्त किया करता है। एक लाख गौओं के दान का फल प्राप्त कर स्वर्ग लोक में ही प्रतिष्ठित हुआ करता है। जो कोई मनुष्य भक्ति बृहती के पुष्पों के द्वारा एक बार गायत्री की पूजा करता है वह अयुत गौओं का दान फल प्राप्त करके उनकी सन्निधि में प्राप्त हुआ करता है। जो मनुष्य, मल्लिका, उत्पल, नाग, पुन्नाग, चम्पक अशोक, श्वेत दन्दार, शमी, तगर, केशर, बणिकाट, बक्र, करवीर, अर्क, कुश, अपमार्ग, कुमुद, गदम्ब, कुरव इन पुष्पों से जो भी यथा

समय प्राप्त होवे उससे पूजन किया करता है, वह सब कामनाओं को पूर्ण करने वाले और करोड़ सूर्यों के समान दीप्यमान विमानों के द्वारा जोकि पुष्पों की मालाओं से परिक्षिप्त होते हैं तथा गीत वादित्रों की ध्वनि से परिपूर्ण होते हैं एवं तंत्रों के मधुर नादों से युक्त होते हैं और स्वच्छन्द गमन करने वाले हैं। रुद्रों की कन्याओं से समाकीर्ण और चारों ओर से सुशोभित विमान होते हैं—उनके ऊपर चमर ढुलाये जाया करते हैं ऐसे विमानों से वे गायत्री लोक को गमन किया करते हैं।

गायत्री महत्व

स्कंदपुराण में कहा गया है, गायत्रयेव परो विष्णुर्गायत्रयेव परः शिवः। गायत्रयेव परो ब्रह्मा गायत्रयेवत्रयी ततः॥ "गायत्री ही विष्णु है, गायत्री ही शिव है, और गायत्री ही ब्रह्मा है। अतः गायत्री से वेदों की उत्पत्ति हुयी है। वेद और पुराणों में अनेक उपासनाओं का वर्णन मिलता है पर उन सभी उपासना को ही विशेष महत्व दिया गया है। गायत्री साधना "दैनिक" कही जाती है। गायत्री मंत्र "वैदिक मंत्र" है। ब्रह्मा स्वरूपी वेदों की मां होने के कारण इसे "ब्रह्म गायत्री" भी कहते हैं। भगवद्-गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है—गायत्री छन्दसामहम् अर्थात मैं वेदों में गायत्री हूँ।

नित्य, नैमित्तिक और काम्य कर्म की सिद्धि के लिए गायत्री मंत्र से बढ़कर और कोई मंत्र नहीं है। सभी वर्ण के लिए

गायत्री ही परमगति है। अन्य कर्मों के करने में समर्थ होने पर भी गायत्री से परमगति को प्राप्त किया जा सकता है। भारत के जीवन में "गायत्री" का महत्व सर्वोपरि है। यह गूढ़ और व्यापक अर्थ रखने वाला मंत्र है। सर्वाधिक चर्चित मंत्र वाक्य है।

गायत्री उपासक के लिए यह आवश्यक है कि वह इसको पूर्णरूप से समझ लें। जब तक इसके प्रत्येक कोण को समझ न लिया जाए, तब तक उसमें सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती है। अतएव प्रत्येक पहलू को समझ लेना आवश्यक है। सबसे पहले "गायत्री" शब्द का अर्थ जान लेना आवश्यक है।

"गै शब्दे" इस धातु से "शतृ" प्रत्यय करने पर "गायत्र" शब्द बनता है। तब "त्रैङ पालने" धातु से संबंध जोड़ने पर स्त्री प्रत्ययान्त "गायत्री" शब्द बनता है। वेदों में गायत्री शब्द का अर्थ इस प्रकार दिया गया है—

सा हैषा गयांस्तत्रे। प्राणा वै गयास्तत्प्राणांस्तत्रे तद् गयांस्तत्रे तस्माद् गायत्री नाम।'

गायत्री ने प्राणों की रक्षा की थी। इसी कारण इसका नाम गायत्री पड़ा। बृहदारण्यकोपनिषद् में भी ठीक इसी प्रकार गायत्री शब्द का निर्वचन किया गया है।

"गायत्री गायतेः स्तुतिकर्मणः।"

"द्विज द्वारा करने का विधान परब्रह्मा परमात्मा की स्तुति है, वह 'गायत्री' कहलाती है।

जप करने वाले की रक्षा करने के कारण इसका नाम "गायत्री" कहा गया है गायत्री मंत्र का पूरा रूप इस प्रकार है—

"ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुरवरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ।"

गायत्री परब्रह्मा की सत्विक शक्ति बतलायी गयी है, जिस शक्ति को ब्रह्मा ने तपस्या के द्वारा प्राप्त किया वह सृष्टि रचने में समर्थ हुए थे। गायत्री-मंत्र के तीन भाग हैं, जैसा कि इसके विनियोग में लिखा हुआ है। पहला ओंकार दूसरा भूर्भुवः स्वः ये तीन व्याहृतियां और तीसरा गायत्री मंत्र है।

गायत्री दो प्रकार की है—लौकिक और वैदिक। लौकिक गायत्री में चार चरण हैं और वैदिक गायत्री में तीन। जिस प्रकार लौकिक गायत्री छंद के अक्षर वाले चार चरणों में २४ अक्षर होते हैं, उसी प्रकार वैदिक गायत्री छंद के आठ अक्षर वाले तीन चरणों में २४ अक्षर होते हैं। इन दोनों में यही भेद है।

वैदिक गायत्री में तीन चरणों के गायत्री का नाम "त्रिपदा" कहा गया है। बृहदारण्यकोपनिषद के अनुसार गायत्री त्रिपाद है। गायत्री मंत्र में लौकिक छन्द की तरह चार चारण न होते हुए भी वह त्रिपाद है और नाम "त्रिपदा" है। गायत्री मंत्र चतुर्विंशत्यक्षरात्मक और पदात्रय से विभूषित है। इसके प्रत्येक पाद में आठ अक्षर हैं। महर्षि कात्यायन कृत अनुक्रमणिका और ताण्डयमहाब्राह्मण के अनुसार वैदिक गायत्री छंद में आठ-आठ अक्षर के तीन चरण माने गये हैं इस नियम से अनेक वैदिक-मंत्र गायत्री कहला सकते हैं। चौबीस अक्षरों वाला गायत्री मंत्र ब्रह्मपरक है। इसको "ब्रह्मा गायत्री कहते हैं। यह गायत्री छंद में होने और सूर्य से संबंध के कारण सावित्री भी कही जाती है। वैदिक मत्रों में यह अत्यन्त श्रेष्ठ और शक्तिसम्पन्न है। गायत्री के प्रारम्भ में भूर्भुवः स्वः, जो तीन व्याहृतियां हैं, उनका

महत्व वेदों में वर्णित है। गायत्री मंत्र में भूर्भुवः स्वः ये जो व्याहृतियां हैं, इनमें तीन देवा (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) तीन अग्नि (दक्षिणाग्नि, गार्हपत्याग्नि और आहवनीयाग्नि), तीन लोक (स्वर्ग मर्त्य और पाताल)—पृथिव्यन्तरिक्षं द्यौः (शतपथ-ब्राह्मण तीन प्रकृति। सात्विकी, राजसी और तामसी और तीन काल (भूत, भविष्य और वर्तमान) की भावना विद्यमान है, जो गायत्री मंत्र के उपासक की रक्षा करती है। गायत्री को वेदों की माता भी कहा गया है।

यथा च मधुपुष्पेभ्यो घृतं दुग्धाद्रसात्पयः।
एवं हि सर्ववेदानां गायत्रीसार उच्यते।

जिस प्रकार पुष्पों का सार मधु, दुग्ध का सार घी और रस का सार भीतरी शक्ति है, उसी प्रकार वेदों का सार गायत्री कहा जाता है। वेदों में जो सार है, वह गायत्री में विद्यमान है। गायत्री त्रिशक्तिस्वरुपिणी है। अतएव तीन काल की सन्ध्योपासना में गायत्री का तीन रूपों में ध्यान किया जाता है ब्रह्मरुप में गायत्री का, विष्णुरूप में सावित्री का और रूद्र रुप में सरस्वती का वही पूर्वाह्न में गायत्री, मध्याह्न में सावित्री, सांयकाल में सरस्वती और तीनों कालों में सन्ध्या नाम से शास्त्रों में बतलायी गयी है। प्रातःकाल में गायत्री रविमण्डल-मध्य-स्थित हैं। रक्तवर्णा हैं, दो भुजाएं हैं, रुद्राक्ष, सूत्र-कमण्डल धारण किये हैं, हंस पर सवार हैं। ब्रह्माणी कुमारी अवस्था से युक्त हैं और ऋग्वेद के द्वारा प्रतिपादित है। मध्यान्हकाल में सावित्री रविमण्डल-मध्यस्थिता हैं, कृष्ण-वर्णा हैं, चार भुजा-धारिणी है, त्रिनेत्रा है हाथों में शंख-चक्र-गदा-पदम लिए हैं। गरुड़ पर आरुढ़ हैं। युवती और वैष्णवी हैं। यजुर्वेद से उद्धत हैं। सायंकाल में गायत्री का नाम सरस्वती है, रविमण्डल-

मध्यस्थिता हैं, शुक्लवर्णा है चतुर्भुजा हैं। हाथों में त्रिशूल डमरु, पाश एवं पात्र लिए हैं। वृषभ पर आरुढ़ हैं, यह रुद्राणी वृद्धा हैं और सामवेद द्वारा वर्णित हैं।

गायत्री की उपासना के अनेक भेद हैं। इनमें गायत्री की जपात्मक, पाठात्मक और हवनात्मक उपासना विशेष है। गायत्री-मंत्र का जाप करना जपात्मक गायत्री के स्तोत्र आदि का पाठ करना पाठात्मक और गायत्री से हवन करना हवनात्मक कहीं जाती हैं। इनमें गायत्री की जपात्मक उपासना सर्वश्रेष्ठ बतलायी गयी है। भगवान कृष्ण ने 'यज्ञानां जप ज्ञोअस्मि' ऐसा कहा है, वह गायत्री-जप के सम्बन्ध में ही कहा है।

उपासना में "उप" और "आसना" ये दो शब्द हैं। "उप" का अर्थ समीप और "आसना" का अर्थ स्थित है।

प्रत्येक जाति और सम्प्रदाय में किसी न किसी रूप में उपासना प्रचलित है। उपासना के बिना कोई भी जाति या सम्प्रदाय की आत्मोन्नति संभव नहीं। इसलिए प्रत्येक सम्प्रदाय में उपासना की व्यवस्था की गयी है। उपासना के द्वारा साधक अपने ईष्ट से निकटता स्थापित करता है। उपासना के द्वार साधक शांति प्राप्त करता है।

वेदों में अनेक प्रकार की उपासनाओं का विवरण मिलता है किन्तु इन सभी में गायत्री की उपासना का महत्व माना गया है गायत्री की उपासना में 'गायत्री' मंत्र का जप किया जाता है मंत्र परमेश्वर की स्तुति है। अतः गायत्री मंत्र के जप से परब्रह्मा की स्तुति होती है। नित्य, नैमित्तिक और काम्य-कर्म की सिद्धि के लिए गायत्री से बढ़कर और कोई मंत्र नहीं है। गायत्री महातंत्र

है। यह सर्वसिद्धि दाता है। इसके प्रभाव से साधक जो चाहे, वह प्राप्त कर सकता है।

हमारे ऋषि गौतम, कणाद, वशिष्ठ, अंगिरा आदि ने गायत्री-मंत्र की उपासना द्वारा ही आलौकिक शक्ति प्राप्त की थी। वे गायत्री-मंत्र के प्रभाव से जिसको जो वरदान दे देते थे, वह अवश्य पूरा होता था। गायत्री के प्रभाव से ही महर्षि वशिष्ठ ने विश्वामित्र के समस्त शस्त्रास्त्रों को नष्ट कर विजय प्राप्त की थी। गायत्री के प्रभाव से ही राजर्षि विश्वामित्र ने "ब्रह्मर्षि" पद प्राप्त कर नूतन सृष्टि रचने की शक्ति प्राप्त कर ली थी। गायत्री के प्रभाव से ही दुर्वासा आदि ऋषियों ने अद्भुत पराक्रम प्राप्त किया था।

गायत्री के जप से साधक धार्मिक, आस्तिक और भक्त बन जाता है। गायत्री के जप से साधक की आत्म-शुद्धि होती है। आत्मशुद्धि होने से साधक आत्मज्ञान प्राप्त करता है। आत्मज्ञान प्राप्त होने पर साधक गायत्री का दर्शन कर मुक्त हो जाता है। गायत्री के जप से साधक की शक्ति बढ़ती है।

गायत्री मंत्र के जप से साधक शारीरिक रोगों और मानसिक चिन्ताओं से मुक्त रहता है। गायत्री के जप से साधक दीर्घजीवी होता है। गायत्री के जाप से साधक धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति करता है। गायत्री के जाप करने वाला साधक इहलोक और परलोक में सर्वमान्य और सर्वपूजित होता है।

गायत्री की उपासना से साधक परमात्मा का सान्निध्य प्राप्त करता है—

गायत्र्युपासनाकरणादात्मशक्तिस्तु लभ्यते।
प्राप्यते क्रमशोऽजस्य सामीप्यं परमात्मनः॥

गायत्री की उपासना करने से मनुष्य आत्मशक्ति की प्राप्ति करता है। पश्चात वह अजन्मा परमात्मा का सान्निध्य प्राप्त करता है।

गायत्री की उपासना से साधक सर्वंखल्विदं ब्रह्म "अहमात्मा ब्रह्मा ब्रह्मा वेदम् और एकमेवाद्वितीयम् आदि महावाक्यों का सच्चा अर्थ प्राप्त करता है।

गायत्री की उपासना से साधक में सद्बुद्धि, सद्विचार और सद्धर्म का जन्म होता है। गायत्री की उपासना से साधक जीवनपर्यन्त सर्वविध सुखों को भोगता है और मृत्यु के उपरान्त परम पद को प्राप्त करता है। गायत्री की उपासना से मनुष्य के समस्त पापों का उन्मूलन हो जाता है। गायत्री की उपासना से मनुष्य समस्त प्रकार के रोग, शोक, चिन्ता, आधि-व्याधि से मुक्त हो जाता है। गायत्री की उपासना से सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

गायत्री के उपासक पर भूत-प्रेत, पिशाच, यक्ष आदि का वश नहीं चलता है। गायत्री का उपासक ग्रहों की बाधाओं से भी दूर हो जाता है। गायत्री का उपासक दीर्घायु, लक्ष्मी, सत्पुत्र, सत्कीर्ति और सत्प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। गायत्री का उपासक भयंकर रोगों से ग्रस्त नहीं होता। अगर रोगग्रस्त होता भी है तो उसे डाक्टर की शरण नहीं लेनी पड़ती है। गायत्री की अद्भुत महिमा है। वह माता की तरह सम्मानित है।

गायत्री समस्त मानवों का कल्याण करने वाली, शोक को हरने वाली, जन्म-मरण के सन्ताप एवं दुःख तरंगों को हरने वाली, मोक्ष को देने वाली, चारों वेदों के मातृ रूप को धारण करने वाली, समस्त प्रकार के वरदानों को देने वाली, सभी

कष्टों को दूर करने वाली, पीड़ा का नाश करने वाली, प्राणियों में विद्यमान रहने वाली, और ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव के रूप को धारण करने वाली है।

गायत्री के अधिष्ठाता भगवान आदित्य हैं, जो अपने साधक को सद्‌बुद्धि प्रदान करते हैं। अतः भगवान सूर्य से धियो यो नः प्रचोदयात् के द्वारा सद्‌बुद्धि की प्राप्ति के लिए प्रार्थना की गयी है। मनुष्य में सद्‌बुद्धि का होना परमावश्यक है। सद्‌बुद्धि की प्राप्ति गायत्री की उपासना से ही होती है। जो साधक विधिपूर्वक गायत्री की नियमित उपासना करता है, उसे गायत्री माता सब कुछ प्रदान करती है। वह अपने जीवन में सफल रहता है।

अब मैं पाठकों की जानकारी और साधना हेतु कुछ प्रमुख गायत्रियों का विवरण प्रस्तुत कर रहा हूँ। आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है साधक गण भरपूर लाभ उठायेंगे।

गणेश गायत्री—अक्षर—तत्, देवता—गणेश जी।

प्रभाव—गणेश ऋद्धि-सिद्धि के देवता हैं। विघ्न-विनाशक हैं। सफलता के अधिष्ठाता हैं और शीघ्र प्रसन्न होने वाले हैं।

हर शुभ कार्य में सर्वप्रथम गणपति की पूजा करनी होती है। इससे वह कार्य निर्विघ्न पूर्ण होता है। वह बुद्धिमानों में श्रेष्ठ हैं और ज्ञान के भंडार है।

मंत्र...ॐ एक दंष्ट्राय विद्‌महे, वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो बुद्धि : प्रचोदयात्॥

नृसिंह गायत्री—अक्षर—स, देवतः नृसिंह।

प्रभाव—नृसिंह शक्ति सम्पन्नता के देवता हैं। प्रहलाद की

रक्षार्थ अवतरित होकर हिरण्यकश्यप का संहार किया था। पुरुषार्थ में सफलता देने में समर्थ है। वीरता, ओज, शौर्य पराक्रम, शक्ति, सामर्थ्य, जय, धैर्य प्रदान कर अधैर्य, कायरता, पराजय, निर्बलता का नाश करते हैं। जातक को आतंक से बचा कर रक्षा करते हैं।

मंत्र—ॐ अग्रनृसिंहाय विद्महे, वज्रनखाय धीमहि। तन्नो नृसिंह प्रचोदयात्॥

अग्नि गायत्री—अक्षर—भ, देवता···अग्नि।

प्रभाव—तन, मन, इन्द्रियों, प्राण सब में चैतन्यता प्रदान करती है। पापों का नाश करती है। यह शक्ति के अधिष्ठाता देव हैं। ऊष्णता, तेज, पराक्रम, प्रकाश, दक्षता प्रदान करते हैं।

मंत्र—ॐ महाज्वालाय विद्महे, अग्निदेवाय धीमहि। तन्नोअग्निः प्रचोदयात्।

इन्द्र गायत्री—अक्षर—ग, देवता—इन्द्र।

प्रभाव—शत्रु, से रक्षा, यह रक्षा के अधिकारी हैं। प्रशासनिक कार्यों में सफलता, रोगों का नाश कर उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करने में समर्थ हैं, चोर डाकू, शत्रु, भूत-प्रेतादि से रक्षा करते हैं।

मंत्र—ॐ सहत्र नेत्राय विद्महे, वज्रहस्ताय धीमहि। तन्नो इन्द्रः प्रचोदयात्।

सरस्वती गायत्री—अक्षर—सरस्वती।

प्रभाव—ज्ञान—विज्ञान, स्मरण शक्ति की अधिष्ठात्री हंसवाहिनी सरस्वती हैं। इनकी उपासना से ज्ञान, विज्ञान, विवेक, सोचने-समझने की क्षमता, सही निर्णय लेने की क्षमता, बुद्धिसत्ता, वैचारिकता प्रदान करती हैं।

मंत्र—ॐ सरस्वत्यै विद्महे, ब्रह्मपुत्र्यै धीमहि । तन्नो सरस्वतीः प्रचोदयात् ।

दुर्गा गायत्री—अक्षर—व, देवता—दुर्गा ।

प्रभाव—दुर्गा शत्रु-सहारक, दमन-शक्ति की अधिष्ठात्री है। विघ्न-बाधाओं पर विजय प्रदान करती है। दुष्टों का बल क्षीण करने वाली, शत्रुहन्ता तथा अहंकार, को चूर करने वाली है तथा साधकों को शक्ति प्रदान करती है।

मंत्र—ॐ गिरिजायै विद्महे, शिव प्रियायै धीमहि । तन्नो दुर्गाः प्रचोदयात् ।

हनुमान गायत्री—अक्षर—स्य, देवता—हनुमान।

प्रभाव—कर्म के प्रति निष्ठा, शक्ति, स्वामी शक्ति के अधिष्ठाता हैं। ये अपने साधकों को शक्ति, सामर्थ्य, निर्बल की रक्षा का गुण, भक्ति, आत्मविश्वास, निष्ठा, विवेक, निडरता, ब्रह्मचर्य व्रत पालन की शक्ति प्रदान करते हैं।

मंत्र—ॐ अंजनीसुताय विद्महे, वायुपुत्राय धीमहि । तन्नो मारुति प्रचोदयात् ।

पृथ्वी गायत्री—अक्षर—धी, देवता—पृथ्वी।

प्रभाव—सहनशीलता, कष्ट-सहिष्णुता, धैर्य, धारण-शक्ति की अधिष्ठात्री है। इनकी उपासना से प्राणियों में कर्त्तव्य-निष्ठा गंभीरता, क्षमा का गुण, धैर्य, दृढ़ता भारवहन करने की शक्ति का प्रादुर्भाव होता है।

मंत्र—ॐ पृथ्वोदैव्ये विद्महे, सहत्रभूये धीमहि। तन्नो पथिवी प्रचोदयात् ।

सूर्य गायत्री—अक्षर—म, देवता—सूर्य ।

प्रभाव—सूर्य ओज, नेत्र एवं प्राण—शक्ति के अधिष्ठाता हैं। इनके प्रभाव से स्वास्थ्य लाभ, निरोग्यता, तेजस्विता, शक्ति दीर्घ जीवन, प्राण-शक्ति, विकास का लाभ होता है।

मंत्र—ॐ मस्कराय विद्महे, दिवाकराय धीमहि। तन्नो सूर्यः प्रचोदयात।

राम गायत्री—अक्षर—हि, देवता—राम।

प्रभाव—राम, मर्यादा के अधिष्ठाता हैं। धर्म-रक्षक, मातृ-पिता भक्त, शत्रु-संहारक, सौम्य, शील, संयम, मित्रता के रक्षक, धैर्य-शीलता, अविचलित, सम्यक् भाव आदि गुण को प्रदान करते हैं।

मंत्र—ॐ दशरथये विद्महे, सीतावल्लभाय धीमहि। तन्नो रामः प्रचोदयात्।

सीता गायत्री—अक्षर—धि, देवता—सीता।

प्रभाव—तप की अधिष्ठात्री है। पवित्र भाव से, सात्विक वृत्ति से, एक-निष्ठता से तपोनिष्ठा बनाती है। इनके प्रभाव से प्राणी आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होता है।

मंत्र—ॐ जनकनन्दिन्यै विद्महे, भूमिजायै धीमहि। तन्नः सीता प्रचोदयात्।

चन्द्र गायत्री—अक्षर—यो, देवता—चन्द्र।

प्रभाव—चन्द्रमा मन का सौन्दर्य, शीलता, शान्ति का देवता है। इनके प्रभाव से चिन्ता, कष्ट, क्रोध, हिंसा, उद्विग्नता, कपट, निराशा, पाखंड, अधैर्य, निराशा, क्षोभ, लोभ, मोह, अत्याचार, तृष्णा, आदि, का शमन होता है तथा जीवन में सुख, आनन्द, शुभता प्राप्त होती है।

मंत्र—ॐ धीरपुत्राय विद्महे, अमृतत्वाय धीमहि। तन्नश्चन्द्रः प्रचोदयात्।

यम गायत्री—अक्षर—यः—देवतायम।

प्रभाव—काल शक्ति का नियामक है। समय को पहचान कर कार्य करने, मृत्यु भय से निडरता, कार्य स्फूर्ति, चैतन्यता जागरुकता आदि शक्तियों को प्रदान करने में समर्थ है।

मंत्र—ॐ सूर्यपुत्राय विद्महे महाकालाय धीमहि। तन्नो यम प्रचोदयात्।

ब्रह्मा गायत्री—अक्षर—नः देवता—ब्रह्मा।

प्रभाव—ब्रह्मा उत्पत्ति कारक है। उत्पादन, ऊर्जा सृजन के अधिष्ठाता हैं। सृष्टि रचना, जड़ व चेतन पदार्थों का उत्पादन करने की शक्ति प्रदान करता है।

मंत्र १ - ॐ वेदात्मनं च विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि। तन्नो ब्रह्मा प्रचोदयात्।

मंत्र २—ॐ चतुर्मुखाय विद्महे, हंसारुढ़ाय धीमहि। तन्नो ब्रह्मा प्रचोदयात्।

वरुण गायत्री—अक्षर—प्र, देवता—वरुण।

प्रभाव—वरुण जल शक्ति, रस शक्ति के स्वामी हैं। इनके प्रभाव से स्नेह, प्रणय की वृद्धि होती है। प्राणी में भावुकता, कोमलता, सरलता, दया, ममता, मोह, मधुरता, कला, ललित आदि भावों का जन्म होता है तथा जीवन में आनन्द-लहरें लेता है।

मंत्र—जलविम्बाय विद्महे, नीलपुरुषाय धीमहै। तन्नो करुणः प्रचोदयात्।

नारायण गायत्री—अक्षर—चो, देवता—नारायण।

प्रभाव—प्रशासन के कार्यों में सफलता, आदर्शों का निरुपण। ये आदर्श शक्ति के अधिष्ठाता हैं। महत्वाकाँक्षा, उत्कृष्टता, उन्नति, ऊँचा उठने, धर्मज्ञता, धार्मिकता, भक्ति, सद्चरित्र, चारित्रिक निर्मलता, स्वच्छता, शुभ कर्मों के प्रति लगनशीलता का विकास होता है।

मंत्र—ॐ नारायण विद्महे, वासुदेवाय धीमहि। तन्नो नारायणः प्रचोदयात्।

ह्याग्रीव गायत्री—अक्षर—द, देवता—ह्याग्रीव।

प्रभाव—साहस, शक्ति, भय-नाश, के देवता हैं। जिवन में उत्साह, वीरता, ओज उत्साह, शौर्य, पुरुषार्थ की प्राप्ति होती है।

मंत्र—ॐ वाणीश्वराय विद्महे, ह्याग्रीवाय धीमहि। तन्नो ह्यग्रीवः प्रचोदयात्।

हंस गायत्री—अक्षर—या, देवता—हंस।

प्रभाव—यह विवेक के देवता हैं। इनके प्रभाव से विवेक का विकास होता है। यह सत्-असत् का दूरदर्शिता, उत्तम संगति, आहाहर-विहार, यश, कीर्ति, प्रतिष्ठा, सन्तोष का गुण प्रदान करता है।

मंत्र—ॐ परमहंसाय विद्महे, महाहंसाय धीमहि। तन्नो हंसः प्रोचदयात्।

तुलसी गायत्री—अक्षर—त, देवता—तुलसी।

प्रभाव—परमार्थ सेवा सत्कार्यो की प्रेरणा, पापियों का उद्धार, प्राणी की सेवा में शान्ति, दुःख निवारण पवित्रता आदि का फल प्राप्त होता है।

मंत्र—ॐ श्री तुलस्यै विद्महे, विष्णुप्रियायै धीमहि। तन्नो वृन्दा प्रचोदयात्।

लक्ष्मी गायत्री—अक्षर- ण्यं, देवता—लक्ष्मी।

प्रभाव—धन, धान्य, ऐश्वर्य, आनन्द, व्यापार, पद, यश, भौतिक सुख-सुविधाएं देने में समर्थ है। इनका उपासक दरिद्रता से छुटकारा पा लेता है।

मंत्र—ॐ महालक्ष्म्यै विद्महे, विष्णु प्रियायै धीमहि। तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात्।

विष्णु गायत्री—अक्षर—वि देवता—विष्णु

प्रभाव—लक्ष्मी नारायण जगत् के पालन कर्त्ता, भरण-पोषण करने वाले, गृहस्थ में ऐश्वर्य देने वाले एवं जीव मात्र के रक्षक, आजीविका देने वाले, सफलता देने वाले हैं।

मंत्र—ॐ नारायण विद्महे, वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।

शिव गायत्री—अक्षर - तुः देवता—शिव।

प्रभाव—शिव कल्याणकारी, शीघ्र प्रसन्न होने वाले, कल्याण शक्ति के अधिष्ठाता, मोक्षकारी, शत्रु-नाशक, उपद्रवों के भंजक, भूत-प्रेत-पिशाच राक्षस सभी से रक्षा करते हैं। अनिष्टों का नाश कर पतन से रक्षा करते हैं।

मंत्र - ॐ महादेवाय विद्महे रुद्रमूर्तये धीमहि तन्नः शिवः प्रचोदयात्।

कृष्णा गायत्री—अक्षर—व, देवता—कृष्ण।

प्रभाव—कृष्ण योग के और योग-शक्ति के अधिष्ठाता हैं। प्राणी को कर्म, ज्ञान, आत्म-निष्ठा, स्वनियन्त्रण, आत्मशक्ति,

वैराग्य, सरसता एवं सौन्दर्य प्रदान करते हैं। कर्म निरन्तर, निर्बाध गति से करते रहने की प्रेरणा देते हैं।

मंत्र—ॐ देवकीनन्दनाय विद्महे, वासुदेवाय धीमहि। तन्नोः कृष्णः प्रचोदयात्।

राधा गायत्री—अक्षर—रे, देवता—राधा।

प्रभाव—राधा प्रेम की देवी हैं। भक्तों को प्रेम, शक्ति देकर द्वेष, शत्रुता, बैर, विरोध, घृणा, वैमनस्य पाखण्डपूर्ण आचरण से दूर करती है। सद्गृहस्थ बने रहने की शक्ति प्रदान करती हैं।

मंत्र—ॐ वृषसानुजाय विद्महे, कृष्णा प्रियायै धीमहि। तन्नो राधा प्रचोदयात्।

———

विश्वामित्र संहितोक्त गायत्री कवच

अब साधकों के लाभार्थ विश्वामित्र संहितोक्त गायत्री कवच प्रस्तुत है। इस पाठ को प्रारम्भ करने से पहले विनियोग तथा ध्यान करना परमावश्यक है। विनियोग में पहले दाहिने हाथ में जल, रोली, गन्ध, चावल, दक्षिणा, पुष्प लेकर पढ़ें इसके बाद जल को छोड़ दें।

विनियोग

ॐ अस्य श्री गायत्री कवचस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दो गायत्री ॐ भूः बीजम्, भुवः शक्तिः, स्वः कीलकम् गायत्री प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

ध्यानम्

पञ्चवक्त्रां दशभुजां सूर्य कोटि समप्रभम् ।
सावित्री ब्रह्मवरदां चन्द्र कोटि-सुशीतलाम् ॥
त्रिनेत्रां सितवक्त्रां च मुक्ताहार विराजिताम् ।
वराऽभयां कुशाकशां हेम पात्राक्षमालिकाम् ॥
शंख-चक्राऽब्ज-युगलं कराभ्यां दधती पराम् ।
सित पंकज संस्था च हंसारूढ़ां सुखास्मिताम् ॥

अर्थात् जो श्री गायत्री देवी पंचमुख वाली एवं दश भुजा युक्त हैं, जिनकी कांति करोड़ों सूर्य के समान है तथा जो सावित्री व ब्रह्मा को भी वर देने में सक्षम हैं।

जो करोड़ों चन्द्रमाओं के समान शीतल है। जिनके त्रिनेत्र हैं तथा स्वच्छ मुख-मण्डल है। जो मुक्ताहार से विभूषित है। जिनके दोनों हाथों में वर, अभय, अंकुश, कश, स्वर्ण पात्र, अक्षमाला, शंख, चक्र, ध्वजा शोभायमान है जो परब्रह्मा स्वरूपिणी हैं जो श्वेत कमल के आसन पर विराजमान हैं। शुभ्र-वर्ण हंस जिनका वाहन है और जिसके मुख-मण्डल पर सदैव मुस्कान रहती है।

"ध्यात्वैवं मनसाम्भोजे गायत्री कवचम् जपेत् ॥

उस श्री गायत्री माता के स्वरूप का ध्यान कर कवच का श्रद्धापूर्वक पाठ करें।

ब्रह्मोवाच

विश्वामित्र ! महाप्राज्ञ ! गायत्री गवचं शृणु ।
यस्य विज्ञान मात्रेण त्रैलोक्यं वशयेत् क्षणात् ॥

ब्रह्मा जी बोले—हे महाप्राज्ञ विश्वामित्र ! तुम गायत्री

कवच को सुनो। जिसके जानने मात्र से साधक तीनों लोकों को अपने वशीभूत कर लेता है।

सावित्री मे शिरः पातु शिखायाममृतेश्वरी।
ललाटं ब्रह्म दैवत्या भ्रुवौ मे पातु वैष्णवी॥
कर्णौ मे पातु रुद्राणी सूर्या सावित्रिकाऽम्बिके।
गायत्री वदनं पातु शारदा दशनच्छदौ॥

अर्थात् सावित्री मेरे सिरे की रक्षा करें। अमृतेश्वरी मेरी शिखा की रक्षा करें। ब्रह्म देवत्या मेरे भाल की रक्षा करें। वैष्णवी मेरे औहों की रक्षा करें। रुद्राणी कानों की रक्षा करें। सूर्य में रहकर समस्त प्राणियों की सृजनहार मां भगवती मेरे नेत्रों की रक्षा करें तथा गायत्री मेरे मुख की रक्षा करें तथा शारदा मेरे मसूढ़ों की रक्षा करें।

द्विजान् यज्ञप्रिया पातु रसनायां सरस्वती।
सांख्यायनी नासिका मे कपोली चन्द्रहासिनी॥
चिबुकं वेदगर्भा च कण्ठं पात्वघनाशिनी।
स्तनौ मे पातु इन्द्राणी हृदय ब्रह्मवादिनी॥
उदरं विश्व भोक्त्री च नाभौ पातु सुरप्रिया।
जघनं दारसिंही च पृष्ठं ब्रह्माण्डधारिणी॥
पार्श्वो मे पातु पद्माक्षी गुह्यं गो पोप्त्रिकाऽवतु।
ऊर्वोङ्कार रूपा च जान्वोः सन्ध्यात्मिकाऽवतु॥

अर्थ है—यज्ञप्रिया मेरे दांतों की रक्षा करें। सरस्वती मेरी जिव्हा की रक्षा करें। सांख्यायनी मेरी नासिका की रक्षा करें। चन्द्रहासिनी मेरे कपोलों की रक्षा करें। वेदगर्भा मेरी ठोढ़ी की रक्षा करें। अघनाशिनी मेरे कण्ठ की रक्षा करें। इन्द्राणी मेरे स्तनों की रक्षा करें तथा ब्रह्मवादिनी मेरे हृदय की रक्षा

करें। विश्वभोक्त्री मेरे पेट की रक्षा करें। सुरप्रियामेरी नाभी की रक्षा करें। नारसिही मेरी जांघों की रक्षा करें तथा ब्रह्माण्डधारिणी पीठ की रक्षा करें। पद्माक्षी मेरे दोनों पार्श्वों की रक्षा करें। गोप्त्रिका मेरे गुहांगों की रक्षा करें। ऊँकाररूपा मेरे दोनों उरु की रक्षा करें। सन्ध्यात्मिका मेरे जानु अर्थात् घुटनों की रक्षा करें।

जंघयोः पातु चाक्षोभ्यां गुल्फयोर्ब्रह्मशीर्षका।
सूर्या पदद्वयं पातु चन्द्रा पादांगुलीषु च॥
सर्वाङ्ग वेद माता च पातु मे सर्वदाऽनघा।
इत्येतत् कवचं ब्रह्मन्! गायत्र्याः सर्व पावनम्॥

अर्थ है—अक्षोभ्या मेरे जांघों की रक्षा करें। ब्रह्मशीर्षका गल्फ की रक्षा करे। सूर्य मेरे दोनों पैरों की रक्षा करें। चन्द्र मेरे पैरों की अंगुलियों की रक्षा करें। सम्पूर्ण पापों का नाश करने बाली वेद माता सदैव हमारे अंगों की रक्षा करें। यह गायत्री कवच सब प्रकार से पवित्र करने वाला है।

पुण्यं पवित्रं पापघ्नं सर्वरोग निवारणम्।
त्रिसन्ध्यं यः पठेद् विद्वान् सर्वान् कामानाप्नुयात्॥
सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञः स भवेद् वेदवित्तमः।
सर्व यज्ञ फलं पुण्यं ब्रह्मान्ते समवाप्नुयात्॥

अर्थ है—यह गायत्री कवच पुण्य, पवित्र, पापनाशक तथा रोगों का नाश करने वाला है। जो विद्वान प्रातः दोपहर एवं सांय में इसका पाठ करता है, उसके सब मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं। वह सब शास्त्रों का तत्वज्ञ, जानकर, ज्ञाता तथा वेदवेत्ता हो जाता है तथा समस्त यज्ञों का फल प्राप्त करके अन्त में ब्रह्म पद को प्राप्त करता है।

उपासना से पहले

गायत्री का जाप आरम्भ करने से पूर्व मन को सात्विक बनाना परम आवश्यक है। जप में मन की चंचलता बाधक होगी। चित्त वृत्तियों का निरोध नहीं होगा। मन को सत्वगुण प्रधान बनाने के लिए स्वर योग का सहयोग लें। स्वर योग ऐसी व्यवस्था है, जिससे सूर्य, चन्द्र आदि ग्रहों की सहायता से शक्ति की प्राप्ति हो जाती है। भारतीय योगियों को इनका पता था। आज सूक्ष्म और वैज्ञानिक ढंग से खोज करने पर इनका महत्व उजागर हुआ है।

प्राचीन ऋषि मुनियों ने भी इसे महत्वपूर्ण योग घोषित किया है। भगवान शिव इसके आविष्कारकर्ता माने गये हैं। भगवान शिव पार्वती से कहते हैं कि स्वरोदय में कुयोग की कोई संभावना नहीं होती है और इनकी सहायता से अशुभ कार्य भी शुभ हो जाते हैं। उन्होंने तो यहां तक कहा संपूर्ण शास्त्र, पुराणादि, स्मृति और वेदांग से यह श्रेष्ठ है। भगवान शिव ने कहा है कि जो लोग स्वर के नियंत्रण की क्षमता को प्राप्त करते हैं वह प्रकृति के गुप्त रहस्यों को समझने की स्थिति में हो जाते हैं। स्वर धर्म वैज्ञानिक निष्कर्षों पर आधारित है। आधुनिक विज्ञान के अनुसार चन्द्रमा समुद्र की लहरों को प्रभावित कर ज्वार भाटा उत्पन्न करता है। सूर्य जलकणों को आकर्षित करते हैं। दोनों के सहयोग से यह पृथ्वी पर लहराता समुद्र आंशिक रूप से उड़कर चला जाता है। और आकाश में जल भंडार एकत्रित होता है, जिससे धरती का सिंचन होता है। अगर सूर्य और चन्द्र अपने कार्यक्रम स्थगित कर दें तो प्रलय

आ जाये और ऐसी समस्याएं उत्पन्न हो जायें जिनका समाधान आधुनिक युग के वैज्ञानिक भी करने में असमर्थ रहें। सूर्य और चन्द्र के अपने-अपने गुण हैं। एक ऊष्ण है, दूसरा शीतल। जीवन में दोनों गुणों की आवश्यकता रहती है। भारतीय मनीषियों की मान्यता है कि पिंड ही ब्रह्माँड है। वही सब ब्रह्मांड के सूर्य, चन्द्र पिंड में भी विद्यमान है। योगियों ने इसकी खोज की और पाया कि दाँये स्वर से संबंधित नाड़ी सूर्य-शक्ति से ओत-प्रोत है और बांये स्वर से संबंधित नाड़ी में चंद्रमा की शक्ति है। वह पिंड के ग्रहों को अपने अनुकूल बना सकें तो प्रतिकूल परिस्थितियां भी अनुकूल हो जाती है।

उपासना की सफलता के लिए यम और नियम आवश्यक हैं। साधना नींव का काम करती है। गायत्री सिद्धि के लिए भी यम और नियमों का पालन आवश्यक है। जिस तरह भवन निर्माण में नींव सुदृढ़ बनाई जाती है, उसी प्रकार साधना में यम-नियम को मजबूत बनाने की दिशा में पूरा-पूरा ध्यान देना पड़ता है।

स्वर-योग के योग-आचार्यो के अनुसार हमारी नाभि में एक नाड़ी होती है, जो कुण्डली मार बैठी रहती है। उस नाड़ी से दस नाड़ियां निकलती हैं, जो शरीर के विभिन्न भागों को चन्द्र, पिंगला को सूर्य और सुषुम्ना को वायु भी कहते हैं। इड़ा स्थान बाँये नासिका, पिंगला का दाँये नासिका और सुषुम्ना दोनों के मध्य में है। हमारे जीवन में यह तीन नाड़ियां महत्वपूर्ण हैं। इन्हें अनुकूल बनाकर अशुभ को शुभ में बदला जा सकता है। दांये में सूर्य और बाँये स्वर में चन्द्र के गुणों की प्रधानता रहती है। सूर्य में उष्णता और चन्द्र में शीतला का गुण है। उष्णता उत्पन्न करने के लिए सूर्य और शीतलता विकास

के लिए चन्द्र स्वर उपयुक्त रहता है। पूजा उपासना, साधना, योगाभ्यास, दीक्षा, विद्यारम्भ, आदि कोई भी कार्य हों, वह चंद्र स्वर में करने चाहिए। उत्तेजक कार्यों में सूर्य स्वर चलना लाभ दायक रहेगा। गायत्री उपासना आरम्भ करने के पूर्व स्वर का परीक्षण कर लेना आवश्यक है। उपासना के लिए चन्द्र स्वर आवश्यक है। अतएव बांयें स्वर को परखकर साधना शुरू करें।

योग-दर्शन के अनुसार शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर शरणगति यह पांच नियम हैं।

शौच का अर्थ पवित्रता बनाये रखना है। बाह्य स्वच्छता एक आवश्यक नियम है। मन और विचारों की शुद्धि के द्वारा ही आत्मिक उन्नति सम्भव है। मल दुर्बलता रोग का चिन्ह है और इसका अभाव शक्ति विकास का साधन है। योग दर्शन में लिखा है "शौच से घृणा। दूसरों से संसर्ग न करने की इच्छा होती है। चित की शुद्धि, मन की स्वच्छता, एकाग्रता इन्द्रियों पर विजय जीतना आत्म साक्षात्कार योग्यता, यह पाँचों शौच हैं। संतोष का अर्थ अपनी इच्छाओं को सीमित रखना, सब तरह की परिस्थितियों में प्रसन्न रहना ही संतोष है। जो इच्छाओं, कामनाओं व तृष्णाओं के वश में है, निरन्तर असंतोष की अग्नि में जलते रहते हैं, वह सदैव दुःखी रहते हैं। कष्ट सहना, परिश्रम करना तप है। सर्दी-गर्मी, सुख-दुख, भूख-प्यास मान अपमान आदि को सहन करना भी तप है। जिस तरह सौने को अग्नि में तपाने से ही वह शुद्ध होता है, उसी प्रकार आंतरिक मलों को तप की गर्मी से पिघलाने से उनका नाश व शुद्धि होती है। जप का लाभ तभी होता है, जब वह एकाग्रतापूर्वक किया जाय और वृत्तियां अंतर्मुखी है। अगर जप-साधना में माला घुमाने के साथ-साथ विचार भी घूमते रहें तो शक्ति का विकास नहीं होगा। ध्यान

की सफलता में जप की सफलता निश्चित है। पूर्व संस्कारो में जो काम, क्रोध, मद, लोभ, द्वेष-ईर्षादि की भावनायें भरी पड़ी हैं, उनको धीरे-धीरे समाप्त करना साधना की विशेषता है। शरीर की शुद्धि कर स्वच्छ वस्त्र पहिनकर साधना पर बैठना चाहिए। सिद्धासन बना कर सीधे ढंग से बैठना चाहिए, मध्यान्ह को उत्तर की ओर, शाम को पश्चिम की ओर मुख करके बैठना चाहिए। मल-मूत्र त्याग या किसी अनिवार्य कार्य के लिए बीच में उठना पड़े तो हाथ पैर धोकर पुनः बैठना चाहिए। साधक का आहार सात्विक होना चाहिए। तंत्र-सार के अनुसार मन की शुद्धि, पवित्रता, संयम, शौच, वैराग्य, मंत्रार्थ यह जप सिद्धि की प्रधान सम्पत्तियाँ हैं। अपवित्रता साधना में बाधक माने गए हैं।

जप न तो बहुत धीरे धीरे हों, और न ही अधिक तीव्र-स्वाभाविक गति से चलना चाहिए। सिद्धि के लिए मन, शिव, शक्ति और वायु का संयम आवश्यक है। साधना-स्थल को सात्विक रखना चाहिए। साधक को अपनी इन्द्रियों पर संयम रखना भी आवश्यक है। जप के समय मंत्र के अर्थ का भी चिंतन करना चाहिए। मंत्रार्थ में जिन गुणों का वर्णन किया हो, वह गुण हममें ओत-प्रोत हो रहे हैं, यह भावना दृढ़ करनी चाहिए। यही सिद्धि के लक्षण योग दर्शन में तथ्य का समर्थन है कि मंत्र का जप और अर्थ विचार करने पर लाभ होता है। पूर्ण मनोयोग से साधना करने वाले साधक इस स्थिति तक पहुंच जाते हैं। जप के लिए उपयुक्त स्थान का होना भी आवश्यक है। लिंग पुराण के अनुसार घर में किए जप का फल साधारण होता है। नदी तट पर किए जप का फल अनन्त होता है पवित्र आश्रमों, देवालयों, पर्वत शिखर पर, देव-हृदय पर

समुद्र तट पर यह लाभ करोड़ गुना हो जाता है। ध्रुव तारा, सूर्य के अभिमुख होकर और गौ, अग्नि, दीपक और जल के सामने जप करने का भी फल श्रेष्ठ माना गया है। जप में माला की भी विशेष उपयोगिता है। तन्त्रसार के अनुसार अंगुलियों पर मंत्र जप साधारण, पुत्र जीवा की माला से दस गुना, शंख से सौ गुना, मूंगे से हजार गुना, मणि और रत्नों की माला से दस हजार गुना, स्फटिक की माला से दस हजार गुना, मोती की माला से लाख गुना, सोने की माला से करोड़ गुना, कुश ग्रन्थि की माला से अरब गुना और रुद्राक्ष से जप करने से अनन्त गुना प्राप्त होता है। गणेश का जप हाथी दाँत की माला से श्रेष्ठ माना गया है। कालिका पुराण में मूंगे की माला की सर्व प्रकार की कामनाओं की पूर्ति करने वाली, पुत्राजीवा की माला को पुत्रदाता और समस्त पापों का विनाश करने वाली बतलाया गया है। वैष्णव मंत्रों से तुलसी की माला ही श्रेष्ठमानी गयी है।

जप साधना में आसन भी विशेष महत्व रखता है। वस्त्र, पल्लव, तृणा, पाषाण, वंशकुश, कम्बल, कृष्णाजिन, व्याघ्र चर्म आदि के आसनों की चर्चा की गई है। सात्विक उपासना में कुश का आसन ही श्रेष्ठ माना गया है अगर बिना आसन भूमि पर बैठकर जप किया जाय, तो जप साधना में उपाजित शक्ति के पृथ्वी में प्रवेश करने की सम्भावना रहती है, इसलिए साधक को लाभ की प्राप्ति नहीं होती है।

गायत्री की साधना संध्या वन्दन के वाद की जाती है। यजुर्वेदीय, ऋग्वेदीय, सामवेदीय, संध्यायें प्रसिद्ध मानी जाती हैं। सनातन धर्म मतावलम्बी जनता में जो संध्या व्यवहार में लाई जाती है, वह श्रुति और स्मति दोनों के मिले-जुले मंत्रों से

बनाई गई है। गायत्री मंत्र से भी संध्या की जाती है जिसे ब्रह्मा संध्या की संज्ञा दी गई।

शास्त्रों में त्रिकाल संध्या करने का विधान है, प्रातः व सायंकाल दो समय भी कर ली जाय तो उत्तम है। इसकी भी सुविधा न हो तो प्रातःकाल एक समय तो करना ही चाहिए। ब्रह्म मुहुर्त में उठकर शौच स्नानादि से निवृत्त होकर और धुले वस्त्र धारण कर साधना पर बैठना चाहिए। यायत्री का सूर्य से सीधा संबध है। अतः जिधर सूर्य हो उधर ही मुख कर साधना करना चाहिए। प्रातः पूर्व की ओर, सायं पश्चिम की ओर दोपहर को उत्तर की ओर मुख करना चाहिए कुश का आसन श्रेष्ठ माना गया है। शरीर पर कम से कम वस्त्र हों। हाथ पोंछने के लिए कन्धे पर अंगोछा रख लेना चाहिए। संध्या के स्थान को नित्य प्रति धो लिया जाय तो अच्छा है। धूप अगरबत्ती जला देनी चाहिए ताकि वातावरण सुकासित हो जाए। पंच पात्र में जल भर कर रख लें। पालथी मार कर सुमेरू दण्ड को सीधा रखकर संध्या के लिए बैठे। फिर आचमन करे।

आचमन का उद्देश्य त्रिविधा "ह्रीं श्रीं," शक्तियों की आकर्षित करके धारणा करना है। इसका स्थूल रूप तो दायें हाथ की हथेली में थोड़ा जल लेकर तीन बार पान करने का है। इसका सूक्ष्म विधान ही महत्वपूर्ण है, जिसमें भावना शक्ति का उपयोग किया जाता है। प्रथम आचमन के लिए दायें हाथ में जल लेकर गायत्री मंत्र का उच्चारण करते हुए यह भावना करे कि इसमें ही प्रधान सतोगुणी शक्ति जल में आ गई है और तंत्र पूर्ण होने पर उसे पीते हुए भावना करें कि सतोगुण से ओत-प्रोत इस जल को पीकर मेरे भीतर सतोगुण की मात्रा में भी

वृद्धि हो रही है। इसी प्रकार से दूसरे व तीसरे आचमन के साथ रजो गुण तमोगुणी शक्तियों के जल में प्रविष्ट होने की भावना करें। कंधे पर रखे अंगोछे से हाथ-मुँह पोंछ लेना चाहिए।

शिखा को जल से भिगोकर उसमें गांठ लगा लेनी चाहिए गांठ लगाते हुए गायत्री मंत्र का उच्चारण करते रहना चाहिए। और यह भावना करनी चाहिए कि मस्तिष्क के विद्युत के भण्डार में हर समय विचार संकल्प और शक्ति परमाणु जो बाहर निकलकर आकाश में उड़ते रहते हैं, वह रुक गये हैं। जप के बाद शिखा मुक्ति निम्न मंत्र से करें —

फिर प्राणायाम करे। इस क्रिया से विश्वव्यापी प्राणतत्व को अन्दर खींचकर धारण क्रिया जाता है।

वायु को भीतर खींचते समय ॐ भूः भुवः स्वः का मानसिक उच्चारण करना और भावना करें कि वायु के साथ विश्व-व्यापी चैतन्य प्राण शक्ति मेरे भीतर प्रविष्ट हो रही है। वायु को धीरे-धीरे खींचना चाहिए और यथा शक्ति भर लेना चाहिए। अन्तर कुम्भक में "तत्सवितुर्वरेण्यं" का पाठ करते रहना चाहिए और यह भावना करनी चाहिए कि तेजस्वी प्राण शक्ति को भीतर खींचने से चारों ओर शक्ति का संचार हो रहा है और मैं शक्ति का पुंज बनता जा रहा हूं। रेचक में भर्गो देवस्य धीमहि का जप करते हुए यह भावना करें कि सतोगुणी शक्तियों के आगमन से मेरे पापों का नाश हो रहा है और वायु के साथ बाहर निकलते जा रहे हैं बाह्य कुम्भक में धियो यो नः प्रचोदयात का मानसिक उच्चारण करते हुए यह भावना करें कि आसुरी शक्तियों के नाश से अब मेरा शरीर पवित्र हो गया है और उनके प्रविष्ट होने का मार्ग बन्द हो गया है।

इन भावनाओं के साथ किया गया प्राणायाम लाभदायक होता है। यह प्राणायाम की विधि है। संध्या में पांच प्राणायाम करने का विधान है।

गायत्री सतोगुणी शक्ति की प्रतीक है। उसके आह्वान से पापों, दुष्प्रवृत्तियों, दुर्भावनाओं का विसर्जन होता है, वैसे सूर्य रुपी प्रकाश के आगमन से अन्धकार अपने आप चला जाता ऐसे ही भावना अघमर्षण क्रिया में की जाती है। यह क्रिया संध्या में शरीर, प्राण व मन के त्रिविधि पापों के विनाश के लिए तीन बार की जाती है।

सर्वप्रथम दायें हाथ में जल लेकर ॐ भूः भुवः स्वः का उच्चारण। इसे दांये नासिका से छः अंगुल दूरी पर रखना चाहिए और बायें हाथ के अंगूठे से बायीं नासिका को बन्द कर देना चाहिए। अब "तत्सवितुर्वरेण्य" का उच्चारण करते हुए साँस भीतर खींचें और भावना करें कि गायत्री की सतोगुणी शक्ति का सांस के साथ प्रवेश हो रहा है। अब बायीं नासिका से बायें अंगूठे को हटा दें उससे दायी नासिका को सामने से बन्द करें। दायीं हाथ की हथेली को बायीं नासिका के सामने ले जायें, भर्गो देवस्य धीमहि का पाठ करते हुए यह भावना करें कि गायत्री को सतोगुणी शक्ति के आगमन के फलस्वरूप पापों, दुविचारों और दुर्भावनाओं का नाश हो रहा है और आसुरी शक्तियों के मृत शरीर जल में गिर रहे हैं। भरी हुई सांस पूरी निकल जाने पर धियो योनः प्रचोदयात का पाठ करें और जल को एक ओर गिरा दें। इसे कम-से-कम तीन बार करना चाहिए।

न्यास—

न्यास का शाब्दिक अर्थ है—धारण करना। गायत्री योग के अनुसार शरीर रूपी ब्राह्मण्ड के सात लोक होते हैं। उन लोकों के प्रतीक हैं—१. मूर्धा (मनः मस्तिष्क), २. आंखें, ३. कान, ४. वाणी और रसना, ५. हृदय, अन्तःकरण, ६. नाभि, जननेन्द्रिय, ७. हाथ, पैर। यह सात शक्ति केन्द्र हैं। इनको जगाना व पवित्र रखना आवश्यक है। तभी गायत्री जप साधना द्वारा शक्ति का विकास संभव है। न्यास द्वारा इन सात केन्द्रों को पवित्र व शक्तिशाली बनाया जाता है। विधि इस प्रकार है—

दायें हाथ के अंगूठे और अनामिका अंगुली को मिलाकर नीचे लिखे मंत्र भागों में जहां संकेत हों, उसे स्पर्श करें और यह भावना करें कि वह अंग शक्तिशाली व पवित्र बन रहे हैं।

(१) ॐ भूर्भुवः स्वः—मूर्धाय नमः।
(२) तत्सवितुः—नेत्राभ्यां नमः।
(३) वरेण्यं—कर्णाभ्यां नमः।
(४) भर्गो—मुखाय नमः।
(५) देवस्य—कण्ठाय नमः।
(६) धीमहि—हृदयाय नमः।
(७) धियो यो नः—नाभ्यै नमः।
(८) प्रचोदयात—हस्तपादाभ्यां नमः।

यह गायत्री उपासना की भूत शुद्धि या 'ब्रह्म संध्या' है।

गायत्री साधना के लिए चित का स्वस्थ व शान्त होना आवश्यक है। हृदय में श्रद्धा और भक्ति भावना के साथ, मन

को सब ओर से हटाकर तन्मय किया जाए और चित को एकाग्र किया जाए, तभी साधना में सफलता प्राप्त होती है। जब मन में अशान्ति, चिन्ता, उत्तेजना, भय व सन्देह हो उसका एक स्थान होना कठिन है। साधक माला तो घुमाता रहता है, मंत्र भी बोलता रहता है, चित इधर-उधर भागता है। सब ओर से मन हटाकर, श्रद्धा भक्ति से तन्मयतापूर्वक साधना से ही वह आकर्षण शक्ति उत्पन्न होती है जिससे सिद्धि प्राप्त हो। पद्मासन में दोनों जंघाओं को गर्दन, पौठ को सीधा करके खेचरी मुद्रा में बैठे। अभक्ष्य पदार्थो का सेवन, मादक द्रव्य का सेवन न करें। मिर्च, खटाई, तेल, गरिष्ठ, वादी, कफ-वर्धक तीक्ष्ण पदार्थो का सेवन न करें। मैथुन कुसंग, क्रोध, भय उत्पन्न करने वाली बातें न करनी चाहिए। शरीर शुद्ध रहे। शारीरिक ब्रह्मचर्य के समान मानसिक आध्यात्मिक ब्रह्मचर्य आवश्यक है। अपने अनुभवनों को दूसरे से न कहना चाहिए। इस प्रकार वातावरण अच्छा होने से कार्य में सफलता प्राप्त होती है।

योग दर्शन में बाधक विघ्नों-विक्षेपों और पांच उप-विक्षेपों का वर्णन है, उन्हें दूर करना आवश्यक है—

व्याधि, सत्यान, संशय, प्रमाद, आलस्य, अविरति, भ्रांति दर्शन, अलब्ध-भूमिकत्व, अवस्थित्व, ये नौ चित के विक्षेप हैं। इनका विवरण इस प्रकार है।

व्याधि—शरीर में रोग का होना व्याधि है।

सत्यान—असमर्थता और अकर्मण्यता, काम करने योग्य समुचित उत्साह का अभाव अथवा सामर्थय की न्यूनता सत्यान है।

संशय—अपने प्रयत्न की सफलता पर सन्देह होना संशय है।

प्रमाद—साधना में लापरवाही करना, नियमित कार्यक्रम को अधूरा ही छोड़ देना और उसके विगड़ने पर भी चिन्ता न करना प्रमाद है।

आलस्य—शरीर में भारीपन या आलसी हो जाना, काम में मन न लगना, सुस्ती छायी रहना आलस्य है।

अविरति—विषयों के साथ संयोग होने से मन का विषयों में रहना, चित्त में वैराग्य का अभाव हो जाना अविरति है।

भ्रान्ति दर्शन—किसी कारण से अध्यात्म-दर्शन तथा साधन मार्ग का ठीक ज्ञान न होना अथवा यह साधन ठीक नहीं है, यह भ्रान्ति दर्शन है।

अलब्य भूमिकत्व—साधना करने पर भी साधक की स्थिति का प्राप्त न होना, बीच में मन का वेग रुक जाना, अलब्य भूमिकतत्व है।

अनवस्थितत्व—चित्त का स्थिर न रहना, भूमिका तक पहुंचकर भी अस्थिरता के कारण मनोभूमि का डांवाडोल रहना अनवस्थितत्व है।

इन नौ चित्त विक्षेपों को अन्तराल, विघ्न और योग प्रतिपक्षी भी कहते हैं।

इन विक्षेपों को दूर करने के उपाय इस प्रकार हैं—

"इन विक्षेपों को दूर करने के लिए एकतत्व का अभ्यास करना। चित्त अनेक विषयों का चिन्तन होता है। इस चित्त को अनेक विषयों में हटाकर एक ईष्ट विषय में लगाये। ईष्ट का ध्यान तन्मयता के आधार पर करे, तब विक्षेप दूर होते हैं।

विषयों से मन कैसे हट सकता है। उसका सरल उपाय इस प्रकार है—

"सुख दुःख पुण्य पाप मित्रता, दया, प्रसन्नता उपेक्षा की भावना से चित्त निर्मल हो जाता है।

चित्त में ६ प्रकार का मल उत्पन्न होता है जो रजोगुण, तमोगुण की वृत्तियों की अधिकता से होता है।

राग कालुष्य, ईर्ष्या कालुष्य, परोपकार—चिकीर्शा, असूया, कालुष्य, द्वेष कालुष्य, अमर्ष कालुष्य।

राग कालुष्य--वह जो स्वयं गुण का अनुभव करते हुए सदैव सुखी रहने की इच्छा हो, पर सर्व सुख साधनों के न होने से चित्त मलिन हो जाता है।

ईर्ष्या कालुष्य—दूसरों की सम्पत्ति, गुण, यश देखकर ईर्ष्या को बढ़ाना।

परोपकार चिकीर्षा कालुष्य—दूसरे मनुष्य की बुराई या मान करना।

असूया कालुष्य--दूसरे गुणों में दोष लगाना विद्वान को मूर्ख, साधकों को पाखण्डी बतलाना।

द्वेष कालुष्य—किसी से द्वेष करना।

अमर्ष कालुष्य—अपने को गाली दे या कठोर वचन कहे अथवा कोई अपना काम अपमान करे, उसको न सहकर प्रतिशोध की चेष्टा करना।

इन मलों से चित्त मलीन होकर विक्षिप्त हो जाता है। पुनः साधना में एकाग्र नहीं होता है। इसलिए इनकी निवृत्ति कर चित्त को एकाग्र करने का सूत्र में उपाय कहा है।

सुखी मनुष्यों को देखकर उन पर मित्र भाव रखने से राग ईर्ष्याकालुष्य मिट जाती है अर्थात मित्र के सुख को अपना सुख समझने से ईर्ष्या मिट जाती है। दुखी मनुष्यों पर दया रखने से घृणा नष्ट हो जाती है।

पुण्यात्मा—हर्ष होना, प्रशंसा करने से असूया अर्थात् झूठे कलंक लगाने की निन्दा करने की वृत्ति नष्ट हो जाती है।

इस तरह चित्त के मल जब धुल जाते हैं, तब स्वच्छ चित्त प्रसन्नता को प्राप्त होता है और एकाग्रता लाभ करता है।

चित्त निर्मल करने का अन्य उपाय प्राणायाम है—

प्राण वायु को बार-बार बाहर निकालने और रोकने से चित्त निर्मल होता है। प्राणायनि के निरन्तर अभ्यास से अज्ञान नष्ट हो जाता है। प्राणायाम का अभ्यास जैसे बढ़ता जाता है वैसे मनुष्य से संचित कर्मों के संस्कार, अविद्या जनित क्लेश ज्ञान के आवरण रूप हैं, दुर्बल होते जाते हैं। प्राणायाम के निरन्तर अभ्यास से मन की चंचलता नष्ट हो जाती है और उसमें धारणा की योग्यता आ जाती है। योग दर्शन में मन स्थिर करने का अन्य उपाय इस प्रकार वर्णित किया है—

इन्द्रियों के विषय गंध, रस, रूप, स्पर्श, शब्द से उत्पन्न साधना वृत्ति मन की स्थिति को निरुद्ध करती हैं। योगदर्शन में मन को स्थिर करने का तीसरा उपाय इस प्रकार है :— विशोका वा ज्योतिष्मती।

"शोक रहित प्रकाश वाली वृत्ति मन को स्थिर करती है।" अभ्यास यह है कि हृदय-स्थान में एक कमल जैसी सूक्ष्म ग्रन्थि है, उसको हृत् पदम कहते हैं। इसकी आठ पंखुड़ियाँ हैं। मुख

नीचे, जड़ ऊपर को है, पखुड़ियाँ बंद हैं। प्राणायाम के अभ्यास द्वारा इस अधोमुख कमल को ऊपर को सीधा किया जाता है, जैसे फूल की कली खिलकर फूल के रूप में विकसित होती है। इस कमल के बीच में ॐकार स्थित है जिसका "अ" सूर्य रूप "उप" चन्द्र रूप, "म" अग्नि मण्डल रूप है उसके ऊपर अर्ध मात्रा ब्रह्मानन्द स्वरूप है। उस कमल की कणिकाओं में ऊपर की ओर मुख किये सुषुम्ना नाड़ी है। उसी के अन्तर्गत ब्रह्म नाड़ी है, जो मूर्धा तक चली गई है। मूर्धा से बाहर भी इस ब्रह्मनाड़ी का सम्बन्ध सूर्य लोक आदि लोकों से है। इस नाड़ी में चित्त का निवास है। ध्यान योग तथा प्राणायाम के आधार पर जब हृत् पदम का साक्षात्कार एवं विकास किया जाता है तो उसमें निवास करने वाला चित सूर्य, चन्द्र, मणि आदि ज्योतिषों के रूप में दिखाई पड़ता है. इस साक्षात्कार को ज्योतिष्मती कहते हैं। इसके उदय होने पर रज तम से उत्पन्न शोकादि स्वयं नष्ट हो जाते हैं।

उपरोक्त बताये हुए साधनों में से कोई साधन अगर साधक के अनुकूल नहीं पड़ता हो, अपनी इच्छानुसार चुने। योगदर्शन में एकाग्रता का साधन शौच की सिद्धि बतलाया गया है। शौच कहते हैं—पवित्रता को। मन की पवित्रता में अपार शक्ति है। यही आनन्द का स्त्रोत है। पहले मन को शुद्ध करें। योग वशिष्ठ में कहा है—जिनका मन परम पावन और निर्मल पद में दृढ़, विश्रान्त और स्थिर हुआ है, उसका नाश मृत्यु भी नहीं करती। कठोपनिषद में यम नचिकेता से कहते हैं—"शुद्ध मन से ही परमात्मा तत्व किये जाने योग्य है वह परमात्मा न तो नेत्रों से, न वाणी से और न दूसरी इन्द्रियों से ही ग्रहण करने में आता है तथा तप से अथवा कर्मो से भी वह ग्रहण

नहीं किया जा सकता है। सर्वथा आसक्ति रहित और शुद्ध अन्तःकरण वाले ऋषि लोग परमात्मा को पूर्णतया प्राप्त होकर ज्ञान से तप्त एवं परम शांत हो जाते हैं... जिनका अन्तःकरण शुद्ध हो गया है, वह समस्त प्रयत्नशील साधक गण मरण काल में ब्रह्म लोक में जाते हैं। साधकों का विचार है कि जब तक मन अपवित्र रहता है, उसमें विषय बासनाओं का आधिपत्य रहता है, तब तक मन में एकाग्रता नहीं आती है। एकाग्रता के लिए मन की पवित्रता आवश्यक है। अतः सिद्धि तक पहुंचने के लिए मन को वासना रहित करना आवश्यक है। गायत्री साधकों को इसकी ओर पूरा ध्यान देना है। संसार के बड़े से बड़े, कठिन कार्य भी अभ्यास से पूर्ण हो जाता है। अभ्यास करते रहने से सब शमन हो जाते हैं। यही गायत्री मंत्र की सिद्धि का मार्ग है। अब किसी भी शुभवार, नक्षत्र या तिथि में प्रातःकाल पूर्व की ओर मुख करके और शुद्ध घी के दीपक के समक्ष गौ सेवन, चन्दन, कपूर, केशर और गंगाजल को एक साथ मिलायें। पीपल या शमी की कलम से भोज पत्र, पीपल पत्र, या पीपल की लकड़ी पर गायत्री का मानसिक जाप करते हुए निम्नलिखित मंत्र बना लें। इसे चांदी पर भी बनवाया जा सकता है। गायत्री की दैनिक साधना, उपासना, प्रजनन में यह प्रयोग में लायें। इसे ही गायत्री मंत्र मानकर आप अच्छी प्रकार साधना करें। गायत्री मंत्र की साधना इस प्रकार है—

हे देवी। गायत्री। आपकी जय हो—जय हो। मैं गायत्री की वन्दना करता हूँ। हे सावित्री। आप हमको इस घोर संसार से उद्धार वाला बना दो। हे जननि। आप गायत्री और सावित्री के स्वरूप वाली हैं। आप सरस्वती के रूप वाली हैं। आप बहुत से स्वरूप धारण किया करती हैं। आप तीन पदों वाली और देवगण सभी आपके चारणों की अर्चना नित्य किया

करते हैं। आप इस संसार रूपी सागर के लिए पीत स्वरूपा हैं। आपका प्रातः मध्यान्ह और सायंकाल में नित्य ही द्विजगण ध्यान में आसक्त होकर अर्घ्यो द्वारा पूजा करते हैं—आप मुक्ता विद्रम, सुवर्ण, नीलम और श्वेत मुख वाली श्वेत कमल के आसन पर विराजमान, पद्मासन से संस्थित, पाँच मुखों वाली हैं। हे गायत्री देवी आपकी मैं वन्दना करता हूँ। हे माते। व्याहृतियां जिसके आदि में हैं ऐसा आपका मंत्र है। पूर्व में चार वर्ण जिसके हैं ऐसा बीस वर्णो वाला अर्थात चौबीस अक्षरों का आपका मंत्र है। वेदों के अर्थ में प्रत्येक मंत्र में आपकी स्तुति विद्यमान हैं। जो भी मन में जिसका भी ध्यान करता है उसकी कामनापूर्ण किया करती हैं। हे जननि। आप अपने करों में वरदान, अभयदान, अंकुश, कुशा, कपाल रज्जु और दो कमलों का जोड़ा धारण कर रही हैं। हे भगवती। आपके चरण कमलों को बार-बार नमस्कार करता हूं। घृत से परिपूर्ण ज्योतिमय दीपों से मैं आपकी वंदना करता हूँ। मैं अपने मस्तक पर आपके चरणों को धारण करता हूँ। हे देवि। जय हो। हे देवि। मैं गायत्री की वन्दना करता हूँ आपकी सदा जय हो। आपकी सदा ही जय हो!

गायत्री उपासना से पूर्व २४ मुद्राओं का नियम बनाया गया है। इन मुद्राओं का बनाना अनिवार्य है। इसके अभाव में उपासना निष्फल हो जाती है।

देवी भागवत में उनको विस्तृत रूप से बतलाया गया है—

सुमुखं सम्पुटं चैव विततं विस्तृतं तथा।
द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुः पञ्चमुखं तथा॥

षण्मुखाऽधोमुखं चैव व्यापकाञ्जलिकं तथा।
शकटं यमपाशं ग्रथितं सन्मुखोन्मुखम् ।।
प्रालम्बं मुष्टिक चैव मत्स्यं कूर्मं वराहकम्।
सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुदगरं पल्लवं तथा ।।

मुद्रायें :—

१. सुमुखम—दोनों हाथों की अंगुलियों को मोड़कर परस्पर मिलायें।

२. सम्पुटम—दोनों हाथों को फुलाकर मिला दें।

३. विततम्—दोनों हाथों की हथेली परस्पर सामने करें।

४. विस्तृतम—दोनों हाथों की अंगुलियाँ खोलकर हाथों को कुछ अधिक अलग करें।

५. दिमुखम्—दोनों हाथों की कनिष्ठिका से कनिष्ठिका तथा अनामिका से अनामिका मिला दें।

६. त्रिमुखम्—दोनों मध्यमाओं को और अंगूठों को मिलायें।

७. चतुर्मुखम्—दोनों तर्जनियाँ और कनिष्काएं मिलायें।

८. पंचमुखम्—दोनों अंगूठों को मिलायें।

९. षणमुखम्—हाथ वैसे ही रखते हुए दोनों कनिष्ठाएं खोलें।

१०. अधोमुखम्—उल्टे हाथों की अंगुलियों को मोड़कर तथा मिलाकर नीचे की ओर करें।

११. व्यापकाअजलिम्—वैसे ही मिले हुए हाथों को शरीर की तरफ से घुमाकर सीधा करें।

१२. शकटम्—दोनों हाथों को उल्टाकर अंगूठे से अंगूठा मिलाकर तर्जनियों को सीधी रखते हुए मुट्ठी बांधे।

१३. यमपाशम—तर्जनी से तर्जनी बांधकर, दोनों मुट्ठी बांधे।

१४. ग्रंथितम्—दोनों हाथों की अंगुलियों को परस्पर गूंथे।

१५. सन्मुखोन्मुखम्—हाथों की पाँचों अंगुलियों को मिलाकर प्रथम बाएं पर दाहिना, फिर दाहिने पर बायाँ हाथ रखें।

१६. प्रलम्ब—अंगुलियों को कुछ मोड़कर दोनों हाथों को उलटा कर नीचे की ओर करें।

१७. मुष्टिक—दोनों अंगूठे ऊपर रखते हुए दोनों मुट्ठियां बांधकर मिलायें।

१८. मत्स्य—दाहिने हाथ की पीठ पर बाएं हाथ को उलटा रखकर दोनों अंगूठे अलग करें।

१९. कर्म—नीचे बाएं हाथ की मध्यमा, अनामिका तथा कनिष्ठिका मोड़कर उल्टे दाहिने हाथ की मध्यमा-अनामिकाओं को उन तीनों अंगुलियों के नीचे देकर बायीं तर्जनी पर दाहिनी कनिष्ठिका और बाएं अंगूठे पर दाहिनी तर्जनी रक्खें।

२०. वराहक—दाहिनी तर्जनी को बायें अंगूठे से मिलाकर दोनों हाथों की अंगुलियों को परस्पर बांधें।

२१. सिहाकान्तम्—दोनों हाथों को कानों के समीप करें।

२२. महाक्रान्तम—दोनों हाथों की अंगुलियों को कानों के समीप करें।

२३. मुद्गर—मुट्ठी बांधकर दाहिनी कोहनी बायीं हथेली पर रखें।

२४. पल्लव—दाहिने हाथ की अंगुलियों को मुख के सम्मुख हिलायें।

साधक को चाहिये शरीर के पैर से लेकर सिर तक चौबीस स्थानों में पहले गायत्री के अक्षरों का न्यास करे। तत् का पैर के अंगूठे में, "स" का गुल्फ (छुट्टी) में, "वि" का दोनों पिण्डलियों में, "तु" का घुटनों में, "र्व" का जांघों में, "र" का गुदों में, "ण्य" का अण्डकोष में, "म्" का कटिभाग में, "भ" का नाभि-मण्डल में, गों" का उदर में, "दे" का दोनों स्तनों में, "व" का हृदय में, "स्य" का दोनों हाथों में, "धी" का मुंह में, "म" का तालु में, "हि" का नासिका के अग्रभाग में, "धि" का दोनों नेत्रों में, "यो" का दोनों भौहों में, "यो" का ललाट में, "नः" का मुख के पूर्वभाग में, "प्रः" का मुख के दक्षिण भाग में, "चो" का मुख के पश्चिम भाग में, और "द" का मुख के उत्तर भाग में न्यास करे। फिर "यात्" का मस्तक में न्यास करके सर्वव्यापी स्वरूप से स्थित हो जाए। धर्मात्मा पुरुष इन अक्षरों का न्यास कर ब्रह्मा, विष्णु और शिव का स्वरूप हो जाता है।

अब साधकों के लिये पूजन और हवन में प्रयोग आने वाली सामग्री लिखी जा रही है। आशा है साधक वर्ग पूरा-पूरा लाभ उठायेंगे।

पूजन सामग्री

रोली (कुंकुम)	चन्दन
मौली (कलावा)	अबीर
गुलाल	सिंदूर
यज्ञोपवीत	धूप-अगरबत्ती

दीपक
माचिस
चावल
पान
इलायची
पंचमेवा (छुआरा, किसमिस, काजू, बादाम, मखाने)
पुष्प
पंच पल्लव
फल
दूध
घृत
शहद
तिल
हवन सामग्री
तुलसी दल
गोलागिरी
हलुआ
इत्र
रूई
कुशा (दर्भा)
सुपारी
लौंग
बताशे
नैवेद्य
पुष्पमाला
राई
दूब
दही
चीनी
कपूर
जौ
समिधा
चिरौंजी
खीर
वस्त्र

पूजन-पात्र

लकड़ी के पट्टे
थाली
लोटा
शंख
मजीरे
कटोरी
कलश
आसन
घण्टा
पंचपात्र

आचमनी
अर्घ्य
पोक्षणी
रेजगारी
वेदी हेतु मिट्टी

तिरबानी
प्रणीता
सुदा
गायत्री माता का चित्र और मंत्र
आम-पीपल-गूलर-बरगद
छोंकर की लकड़ियाँ

दुपट्टा

हवन के लिए औषधियाँ

कपूर
केशर
ताल पत्र
कपूरी कपछरी
चीनी
तगर
लाल चन्दन
ताल पर्णी
बच
चावल
अतीत
नागकेसर
पान
आंवला
बहेड़ा
तिल काला
पुरस्करमू ल

कस्तूरो
छर छबीला
देवदास
शीतल
अगर
इन्द्र जौ
सफेद चन्दन
वाय विडंग
शंखपुष्पी
इलायची
हरड़
सफेद मूसली
असगंध
दारू हल्दी
सोंठ
जौ
जावत्री

जायफल	केवड़ा
मजीठ	दालचीनी
खस	चिरायता
तेज पत्र	भोजपत्र
गोखरु	नागरमोथ
शतावर	पृष्ठपर्णी
ब्राही	गोरखमुण्डी
बादाम	अखरोट
लौंग लवंग	तोमरबीज
पदमाख	जटामासी
बाल छड़	चिड़ीचिड़ा
सौंफ	मुलहटी
गुलाब पुष्प	पितपापड़ा
किसमिस	गिरीगोला

उपासना विधि

गायत्री की साधना कोई सरल कार्य नहीं है। यह प्रभावशाली और अमोघ मंत्र है। जब इसकी इतनी शक्ति है, तो क्या सरलता से इसे प्राप्त किया जा सकता है। गायत्री की उपासना की विधि श्रमसाध्य है। इसमें समय लगता है, पर इसका फल चमत्कारी होता है। गायत्री की उपासना श्रेष्ठ उपासना है। इसकी विधियां अत्यन्त वैज्ञानिक है। यह साधक

को शांति देती है। साथ ही उसमें क्षमता भी देती है। वह प्रत्येक इच्छा को पूरा कर सकता है।

गायत्री उपासना की इस विधि का सावधानीपूर्वक अध्ययन कर नियमानुसार पालन करें। उपासना के लिए "न्यास" आवश्यक है। कहा है कि—न्यास किए बिना गायत्री के जप का फल नहीं मिलता है। अतः गायत्री-जप के पूर्व और गायत्री-जप के बाद न्यास करना परम आवश्यक है। यतियों को पञ्च मुद्रा और गृहस्थों को तत्व मुद्रा में न्यास करना आवश्यक है।

"न्यासमूलमिदं कर्म न्यासपूर्वं तु कारयेत्।
न्यासेन रहितं कर्म अंर्ध गृहणन्ति राक्षसाः॥"

गायत्री कर्म न्यासमूलक कहा गया है। अतः समस्त कर्म न्यासपूर्वक करना चाहिए। न्यास के रहित जो कर्म किया जाता है, उसका आधा फल दानव ले जाते हैं।

साधक को चाहिए हैं कि वह सावधान होकर सभी दूषित गन्धों का त्याग कर शुद्ध होकर गंगा का ध्यान करता नदी के तट पर पहुँच, वहां पर तीन बार आचमन कर तीन बार स्नान करना चाहिए। फिर जल के मध्य में अग्नि मण्डल का लेखन करें और बिन्दु के सहित प्रारम्भ और अन्त में प्रणव से समवन्ति माया वीज के साथ गायत्री को लिखें। प्रणव और गायत्री के मध्य में 'भूः-भुवः स्वः" इन तीनों व्याहृतियों को लिखना चाहिए। इसके अनन्तर जल से आचमन करके तीन बार प्राणायाम करें। इसके उपरान्त गायत्री के ध्यान के साथ संकल्प करना चाहिए। इसके पश्चात अपनी जो भी शाखा हो, उसी के अनुसार सबूतों को पढ़ता हुआ मार्जन करें। अघमर्षण मन्त्र का उच्चारण कर फिर पञ्चांग पूर्वक स्नान करें। जप

होम, तर्पण, अभिषेक और विप्रों का समाराधन इसके अनन्तर दोनों कान, नाक और आंखों को मंदकर और जलमें डुबकी लगाकर प्राण वायु को रोक गायत्री जप करें। इसके पश्चात् 'ॐ भूभुवः स्वः' इन तीन व्याहृतियों का उच्चारण करता हुआ स्नान करे। प्रत्येक स्नान करने के समय में शंख की मुद्रा से अननेन्द्रिय गुदा, शिर और स्तनों तक प्रोक्षण करे। फिर पानी से निकलकर गायत्री के मन्त्र का पाठ करें।

इसके बाद शुद्ध वस्त्रों के द्वारा अंगों को ढंककर ललाट पर तिलक लगावें। फिर 'ॐ आपो ज्योतीरसोअमृतम्"—इस मंत्र से शिखा का बन्धन करे। इसके उपरान्त जल में त्रिलोक की रचना कर उसके मध्य में "ह्रीं" लिखे तथा कोण के अन्त में प्रपद लिखे और दण्ड पर व्याहृति का लेखन करे। फिर जल से बाहर आकर प्रणव सहित 'ह्रीं' का अर्थात 'ॐ' ही का जप करे। जल का पान करे उससे मार्जन करना चाहिए। वहां पर संध्या करना वर्जित है।

विष्णु के चौबीस नामों के द्वारा उन-उन स्थानों पर न्यास कर, फिर आचमन करना चाहिए। केशव आदि चौबीस वर्णों का क्रम से गायत्री देवी के तीन पादों से तीन बार जल का पान करके नौ अंगुलियों से न्यास करे। सात व्याहृतियों वाले गायत्री मंत्र से शिर का आठ बार न्यास करे। दो प्रकार से आचमन तथा न्यास करे। तीसरा न्यास मल मंत्र के द्वारा क्रमशः उन-उन वर्णों से करे। जो पुरुष सन्ध्या के आरम्भ के समय में इसी विधि से तीन आचमनों को किया करते हैं, उनको सब प्रकार की सिद्धियां प्राप्त होती हैं। तंत्र साधकों के लिए यह अनिवार्य है। कर के अंगुष्ठ को पृथक रखकर शेष सभी अंगलियों को मिलाये हुए दाहिने कर से आचमन करना

चाहिए। आचमन में गौ के कान के समान बना ले। इसको ही ब्रह्मतीर्थ कहा जाता है, जिसमें अंगुठे को मुक्त कर कनिष्ठिकों में शेष आचमन किया जाता है।

सन्ध्या-वन्दना के आदि में मध्य में और अन्त क्रम से आचमन कर तीन बार करे। आचमन विलोम से भिन्न-भिन्न हुआ करते हैं। श्रुति-वर्णित आचमन यथा "ॐ माधवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ केशवाय नमः"—इन मंत्रों के द्वारा किये जाते हैं। स्मृति में कहे हुए आचमन—"ॐ नारायणाय नमः, ॐ केशवाय नमः, ॐ माधवाय नमः"—इन मंत्रों से किये जाते हैं। पुराणोक्त आचमन—"ॐ केशवाय नमः, नारायणाय नमः ॐ माधवाय नमः;" इन मंत्रों के द्वारा किये जाते हैं। इन्हीं केशव आदि भगवान के नामों द्वारा विलोम विधि से जल-पान कर आचमन करने चाहिए, फिर ॐ गोविन्दाय नमः इस मंत्र से और ॐ विष्णवे नमः—इस मंत्र से सुषुम्ना में न्यास करे "ॐ मधुसूदनाय नमः, ॐ आदित्याय नमः, ॐ शुद्धांशवे नमः, ॐ त्रिविक्रमाय नमः"—इन मंत्रों से आगे की ओर और "ॐ वामनाय नमः ॐ श्रीधराय नमः" इन मंत्रो से दोनों करों में न्यास करना चाहिए। साधक को अपने दोनों चरणों में "ॐ हृषीकेशाय नमः ॐ पद्मानाभाय नमः" – इन दोनों मंत्रों से न्यास से करना चाहिए। "ॐ दामोदराय नमः इस मंत्र से ब्रह्मरन्ध में अर्थात शिर के मध्य में और "ॐ संकर्षणाय नमः" इस मंत्र से नासिका में न्यास करे। नासिका के मध्य भाग में किम्बा नासिका के अन्तिम भाग में न्यास कर कहें। ॐ बासुदेवाय नमः इस मंत्र के द्वारा नासिका के दक्षिण भाग में न्यास करे और ॐ प्रद्युम्नाय नमः इस मंत्र से नासिका के वाम भाग में न्यास करना चाहिए। अनिरुद्धाय नमः दूसरे दहिने भाग में नासिका

में न्यास करे। ॐ पुरुषोतमाय नमः इस मंत्र से बांये नेत्र में और ॐ क्षधोक्षजाय नमः इस मंत्र से दाहिने लोचन में न्यास करें। ॐ नरसिहाय नमः इसके फिर बांये नेत्र में न्यास करना। चाहिए। ॐ अच्युताय नमः इस मंत्र से नाभि में न्यास करे और ॐ जनार्दनाय नम—इससे बांयी भुजा में तथा ॐ दरयेनमः इस मंत्र से दक्षिण भुजा में न्यास करे।

तीन बार प्राणायाम करने के पश्चात ही प्रातःकालीन संध्या करनी चाहिए। प्राण वायुओं का विस्तार करने को प्राणायाम कहा जाया करता है। यह प्राणायाम भी तीन प्रकार का होता है जिस प्राणायाम में नौ बार गायत्री को पढ़कर सम्पन्न किया जाता है, वह उत्तम कोटि का प्राणायाम होता है। जिसमें छः बार गायत्री पढ़कर पूरा किया जाए वह मध्यम श्रेणी का है। जो केवल तीन बार ही गायत्री पढ़कर ही किया जाता है, वह अधम श्रेणी का होता है जो सात व्याहृतियों से सम्पुष्टीकरण कर आरम्भ करे, स्वरोम पर्यन्त तीन-तीन गायत्री मंत्र पढ़कर ही प्रत्येक प्राणायाम को करना चाहिए। प्रणव के सहित तथा सात व्याहृतियों के साथ सम्पूर्ण गायत्री मंत्र का पूरक, कुम्भक, रेचक, के द्वारा जप करने को ही प्राणायाम कहा है। "ॐ भूः ॐ भुवः महः, तपः ॐ सत्यम" —यह सात व्याहृतियां हैं। प्रणव तो सभी व्याहृतियों के साथ लगाना चाहिए। भूः—वहां से प्रारम्भ करके "स्वरोम्" पर्यन्त गायत्री का तीन बार मानसिक उच्चारण कर प्राणायाम करे। सर्वप्रथम कुम्भक का समाश्रय ग्रहण करे। पूरक और रेचक को नहीं करना चाहिए। व्याहृतियों से आरम्भ करके फिर अन्त तक जो प्राणायाम किया जाता है वही कुम्भक है भूर्भुवः स्वः इनसे समन्वित सर्वदा व्याहृतियों से सम्पुटित इड़ा, सुषुम्ना और पिंगला—इन प्रमुख

तीन नाड़ियों से युक्त गायत्री मंत्र ही पूरक तथा रेचक से उत्तम प्राणायाम माना गया है। अधम प्राणायाम बारह मात्रा के काल तक हुआ करता है। जो माध्यम श्रेणी का प्राणायाम है वह चौबीस मात्रा के समय तक होता है। उत्तम प्राणायाम छत्तीस मात्रा के काल तक माना गया है। सर्वप्रथम पूरक होता है। जिसमें वायु को खींचा जाता है। फिर कुम्भक होता है, जिसमें वायु को भीतर ही रोकता है। इसके बाद रेचक होता है, जिसमें वायु का निस्सारण किया जाता है। कुम्भक अमोध माना गया है। श्वास-निःश्वास में संस्थित शब्द से रहित एवं निःशब्द इड़ा-पिंगला में रहने वाला अर्थात इन दोनों नाड़ियों से संयुक्त रेचक एव पूरक प्राणायाम कहा जाता है। इस श्वास की सम्पूर्ण सिद्धि तो पूर्ण घट के सदृश कुम्भक प्राणायाम ले ही हुआ करती है। प्राणायाम का आरम्भ में अभ्यास शब्द के साथ अर्थात शब्द की व्यंजना के सहित ही करना चाहिए। कारण यह है कि प्राणायाम निष्फल हो जाता है। इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियों के शब्द के व्यतिक्रम से जो प्राणायाम है, भगवान शंकर ने निष्फल बताया है, अतएव प्राणायाम की प्रक्रिया की विधि को जानने वाले विद्वानों ने कहा कि ब्रह्माचारी, गृहाश्रमी, वानप्रस्थी और सन्यासी सभी को चाहिए की प्राणायाम के काल में वायु का व्यतिक्रम न होने दे।

प्राणायाम करने वाला पुरुष अपनी पांचों अंगुलियों से नासिका के अग्रभाग को बन्द कर धीरे-धीरे किसी शब्द का श्रवण न करता हुआ वायु को रोक, प्राणायाम करे। नासिका के अगले भाग को एक अंगुलि से बन्दकर प्राण वायु को खींच अग्नि तत्व का उस समय ध्यान करना चाहिए। प्राणायाम के

समय भगवान शंकर का ही ध्यान करें और मानस पूजन में भी केवल कुमभक आवश्यक है। प्राणायाम के समय में पाँच प्रज्वलापूर्वक मानस मन करने ही से प्राणायाम करने का फल प्राप्त हुआ करता है। जो लोग पंच पूजा को छोड़कर प्राणायाम किया करते हैं, उनका प्राणायाम फल शून्य होता है लकार रकार और चकार अर्थात् ल, ह, व, र और व इन रूपों वाले वर्णो का ध्यान करना ही पंच पूजन है। अतएव प्राणायाम के समय में इन उपयुक्त पांच वर्णों की मन में ही की जाने वाली पूजा आवश्यक ही करनी चाहिए। प्राणायाम करने के समय से सिद्धासन, कुम्भक प्राणायाम और अपने नेत्रों को मूंद कर रखना ही तीन क्रियाओं का करना श्रेष्ठ होता है। प्राणों का निरोध करने के समय में सुखासन पर बैठना चाहिए और शरीर को एकदम सीधा रख, नेत्रों को बन्द करके प्राणायाम करना चाहिए जब प्राणायाम की समाप्ति करने का समय हो, तब कुम्भक से जो श्वास रोका गया है, उसको अपनी शक्ति के अनुसार धीरे से निकालना चाहिए। यह श्रेष्ठ विधि है। एकदम दीर्घ श्वास को छोड़ देना हानिप्रद है। इस प्रकार प्राणायाम का अभ्यास करें।

गायत्री मंत्र में तीन पाद हैं। प्रत्येक पाद के आरम्भ में प्रणव को लगा कर इससे समन्वित करना चाहिए। इस तरह से तीन बार अपने शिर पर अभिचिंचन करे। इसके अनन्तर "आपो हिष्टमयी भुवः" इन मंत्रों से अपने शिर पर जल छोड़ना चाहिए। ये मार्जन करने के नौ मंत्र हैं और इनके प्रत्येक मंत्र में आठ-आठ अक्षर होते हैं। वे मंत्र निम्न प्रकार के हैं— 1. आपोहिष्ठामयी भुवः, २. तान ऊर्जे दधात नः, ३. महेरणाय चक्षसे, ४. मोह शिवनमो रुद्रः, ५. तस्य भाजतनेयः, ६. उशती रिवः,

मातरः, ७. तस्माअवरंग मामवः, ८. यस्य क्षायाय जिन्वथ, ९. आयोजनयधाचभः। इन मंत्रों में केवल पद के आदि से ही मार्जन कभी न करे। प्रत्येक मंत्र के प्रारम्भ में मार्जन करे। इसी विधि से मार्जन करने से अश्वमेघ यज्ञ करने का फल प्राप्त हुआ करता—"यस्य क्षयाय जिन्वथ" "आयोजनयथा च नः" इन दो मंत्रों से भूमि पर जल छोड़ना चाहिए और अन्य ऋचाओं से अपने शरीर पर मार्जन करे। त्रिकाल संध्या में तीनों कालों में आचमन करने के भिन्न-भिन्न मंत्र होते हैं। प्रातःकाल जो संध्या की जाती है। उस समय में "सूर्यश्च मामन्युश्च" इत्यादि मंत्र से आचमन करे। सायंकाल में "अग्निश्च मा मन्युश्च" इत्यादि ऋचा से आचमन करना चाहिए। मध्याहन काल "आपः पुनन्तु पथिवीम्" इत्यादि मंत्र से आचमन करे। फिर "आपोहिष्ठा" इत्यादि नौ पादों वाले मंत्र से दो बार आचमन कर "हिरण्य-वर्णा" तथा "वंधि" इन मंत्रों से दो-दो बार आचमन करे। इनमें प्रत्येक मंत्र के "क्लीं" यह पद तथा अन्त में प्रणव लगाकर पाठ करते हुए ही मार्जन करना चाहिए। "आपोहिष्ठा" इत्यादि लेकर "आपोजन तथा च नः इन दो ऋचाओं से कायिक, वाचिक, मानसिक, सात्विक, राजस, तामस, एवं जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति में किये गये नौ प्रकार के पापों से विमुक्ति से हो जाया करती है। "दधि" इत्यादि मंत्र दो बार एवं "हिरण्यादि" मंत्र से चार बार मार्जन करने का फल यह होता है कि मानव के काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य इन स्वाभाविक षड वर्गों का विनाश हो जाया करता है। सन्ध्या वन्दन में कतिपय बातें मुख्य होती हैं। संकल्प, सूर्यदेव को अर्घ्य जप आदि ही परम मुख्य हैं। उस समय सूर्य को तीन बार अर्घ्य देना चाहिए। सूर्य उपासना करने के योग्य देवता है। प्रातःकाल और सायंकाल

में अर्घ्य देने का विधान एकता है। केवल मध्याह्न सन्ध्या में विधि पृथक् होती है।

मध्यान्हकाल में सूर्य के साधिभूत केवल एक ही अर्घ्य पर्याप्त है तथा प्रातःकाल और सायंकाल में नक्षत्रों के साक्षिभूत तीन-तीन बार अर्घ्य समर्पित करना चाहिए। इन तीनों अर्घ्यों में पहला तो सूर्यदेव के शत्रु राहु के शस्त्रों और अस्त्रों के विनाश के लिए दिया जाता है, दूसरा अर्घ्य उसके ही विनाश के लिए दिया जाता है, और तीसरा अर्घ्य असुरों के वध करने के लिए दिया जाता है। तीसरे अर्घ्य से राहु द्वारा आयी हुई विपत्तियों का भी नाश हुआ करता है।

जो साधक केवल गायत्री मंत्र से सूर्य को अर्घ्य दिया करता है, वह विन्दु संज्ञा वाला होता है और वह किसी भी कर्म का अधिकारी नहीं होता है। मंत्र की यही विधि है कि जो गायत्री का बीज है वही प्रणव कहा जाता है। देह दण्ड है और गायत्री कवच इसकी संज्ञा, पद और मंत्र सभी अंग माने गये हैं। गायत्री मंत्र में व्याप्त मंत्रों का आठ बार प्रयोग करना होता है। इन छः मंत्रों का ज्ञान प्राप्त कर "सूर्याय नमः" इस मंत्र से अर्घ्य देना चाहिए। ऐसा ही विधान अर्घ्य का बताया गया है कि मध्यान्हकाल में एक अर्घ्य होता है। दूसरा जो अर्घ्य है वह प्रायश्चित संज्ञा वाला होता है। इस रीति से ही अर्घ्य होते हैं। सायंकाल की सन्ध्या करने में तीन अर्घ्य दिये जाते हैं। चौथा जो अर्घ्य दिया जाता है वह प्रायश्चित संज्ञा वाला ही दिया जाया करता है। इस तरह से साधक को प्रातःकाल में तीन, मध्यान्ह में दो और सायंकाल की सन्ध्या में चार बार अर्घ्य देना चाहिए। प्रथम अर्घ्य का नाम 'ब्रह्मशीर्ष' है। दूसरे का नाम 'ब्रह्म दण्ड' है। तीसरे का नाम 'ब्रह्मशास्त्र' है। अर्घ्य दान

करने के समय में जब प्रथम अर्घ्य दे तब इदं ब्रह्मदण्डम्—यह तथा तृतीय अर्घ्य में इदं ब्रह्मशीर्षम—यह कहकर ही क्रम से हाथ में जल लेना चाहिए। इस रीति से गायत्री मंत्र से अभिमंत्रित करके ही तीन बार अर्घ्य असुर गणों के वध के लिए अर्घ्य देना चाहिए। पहिला अर्घ्य अखण्ड स्वरूप शिर से स्पर्श करते हुए ही एक अंजलि जल की भरकर छोड़नी चाहिए।

अर्घ्य से सूर्य देव के बाहर की सुरक्षा और राक्षस का नाश हुआ करता है। असुरगणों के वध के निमित प्रायश्चित स्वरूप दूसरा अर्घ्य अपने दाहिने भाग की ओर भूमि पर छोड़ना चाहिए। ऐसा करने से अर्घ्य दाता मनुष्य सभी तरह के पापों से छुटकारा पा जाता है। गायत्री मंत्र के साथ—"असौ आदित्यो ब्रह्म"—ऐसा उच्चारण कर अर्घ्य दें। ऐसे अर्घ्य जब दश सहस्त्र पूर्ण हो जाते हैं, तब मानव के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। 'हंस-हंस वृहत्यन्त' मंत्र को पढ़कर शिर से स्पर्श करते हुए अर्घ्य दान सम्मुख में ही करना चाहिए। इसी को अस्त्र दण्ड कहते हैं। उपमंत्र का उच्चारण करते हुए शिर से संयुक्त कर एक अर्घ्य मध्यान्ह के समय में देना चाहिए। राक्षसी मुद्रा से दिया हुआ अर्घ्य निषिद होता है। वह अर्घ्य रुधिर के समान हो जाया करता है। तर्जनी अंगुलि और अंगूठा को युक्त कर देने से राक्षसी मुद्रा हो जाती है। अर्घ्य दान में पूर्ण ध्यान रख कर ही अर्घ्य देना चाहिए। ऐसे को रौरव नरक प्राप्त होता है। जिस अर्घ्य में अगुष्ठ की छाया पड़ा करती है, वह देव मुद्रा कही जाती है। देव मुद्रा के देने पर मानव सभी प्रकार के पापों से मुक्त हो जाया करता है।

गायत्री का ध्यान तथा न्यास करने के पश्चात् प्रणव ॐ—इसका जप करना चाहिए। इस ओंकार के जप के अनन्तर

अपने नित्य कर्म का जो भी अनुष्ठान हो, उसे करना चाहिए। भूमि पर मंत्र का लेखन कर उसके ऊपर बिन्दु के साथ बीज मंत्र लिखना चाहिए। अग्नि तत्व के भीतर बीज को लिखें। इसके उपरान्त चार हाथ परिणाम वाली एक परम सुन्दर एवं ठोस वेदी की रचना करनी चाहिए। उस वेदी पर बैठकर ही गायत्री मंत्र जप करे। सबसे पूर्व आत्मा की शुद्धि कर फिर भूत शुद्धि करनी चाहिए। इसके उपरान्त प्रणव से समन्वित महा व्याहृतियों का उच्चारण कर प्लवन-क्रिया करें।

प्राणायाम करने के पश्चात भीतरी एवं बाहरी शुद्धि करनी चाहिए। इसके अनन्तर अंगन्यास और करन्यास करना चाहिए। मुख में छन्द और सप्तर्षियों का, हृदय में देवगणों का, गुह्य स्थान में बीज का न्यास करें। आधार में शक्ति का, यम चरणों में कीलक का उच्चारण कर न्यास करना चाहिए। इस रीति से ऋषि आदि का न्यास कर आवाहन् आदि करे और मुद्राओं को प्रदर्शित करे। प्रातःकाल के समय में साधक अंग-प्रत्यंग में वरदा गायत्री देवी का ध्यान करे, मध्यान्ह में सावित्री देवी का तथा सायंकाल में सरस्वती का ध्यान करें। साधक अपने दोनों हाथों को सीधा रखकर आवाहन करे। आवाहन के काल में क्रम से ऋषि देवता एवं छन्द का उच्चारण करना नितान्त आवश्यक होता है। गायत्री मूलाधार में निवास करती है, तथा मणिपूरक चक्र में सावित्री देवी और द्वादशद्वार चक्र में सरस्वती का निवास है। इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना—इन तीन प्रमुख नाड़ियों में छन्दों का निवास है। मूर्धा में ऋषियों का निवास है। दस तरह से क्रमानुसार ही देवता, ऋषि और छन्द के साथ आवाहन करना चाहिए। इसी विधि से उत्तम शिखरे भूम्यां जाता पर्वत मूर्धनि। गायत्री छन्दां माताश्च्छ

देवी तथा सुखम—अर्थात है छन्दों की माता गायत्री देवि आप उत्तर शिखर पर भूमि में पर्वत की चोटी पर विद्यमान रहा करती है। अब आप सुखपूर्वक यहाँ से गमन कीजिए। इस विधि से गायत्री देवी का विसर्जन करना चाहिए। फिर गायत्री का ध्यान और जप करना चाहिए। बिना सविधि आवाहन के और ध्यान के गायत्री का जप निष्फल ही है। नित्य प्रातःकाल स्नान कर प्राणायाम, अगन्यास और ध्यान कर इस सबके उपरान्त चौबीस अक्षरों से युक्त गायत्री मंत्र का जप करना चाहिये।

स्नान के उपरान्त चार प्राणायाम, चार ध्यान चार अंगन्यास और चार करन्यास कर ही जप करे। समस्त वेदों की जननी गायत्री के प्रथम तीन व्याहृतियों का 'भूः भुवः स्वः 'उच्चारण कर षड्गन्यास करना चाहिए। फिर करन्यास करे। गायत्री से प्रणव अर्थात् अकार, उकार और मकार का प्रयोग ओ३म् में करें। पल्लव विधि यही होती है कि अनुलोम गायत्री के तीन-तीन अक्षरों में चौबीस वर्णों का न्यास करे और अनुलोम गायत्री के चार-चार अक्षरों से करन्यास करना चाहिए। तथा न्यास के आदि एवं अन्त में प्रणव अवश्य ही रहे। चतुर्थ पाद का न्यास न करें। तीन व्याहृतियों का उच्चारण कर गायत्री के चार-चार अक्षरों का न्यास करना चाहिए। फिर व्याहृतियों का उच्चारण करे। त्रिपदा गायत्री का चार-चार अक्षरों में छै भाग करना चाहिए। फिर प्रत्येक में पाद-पाद के ही अनुसार प्रणव न्यास करे। अंगुष्ठ आदि क्रमों के चार-चार वर्णों वाली, गायत्री के छै भागों से न्यास करें। विलोम क्रम से हृदय आदि का न्यास साधना करने वाले को प्रमुख पाँच बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। ध्यान, मुद्रा, नमस्कार, गुरु

मंत्र और अपनी सिद्धि के साथ संयोग। प्रातःकाल केवल गायत्री का, मध्यान्ह में व्याहृतियों से युक्त तथा सायंकाल में ॐ से युक्त कर गायत्री का जप करे। प्रत्येक पाद के आदि में ॐ इस बीज मंत्र का उच्चारण जप करना चाहिए। गायत्री के तीन पादों का उच्चारण कर पुनः उसका उल्टा आचरण करे। आदि अन्त में ॐ शंभू का भी उच्चारण करना आवश्यक होता है। सायं बेला में एक बार गायत्री का उच्चारण कर पनः उसका विलोम जप से उच्चारण करें। ऐसे ही विधान से जप करने से जप साधक पुरुष के समस्त कार्यों की सिद्धि हो जाया करती है। तत् के तकार से लेकर यत तक का उच्चारण गायत्री का अनुलोम उच्चारण कहा जाता है। यात् से आरम्भ कर तत् पर्यन्त उच्चारण करना गायत्री का विलोम, उच्चारण कहा जाता है। चौथे पाद के बिना ही प्रातःकाल गायत्री मंत्र का जप करें। गायत्री के चौबीस अक्षरों में छै-छै अक्षरों की गणना से चार पाद हुआ करते हैं। इसमें चतुर्थपाद—योनः प्रचोदयात्—यही होता है। भर्गो के मकार से आरम्भ कर धमहि के हि इस वर्ण तक को गायत्री मंत्र का मध्यपाद कहा जाया करता है। अर्घ्य दान जब किया जाता है, उस समय तीनों उक्त पादों का भली भांति उच्चारण कर अर्घ्य अर्पित करना चाहिए। "धियो" के धकार से लेकर यात के मकार पर्यन्त तीसरा पाद होता है। इस रीति से पहले-दूसरे और तीसरे पाद के उच्चारण के साथ गायत्री मंत्र का जप करना चाहिए।

त्रिकाल प्रातः मध्यान्ह और सायंकाल के भेदों से तीन प्रकार का होता है। इन तीनों कालों में तीनों पादों से समन्वित गायत्री मंत्र का जप करना चाहिए। इसी रीति से ऊपर में बतलाए हुए विधान के अनुसार अनुलोभ एवं प्रतिलोभ के क्रम

से गायत्री का जप करने से सिद्धि का लाभ हो जाया करता है।

चौबीस वर्णों वाली गायत्री का केवल अनुलोम जप करके भी प्रतिलोम गायत्री जप न करने पर इस जप का पूरा-पूरा फल प्राप्त नहीं होता है। गायत्री मंत्र के क्रम से चार पाद होते हैं। तत्सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य धीमहि धियो नः प्रचोदयात्' इसमें जो चार पाद हैं, इनका एक बार अनुलोम जप तथा यात् से आरम्भ कर क्रम से प्रत्येक पाद का प्रतिलोम जप करने से साधक को सांसारिक सुखों का उपभोग और सांसारिक भीषण वन्धनों से अन्त में छुटकारा हुआ करते है।

गायत्री त्रिपदा होती है—इसको नौ बार सम्पुटित कर गायत्री मंत्र का पारायण करे। इस रीति से किया गया एक बार का जप भी करोड़ों गुना फल देने वाला होता है। प्रातः मध्यान्ह का और सायं समय में त्रिकाल में इसी विधि से किया हुआ जप अत्यन्त फल प्रदान करने वाला हुआ करता है। गायत्री का जप अवश्य ही करना चाहिए। प्रतिदिन कम से कम १०८ बार जप करे। अगर इतना न कर सके तो केवल १०८ बार करें। यह भी न कर सके तो २८ बार और कम से कम १० बार तो अवश्य ही गायत्री का जाप करना चाहिए। जप काल में "वरेण्यं विरंतं" कहकर जप का पारायण करे।

ऐसा न करने से गायत्री के जप का फल नष्ट होता है। गायत्री साधना में प्राणायाम अवश्यक है। साधक के लिए उनको इस प्रकार करने का विधान वर्णित है।

प्राणायाम—

"ॐ भः ॐ भुवः ॐ स्व ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यं

ॐ तत्सवितुर्वरेयं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो योनः प्रचोदयात्
आपो ज्योति रसोअमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्।"

त्रिदेव अर्थात ब्रह्मा, विष्णु, महेश के द्वारा बन्धमाना तथा समस्त लोकों को पवित्र कर देने वाली वेद जननी गायत्री के चरणों में नमस्कार कर मैं गायत्री की पद्धति को लिपिबद्ध कर रहा हूं। साधना करने वाले साधक को चाहिए कि प्रातःकाल में ब्रह्म मुहूर्त में शैय्या का त्याग कर शास्त्र में वर्णित रीति के हीं अनुसार आदि क्रिया पूर्ण कर नदी आदि किसी जलाशय में स्नान और फिर तीन बार प्राणायाम कर सूर्य देव के अर्घ्य दान तक संध्या की उपासना करे। प्राणायाम करने के समय में ॐ भूः—ॐ भुवः—ॐ स्वः—इनसे आरम्भ कर ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम तक मंत्र का उच्चारण करना चाहिए।

प्रणवस्य ब्रह्माऋषिः गायत्रीच्छन्दः, परमात्मादेवता शरीर शुद्धयर्थं जपे विनियोग :

ब्रह्मणो नमः शिरसि। गायत्रींच्छन्दसे नमः मुखे। परमातम देवताय नमः हृदये। करसम्पुटं कृत्वा समस्तदुरितक्षयार्थं न्यासं कमिष्ये।

साधक दक्षिणाकर में जल लेकर "प्रणवस्य ऋषिः आरम्भ कर जपेविनियोगः तक मंत्र को पढ़कर उस जल को भूमि पर छोड़ दे। फिर ब्रह्माणे नमः शिरसि—इस मंत्र का उच्चारण करते हुए शिर को स्पर्श करना चाहिए। गायत्रीच्छन्द नमः मुखे—इस मंत्र से मुख का स्पर्श करे। इसके उपरान्त दोनों हाथों को जोड़कर समस्त दुरित क्षयार्थ न्यासं करिष्ये को बोलकर संकल्प करना चाहिए।

व्यहृतीनाँ जमदग्नि भरद्वाजाऽत्रि-गौतम-काश्यप-विश्वा-

मित्र वसिष्ठादि-ऋषिभ्यो नमः शिरसि । सप्तचिरनिल-वितृ-प्रजापति-वरुणेन्द्र-विश्वेदेवताभ्यो नमः मुखे । गायत्र्युष्णि-गनुष्टुब्बृहती-पंक्ति-त्रिष्टृव्-जगतीच्छन्दोभ्यो नमः हृदि एवंकर सम्पुटं कृत्वा समस्तदुरितक्षयार्थे गायत्रीन्यासः ।

गायत्र्या विश्वामित्रऋषये नमः शिरसि गायत्रीच्छन्द से नमः मुखे । परमात्मदेवतायै नमः हृदये ।

इसके अनन्तर "व्याहृतीनाँ" जमदग्नि" यहाँ से आरम्भ करके ऋषिभ्यो नमः शिरसि पर्यन्त पढ़कर शिर का स्पर्श करे। सप्ताचिरनिल से आरम्भ कर देवताभ्यो नमः मुखे नमः मंत्र का उच्चारण करें मुख का स्पर्श करे । गायत्र्युष्णि-गनुष्टुप से आरम्भ कर छन्दाभ्यो नमः हृदि तक पढ़कर हृदय का स्पर्श करना चाहिए । तब अपने हाथों को जोड़कर समस्त के लिए पाप-नाश गायत्री न्यासः—गायत्री विश्वामित्र ऋषये नमः शिरसि इस मंत्र का उच्चारण का शिर का स्पर्श करे। परमात्म देवतायै नमः हृदये इस मंत्र का उच्चारण कर हृदय को स्पर्श करना चाहिए ।

व्याहृतिन्यास :

ओ३म् भूः नमः हृदय । ओ३म् भुवः नमः मुखे । ओ३म् स्वः नमदक्षाँसे । ओ३म् महः वामाँसे । ओ३म् नमः दक्षिणोरो । ओ३म् तपः नमः वामोरौ । ओ३म् सत्यं नमः जठरे । इति व्याहृतिन्यासः ।

'ओ३म् भूः नमः हृदये' इसमें हृदय का स्पर्श करना चाहिए। 'ओ३म् भूः नमः मुखे' इसमें मुख का, 'ओ३म् नमः स्वः नमः दक्षांसे' इसमें दाहिने कन्धे का, 'ओ३म् महः नमः वामां यै' ।

ओ३म् तत् नमः पैरों के दो टखनों से नीचे के भाग का

स्पर्श, ओ३म् सं नमः पाद पार्श्वयोः चरणों के दोनों भागों का स्पर्श, ओ३म् विं नमः जान्वोः इससे दोनों घुटनों का स्पर्श करे, ओ३म् तु नमः पाद मुखयोः पैरों के अग्रभागों का स्पर्श ओ३म् वं नमः जंघयो दोनों जांघों का स्पर्श, ओ३म् रं नमः नाभौ नाभि का स्पर्श, ओ३म् णि नमः हृदये हृदय का स्पर्श, ओ३म् यं नमः कण्ठे कण्ठ का स्पर्श, ओ३म् नमः हस्तयोः दोनों हाथों का स्पर्श, ओ३म् गौं नमः मणिबन्धयोः दोनों कलाइयों का स्पर्श, ओ३म् दें नमः कर्पूयोः दोनों हाथों की कुहनियों का स्पर्श करे, ओ३म् वं नमः बाहुमूलयों दोनों बाहु मूलों का स्पर्श, ओ३म् स्यं नमः आस्ये मुख का स्पर्श, ओ३म् धी नमः नासापुटयोः दोनों नासिका के छिद्रों का स्पर्श, ओ३म् मं नमः कपोलयोः दोनों कपोलों का स्पर्श, ओ३म् हिं नमः नेत्रयोः दोनों नेत्रों का स्पर्श, "ओ३म् धिं नमः कर्णयोः दोनों कानों का स्पर्श, ओ३म् यों नमः भूमध्ये दोनों भौहों के मध्य में स्पर्श, ओ३म् यों नमः मस्तकें मस्तक का स्पर्श, ओ३म् नं नमः पश्चिम वक्त्रे मुख के पश्चिम भाग का ध्पर्श, ओ३म् प्रं नमः उत्तर वक्त्रे उत्तर भाग के मुख का स्पर्श, ओ३म् चों नमः दक्षिणे वक्त्रे मुख के दक्षिण भाग का स्पर्श, ओ३म् द नमः पूर्व वक्त्रे मुख के पूर्व भाग का स्पर्श, ओ३म् यात्: ऊर्ध्व वक्त्र मुख के ऊप्रर वाले भाग का स्पर्श करना चाहिए।

पदन्यास :

ओ३म् तत् नमः शिरसि। ओ३म् सवितुर्नमः भ्रुवोर्मध्ये। ओ३म् वरेण्यं नमः नेत्रयो। औ३म् भर्गः नमः मुखे। देवस्य नमः जठरे। ओ३म् धीमहि नमः हृदये। ओ३म् धियः नमः नाभौ। ओ३म् यः नमःगुह्यं। ओ३म् नमः जान्वोः ओ३म् प्रचोदयात नमः पादयोः। ओ३म् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भुर्भुवः स्वरोमिति शिरसि। इति पदन्यासः।

ओ३म् तत् नमः शिरसि शिर का स्पर्श, ओ३म् तत्सवितुर्नमः भौहों के मध्य का स्पर्श, ओ३म् वरेण्यं नमः दोनों नेत्रों का, ॐ भर्ग नमः मुख का, ॐ देवस्य नमः उदर का ॐ धीमहि नमः हृदय का, ॐ धिय, अनः नाभि का, ॐ यः नमः गुहा का, ॐ नः नमः दोनों जानुओं का, ॐ प्रचोदयात नमः दोनों चरणों का, ॐ आपोज्योतीरसोअमृत ब्रह्म भुर्भुवः स्वरोम् पुनः शिर का स्पर्श करना चाहिए।

पादन्यास :

ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं नमः नाभ्यादि-पादे पातम्। ॐ भर्गो देवस्य धीमहि नमः हृदयादि नाभ्यन्तम्। ॐ धियो यो नः प्रचोदयात् नमः मूर्धादि हृदयान्तम्। ॐ परोरजसे सावदोम् इति मर्घ्नि विन्यस्य।

ॐ तत्सवितुर्वरेण्य नमः नाभि से लेकर पैर तक के शरीर के भाग स्पर्श करे। ॐ भर्गो देवस्य धीमहि नमः इससे हृदय से नाभि तक तथा ॐ धियो यो न प्रचोदयात् नमः शिर से आरंभ कर हृदय तक स्पर्श करे। ॐ परोरंजसे सावहोम् पुनः शिर का स्पर्श करना चाहिए।

षडंगन्यास :

ॐ ब्रह्मणे हृदयायः। ॐ विष्णवे शिरसे स्वाहा। ॐ रुद्राय शिखाये वौषट्। ॐ ईश्वराय कवचाय हुम्। ॐ सदा-शिवाय नेत्रत्रयाय वोषट् ॐ सर्वात्मने अस्त्राय फट्। इति मन्त्रणीध्वऽवस्तालत्रयं कृत्वा त्रोटिकमुद्रया दिग्बन्धनं विद्या मूलेन व्यादकं कर्यात। इति षडगंम।

ॐ ब्रह्मणे हृदयाय नमः पढ़कर हथेली से हृदय का स्पर्श करे। ॐ विष्णवे शिरसे स्वाहा चारों अंगुलियों के द्वारा

अंगुलियों के अग्रभाग से मस्तक स्पर्श, ॐ रुद्राय शिखायै वषट्ट पढ़कर शिखा में अंग से स्पर्श, ॐ ईश्वराये कवचाय हूम् दाहिनी कनिष्ठा के मूल से बांयी हाथ की कनिष्ठा के मूल से बांयी भुजा का और बांये हाथ की कनिष्ठा के मूल से दाहिनी भुजा का स्पर्श करे। ॐ सदा शिवाय नेत्र-त्रयायवौषट् मध्यमा एवं तर्जनी अंगुली से तीनों नेत्रों का स्पर्श सर्वात्मने अस्त्राय फट् बांये हाथ की हथेली पर दाहिने हाथ की मध्यमा तथा तर्जनी से तीन बार ताली बजाये। इसी रीति से तीन-तीन बार हृदय आदि का स्पर्श करता हुआ चारों चुटकियां से चारों ओर दिग्बंधन कर व्यापक मुद्रा प्रदर्शित करे। दोनों हाथों को उत्ताल करने की विधि को व्यापक मुद्रा कहा जाता है।

लयांशन्यास :

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः, कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं, टं ठं डं ढं णं, तं थं दं धं नं, पं फं बं भं मं, यं रं लं वं शं षं सं हं लं । ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं ओं ऐं ऐं लृं ॡं ऋं ॠं ऊं उं ईं इं आं अं त्यादचोप्र न योधि हिमधी स्यवदे गोभिष्यरेर्वतुवित्सत स्वः स्वर्भुवः भूः ॐइति हृदयादिमुखांतम्। एवमेव हृदयादि केशान्तम्। तर्थव व्याप्य। इति लयांगन्यासः।

ॐ अ आं इं ई से आरम्भ कर—स्वः भुवः भूः ॐ पर्यन्त उच्चारण कर प्रथम बार हृदय से मुख तक और फिर दूसरी बार पढ़कर हृदय से केश तक शरीर के भाग का स्पर्श करना चाहिए।

पीठन्यास :

ॐ मं मण्डूकाय नमः मूलाधारे। ॐ कं कालाग्निरुद्राय नमः स्वाधिष्ठाने। ॐ मं मलप्रकृत्यै नमः नाभौ। ॐ आधारशक्तये नमः हृम्ये। कः कूर्माय नमः। वं वंदाय नमः। धं धारिण्यै नमः। कं सुधासिंधवे नमः। रं रत्नद्वीपाय नमः मं मणिमण्डपाय नमः। कं कल्पवृक्षाय नमः। स्वं स्वर्णवेदिकायै नमः। रं रत्नसिंहासनाय दक्ष्यसे। धं नमः वामांसे।

ज्ञानाय नमः वामोरौ। वं वैराग्याय नमः दक्षोरो। एं ऐश्वर्याय नमः मुखे। अं अत्रराग्याय नमः नाभौ। अ अनानायै नमः दक्ष पार्श्वे। अं अग्राग्याय नमः नाभौ। अनैश्वयांय नमः हृदये अं अनन्ताय नमः उपय्युर्युपरि। इति विन्यसेत्।

अं 'अम्बुजाय नमः। सं सवन्नालय नमः सर्वतत्वात्मकाय पद्माय नमः। प्रं प्रकृतिमयपत्रैभ्यो नमः। वि विकारमयकेशरेभ्यो नमः। पं पञ्चाशद्वर्णकर्णिकायै नमः। वं द्वादशकलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः। वं षोडशकलात्मने चन्द्रमण्डलाय नमः। सं सत्वात्मने नमः। रं रजसे नमः तं तमसे नमः। आं आत्मने नमः। अं अन्तरात्मने नमः। पं परमात्मने नमः। हां दीप्तायै नमः। ह्रीं सूक्ष्मायै नमः ह्रीं विद्युवायै नमःपीठध्ये सर्वतोमुख्यै नमः। तदुपरि नित्य पूजाचक्रं विधाय। ॐ ब्रह्म विष्णुरुद्राऽम्बिकात्मकाय सौरपीठात्मने नमः। इति पीठन्यासः।

मूलेन प्राणायामत्रायं व्यापकं च कृत्वा ध्यायेत्।
मुक्ता-विद्रुम-नील-धवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै ॥
युक्तामिन्दु-निबद्ध रत्नमुकुटां तत्वार्थ-वर्णात्मिकाम्।
गायत्रीं वरदा-ऽकुशां शुभ्रं कपालं गुणं।
शंखं चक्रमथार-बिन्दुयुगलं हस्तंर्वहन्तीं भजे॥
इति ध्यात्वा बहि पूजोक्तरीत्यः देवौ सौवर्णीय सम्पूज्य

गन्ध-पुष्प-धूप-दीप-नैवेद्य-ताम्बुलाद्यु प्रचारान् प्रकल्प्य किंचिज्जपित्वा।

ॐ मडूंकाय नमः से आरम्भ कर ॐ ब्रह्मा-विष्णु रुद्रा विकात्मकाय सौरपीठात्मने नमः प्रत्येक मंत्र तक के द्वारा गायत्री के आसन पर अक्षतों को गिराना चाहिए। इसके अनन्तर पूजा चक्र की रचना कर उसे ऊपर बानना चाहिए ॐ ब्रह्माविष्णु रुद्राम्बिकात्मकाय से आरम्भ कर पीठात्मने नमः पर्यन्त पढ़कर पूजा चक्र पर अक्षतों को गिराए। "मुक्ता विद्रुम" श्कोल का पाठ कर गायत्री का ध्यान नारियों के समुचित और परम शोभन मुक्ता विद्रुम, स्वर्ण, नील एवं परम स्वच्छ कान्ति से युक्त मुखों से समन्वितचन्द्र एवं विविध रत्नों से भूषित मुकुट की धारण करने वाली—वरदान, अभयदान, अंकुश-कशा-शुभ्र कप-पल-यज्ञोपवीत-शंख-चक्र और दो कमलों को अपने करों में धारणा करने वाली गायत्री महादेवी का हम ध्यान करते हैं। इस रीति से ध्यान कर बाहिर पूजा चक्र में स्थापित गायत्री की प्रतिमा के आगे गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल आदि अर्चन की सामग्री को एकत्रित कर गायत्री मंत्र का जप करता हुआ उक्त पूजनोपचारों के द्वारा गायत्री अर्चन करे। इस बाहिरी पूजा के पहिले गायत्री का मानस-पूजन करना चाहिए।

मानसपूजा :

स्वागत देवेदेवेशि ऽ सन्निधौ मे महेश्वरि !
गृहाण मानसी पूजां यथार्थपरिभाविताम् ॥

दशधा मूलं जपित्वा जपं देव्या वामकरे समर्प्य मनसा पुष्पाञ्जलिं दत्वा क्षणं तदात्मकं विभाव्य वरदा-ऽभय-ऽङ्कुश-

कशा-कपालगुण-शंख-चक्राभ-योन्यादिमुद्राः प्रदर्शयेत्। इति मानसी पूजा।

अथ बहिःपूजार्थमनुज्ञाप्य बहिःपूजां कुर्यात। स्ववामे अस्त्रक्षालितत्रिपादिकां निधाय तदुपरि अस्त्रक्षालितं कलशं निधाय शुद्धतोयं मलेनापूर्य्यमुलेनाऽष्कृत्वोऽभिमन्त्र्य जातवेदसे इत्यृचा त्र्यम्बकमिति ऋचा गायत्र्या च सकृदभिमत्र्य गन्ध-पुष्पाभ्यां पूजयेत्। इति कलशसंस्थापनम्।

आप कृपा कर मेरी सन्निधि में विराजमान होकर मेरी पूजा को ग्रहण कीजिये। गायत्री मंत्र का दस बार जप कर उस जप को मानसिक रूप से ही गायत्री देवी के नाम पर समर्पित कर पुष्पांजलि अर्पित करें। अपने आपको गायत्री के स्वरूप समझ वरद और अभय मुद्रा, अंकुश, कशा, कपाल, गुण, शंख, चक्र और योनि प्रभृति मुद्राओं को प्रदर्शित करना चाहिए। इसके उपरान्त मानसी पूजा के द्वारा बाहर की पूजा कर शंख के द्वारा त्रिपदिका बनाकर ऊपर कलश रक्खे और गायत्री मंत्र से शुद्ध जप पूर्ण कर आठ बार मूल मंत्र गायत्री से उसका अभिमंत्रण कर फिर जात वेद-से त्रयम्बक और गायत्री मंत्र से एक बार उसको अभिमन्त्रित करे। तब कलश का अर्चन करे।

अर्घ्यस्थापना विधि :

तत्राऽस्त्रक्षालितं ताम्रपात्रं निधाय मूलेनाऽऽपूर्य, मूलेना दष्टवारं सम्मन्त्र्य गन्ध-पुष्पाभ्यां पूजयेत्। इति सामान्यार्घ्य स्थापनविधिः।

पीठात्मनोर्मध्ये चन्दनेन कनिष्ठिकया त्रिकोणं षट्कोणं च कृत्वाऽग्नये हृदयाय नमः। ईशानाय शिरसे स्वाहा। निर्ऋतये शिखायै वषट्। यायवे कवचाय हुम्। अग्नयेऽन्त्राय फट्।

नेत्रत्रयाय वोषट्। पूर्वेस्त्राय फट्। सामान्यार्घ्यजलेन प्रोक्ष्य चन्दनेन पूजयेत्। त्रिकोणे आधारं स्थापयामि। आधारशक्तिं स्थापयामि। पृथिवीद्वीपं स्थापयामि।

तत्र पूजा। अग्नि मण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः। धुं धूम्रायै नमः। जं ज्वालिन्यै नमः विं विस्फुलिंगन्यै नमः। सुं सरुपायै नमः।

विलोममातृकामुच्चरन् शुद्धजलापूर्य ॐ क्षं नमः। प्रणवः सर्वत्र। लं नमः। हं नमः। सं नमः। पं नमः। शं नमः। वं नमः। लं नमः। रं नमः। यं: नमः। मं नमः। भैं नमः। वं नमः। लं नमः। रं नमः। यं: नमः। मं नमः। भैं नमः। वं नमः। फूं नमः। पं नमः। नं नमः। घं नमः। दं नमः। थं नमः। तं नमः। णं नमः। ढं नमः। डं नमः। ठं नमः। टं नमः। ञं नमः। झं नमः। जं नमः। छं नमः। चं नमः। ङं नमः। घं नमः। गं नमः। खं नमः। कं नमः। अः नमः। अं नमः। ओं नमः। ओं नमः। ऐं नमः। एं नमः। लृं नमः। लृ नमः। ऋं नमः। ऋं नमः। ऊं नमः। उं नमः। ईं नमः। इं नमः। आं नमः। अं नमः।

तत्र पूजा। सः सोममण्डलात् षोडशकलात्मने नमः। अं अमृतायै नमः। मं मानदायै नमः। पुं पूषायै नमः। सं समृद्धयै नमः। तुं तुष्ट्यै नमः। पुं पुष्ट्यै नमः। रं रत्यै नमः। नमः। ज्यों ज्योत्स्नायै नमः। श्री प्रियै नमः। कीं कीर्त्यै नमः। अं अंगदायै नमः। पूंपूर्णायै नमः ॥१६॥

अंकुशमुद्रया तीर्थान्यावाह्य—

गंगे ! च यमुने ! चैव गोदावरि ! सरस्वति !
नर्मदे ! सिन्धु ! कावेरि ! जलेऽस्मिन् सन्निधौ भव ॥

योनिमुद्रां प्रदर्श्य धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य, शङ्खमुद्रां प्रदर्श्य

मन्धादिभिः सम्पूज्य । मूलेनाऽष्टवारमभिमंत्र्य मत्स्यमुद्रा-ऽऽच्छाद्य सामान्यार्घ्यजलेन सिञ्चेत् ।

आत्मतत्वाय नमः विद्यातत्वाय नमः । शिवतत्वाय नमः । परोरज से सावदोमिति सप्तकृत्वोऽभिमन्त्र्य तज्जलदेवतात्मैक्यं विभाव्य किञ्चत् वात्रान्तरे गृहीत्वा पूजोपकरणसामग्रीमात्मानं च त्रिः प्रोक्षयेत् । इति विशेषार्घ्यस्थापनविधिः ।

अर्घ्यस्योत्तरे पात्रचतुष्टयं पाद्या-ऽऽचनीय-मधुपर्कार्थसंस्थाप्य सकृदभिमन्त्र्य तोयेनापूर्य मूलेन त्रिवारमभिमन्त्रय न्यासक्रमेण धर्मादीन् प्रोक्षणीरूपेण सम्पूज्य तस्मिन् पीठोपरि देवतां विभाव्य सर्वांगेषु पंचपुष्पाञ्जलि दत्वा मूलाधारात् कुण्डलिनिमुत्याप्य द्वारे स्थित्वा तत्र परमात्मना संयोज्य तद्दृष्टाऽमृतधारया देवी प्रीणयित्वा देवी प्रसन्नां विभात्यस्वास्मिन् देव्यात्मक्य विभाव्याऽऽसनादि दीपान्तानुपचारान प्रवल्प्य, वाह्यानैवेद्यं न देयामिति सम्प्रदायः शिवो भूत्वा शिवं यजेदिति वचनात ।

फिर ताम्र के पात्र को रखकर गायत्री मंत्र को बोल उसे शुद्ध जल से भरें । आठ वार मंत्र से अभिमंत्रण करें । गंधाक्षत पुष्प आदि पूजन के उपचारों के द्वारा अर्घ्य पात्र का भजन करना चाहिए । गायत्री के पीठ पर चन्दन से कनिष्ठ के द्वारा त्रिकोण या षट्कोण बनाकर आग्नेय कोण में अग्नये हृदयाय नमः पढ़कर हृदय का स्पर्श करे । ईशानाय शिरसे स्वाहा इससे ईशान कोण में और मिर्ऋतये शिखायै वषट् से नक्रृत्य कोण में शिखा का स्पर्श करे। वायवे कवचात हुम् वायव्य पुनः अग्नये अस्त्राय फट तथा नेत्रत्राय वौषट् से नेत्रों का स्पर्श करे। अस्त्राय फट इस मंत्र का उच्चारण करें । अर्घ्य के जल से पोंछकर भगवती के पीठ चन्दन के द्वारा अर्चन करे । त्रिकोण आधार स्थापयामि से आरम्भ करके कं हव्यवाहनायै नमः से उच्चारण करते हुए चन्दन और अक्षत आदि छोड़ना चाहिए ।

आधारोपरि। अर्घ्यपात्रं संस्थाप्य पात्रपरिपूजा अं अर्क मण्डलात द्वादशकलात्मने नमः। जं ज्वालिन्यै नमः। रुं रुच्यै नमः। सुं सुमुखाये नमः। भों भोगदायै नमः वि विश्वायै नमः। वों वोधिन्यै नमः। धां धारिण्यै नमः। क्ष क्षमायै नमः इत्य अर्घ्य पात्र पूजा।

आधार के ऊपर अर्घ्य पात्र को स्थापित करना चाहिए। अंकमण्डलाय द्वादशात्मने नमः से आरम्भ कर 'क्ष' क्षमायै नमः पर्यन्त मन्त्र का उच्चारण कर अर्घ्यपात्र का समर्थन करना चाहिए। विलोम मातृका का उच्चारण करते हुए शुद्ध जल से पूर्ण करे। मातृका में सभी जगह प्रणव लगायें तथा ॐ क्षं नमः कहना चाहिए। तयानच्छौ पुनः आरम्भ कर स्व वः भं भ् ॐ तक बोलकर अर्घ्य पात्र को शुद्ध जल से भर दें। ॐ क्षं नमः से आरम्भ कर यूपूणायै नमः पर्यन्त मन्त्रों का उच्चारण कर अंकुश मुद्रा से समस्त तीर्थों का आवाहन अर्घ्य पात्र में करें। आवाहन का मन्त्र हे गंगे-हे यमुने-हे गोदावरी-हे सरस्वति हे नर्मदे हे सिन्धु-हे काबेरी। आप सब इस जल में पदार्पण कर निवास करिये। फिर मन्त्र को पढ़कर योनि मुद्रा प्रदर्शित करें। फिर धेनु मुद्रा के द्वारा उस जल को अमृत मानकर शंख मुद्रा प्रदर्शित करें। इसके उपरान्त गन्ध आदि उपचारों के द्वारा अर्चन करें। आठ बार गायत्री मन्त्र का उच्चारण कर उस जल का अभिमन्त्रण करना चाहिए। फिर मत्स्य मुद्रा से जल का आच्छादन करे। सामान्य अर्घ्य जल से उसका सिंचन करें। सिंचन के अवसर पर आत्मतत्वाय नमः से लेकर साव-दोम् पर्यन्त पढ़कर सात बार अभिमन्त्रित करें। उस जल को देव पूजा के योग्य मान थोड़ा सा जल दूसरे पात्र में लेकर तीन बार ऊपर छिड़कना चाहिए। अर्घ्यपात्र के उत्तर भाग में पाद्य

आचमनीय तथा मधुपर्क के लिये चार पात्र हों। गायत्री मन्त्र से अभिमन्त्रित करके उसको जल से भरें। कुशा के मूल से तीन बार अभिमन्त्रित करें। उसको न्यास-क्रम से धर्म आदि की प्रोक्षण स्वरूप पूजा करें। उस आसन पर देवता को समासीन मानकर पांच बार पुष्पाँजलि अर्पित करें। इसी दृष्टि से अमृत धारा गायत्री देवी को प्रसन्न कर अपने आपको देवी से अभिन्न समझकर आसन से आरम्भ करें। दीप पर्यन्त अर्चन करना चाहिए।

मं मण्डूकाय नमः। कं कलाग्निरुद्राय नमः। मूं मूलप्रकृत्ये नमः। आं आधारशक्त्यै नमः। कूं कूर्माय नमः। अं अनन्ताय नमः। लं बराहाय नमः। धं धरित्र्यै नमः। सुं सुधासिन्धवे नमः। रं रत्नद्वीपाय नमः। मं कणिकण्डपाय नमः। कं कल्पतरवे नमः। स्व स्वर्णवेदिकायै नमः। तदुपरि रत्नसिंहासनाय नमः। आग्नेयादि कोणषु-धं धर्माय नमः। ज्ञं ज्ञानाय नमः। वं वैराग्याय नमः। ऐं ऐश्वर्याय नमः। पूर्वादिदिक्षु—अं अधर्माय नमः। अं अज्ञानाय नमः। अं अवैराग्याय नमः। अं अवैश्वर्याय नमः। मध्ये—अं अनन्ताय नमः। अं अम्बुजाय नमः। आं आनन्ददाय नमः। संविन्नालाय नमः। स सर्वतत्वात्मकाय नमः। पं प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः। व विकारमयकेशरेभ्यो नमः। पं पंचाशद्वर्णकर्णिकायै नमः। अन्द्वादशकलात्मने वहिनमण्डलाय नमः। सं सत्वाय नमः। रं रजसे नमः। तं तमसे नमः। आ आत्मने नमः अं अन्तरात्मने नमः। कं कलात्मने नमः। एतान्युपर्युपरि।

पीठस्य पूर्वभागे रां दीप्तायै नमः। रीं सूक्ष्मयै नमः। रूं भद्रायै नमः। रैं विभूत्यै नमः। रं अमोधाय नमः। रां विद्युतायै नमः। पीडमध्ये। परदेवतायै नमः। सर्वतोमुख्यै नमः। तदुपदि

विन्दु- त्रिकोणावृत्त-दलाष्टकं रेखात्मक चतुरस्त्रं चतुर्द्वारोप-शोभितं यन्त्रं संस्थाप्य ब्रह्म-विष्णु-रुद्र विश्वात्मक सौरपीठाय नमः। इति पीठं पूजयेत्।

अथ पूर्वोक्तऋष्यादिन्यासं कृत्वा प्राणानायम्य मूलेन व्यापकंगायव्युच्चारणपूर्वकं हस्ताभ्याँ पुष्पांजलिं गृहीत्वा नासारन्ध्रेण पुष्पसंचयकल्पितयस्त्रमये कल्पितमूर्ति निक्षिप्य तत्तत्स्थानेतानि आवरणानि ध्यात्वा आवाहनादिमुद्रा प्रदश्यो-ऽवासनं सन्निथापनं सन्निरोधमं सम्मुखीकरणम् अवगुण्ठनं सकलीकरण चेति। मूलान्ते श्रीगायत्री देवी! इहावादिता भव पुष्येण देव्या हृदि करं विधाय 'आ त्नीं क्रीं' इति मन्त्रेण द्वादश वारं जपेत्।

पीठ पर अक्षतों को फेंकते हुये मं मण्डूकाय नमः से आरम्भ कर स्वं स्वर्ण वेदिकायै नमः पर्यन्त मन्त्रों का पाठ करें, तब पीठ पर रत्न सिंहासनाय नमः पढ़कर अक्षत छोड़ें। अग्नि कोण में धं धर्माय नः इस मंत्र का उच्चारण कर अक्षतों को गिरायें नैर्ऋत्य कोण में ज्ञानज्ञानाय नमः तथा वायव्य कोण में वं वैराग्यनाय नमः और ईशान कोण में ऐं ऐश्वर्याय नमः पढ़कर अक्षत छोड़ना चाहिए। पीठ के पूर्व से ॐ अन्धधर्माय नमः दक्षिण में अं अज्ञानाय नमः पश्चिम में ॐ वैराग्य नमः उत्तर में, ॐ उक्वजाय नमः से आचमन करें कं क्लात्मने नमः पर्वन्त बोलकर चावलों का प्रक्षेप करें।

पीठ के पूर्व भाग की ओर रां दीप्तायै नमः इस मन्त्र से प्रारम्भ करें। रां विद्युतायै नमः पर्यन्त चावलों का प्रक्षेप करें। पीठ में मध्य मार्ग में पर देवतायै नमः पर्यन्त कहकर अक्षतों को प्रक्षिप्त करें। पीठ के ऊपर अष्टदल से समावृत बिन्दु त्रिकोण को रेखा के रूप में चार दरवाजों से समन्वित चौकोरे

गायत्री का एक यन्त्र बनाकर संस्थापित करना चाहिये। फिर ब्रह्मा विष्णु रुद्र बिम्बात्मक-सौर पीठाय नमः मंत्र बोलकर अक्षतों का प्रक्षेप करें। ब्रह्मा आदि के पीठ का यजन करें। फिर प्राणायाम करें। गायत्री मन्त्र को पढ़ते हुये मूल मन्त्र के द्वारा व्यापक मुद्रा करनी चाहिये। बाद में दोनों करों में पुष्पांजलि ग्रहण करें। पुष्पों के समुदायों के द्वारा नासिका के रन्ध्र से निर्मित यंत्र में कल्पना की हुई गायत्री की प्रतिमा के ऊपर प्रक्षिप्त कर दें। आवाहन की मुद्रा को प्रदर्शित करें। आवाहन सन्निधि में स्थापन भली भांति विरोधन, सम्मुखी-करण, अवगुण्ठन और सकली-करण आदि को करें। मूलमन्त्र के अन्त में श्री गायत्री देवी इहावादित भवः का उच्चारण करें पुष्प से देवी के हृदय पर हाथ रखकर ॐ ही की इस मन्त्र को बारह बार उच्चारण करना चाहिए।

ततो भूतशुद्धि प्राणप्रतिष्ठां विधाय पूजयेत। नमः इति मन्त्रेण देव्याः पादाम्बुजे पाद्यं दद्यात् 'स्वाहा' इति मन्त्रेण मूर्ध्न्यर्घ्यम् 'वम्' इति मन्त्रेण मुखे आचमनम्, ततः स्नान-शालायां सुगन्धिसलिलः स्थापयित्वा मूलेन शतसंख्येन वा राजोपचारैः स्थापयित्वा गप्रोश्रणं कृत्वा मूलेन पीठं संस्थाप्य पूर्वोक्तां ध्यात्या पंचारैः सम्पूज्य देवतां प्रसन्नां विभाव्य आवरणपूजां कुर्याद्।

भूत शुद्धि और प्राण प्रतिष्ठा सम्पन्न कर देवी का अभ्यर्चन करना चाहिए। नमः—इस मन्त्र के द्वारा देवी के चरणों में पाद्य समर्पित करना चाहिए और स्वाहा—इस मन्त्र में देवी के मस्तक में अर्घ्य। वम् इस मन्त्र के द्वारा देवी का स्नान परम सुगन्धित जल से कराना चाहिए। मूल मन्त्र के द्वारा सौ बार अभिषेक कर अंग का उच्छन करे और गायत्री मन्त्र का

उच्चारण कर आसन पर समासीन करे। पूजन के पांच उपचारों द्वारा यजन करना चाहिए। अपने मन में ऐसा ध्यान रखे कि गायत्री देवी मुझ पर प्रसन्न हैं।

आवरण पूजा—

प्रथमम्—तत्र मध्ये त्रिकोणे व्याहृत्यै नमः। अथ कोणे गायत्र्यै नमः। वैऋत्यकोणे। सावित्र्यै नमः वायव्यकोणे सरस्यत्यै नमः। त्रिकोणान्तरालेषु ब्रह्मणे नमः विष्णव नमः। रुद्राय नमः मूलेन पुष्पांजलि गृहीत्वा।

अभीष्टसिद्धि में देहि शरणागतवत्सले!
भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्॥
अनेन पुष्पांजलि दत्वा द्वितीयावरणं पूजयेत्।
इति प्रथमावरणम्।

आवरणार्चन के लिए त्रिकोण की रचना कर उसके मध्यम में व्याहृत्यै नमः और कोण पर गात्र्यै नमः नैर्ऋत्यै कोण में सावित्र्यै नमः तथा वायव्य कोण में सरस्वत्यै नमः का उच्चाकर चावल प्रक्षिप्त करे। त्रिकोण के मध्य में ब्रह्माणे नमः, विष्णवे नमः, रुद्राय नमः, मन्त्रों को पढ़ना चाहिए। गायत्री मन्त्र का उच्चारण कर पुष्पांजलि ग्रहण कर अभीष्ट सिद्धि पे देहि कहना चाहिए।

द्वितीयम्—अष्टदलेषु पूर्वादिदिक्षु—ॐ आदित्याय नमः। भानवे नमः भास्कराय नमः रवये नमः। आग्नेयादिकेशरेषु उषायै नमः। प्रभायै नमः प्रजायै नमः। सन्ध्यायै नमः। मूलमुच्चरन् अभीष्टसिद्धि में दहि इति पुष्पांजलि दधात। इति द्वितीयावरणम्।

ततीयम्—हृदि ब्रह्मणे नमः। हृदयाय नमः। ईशाने, रुद्राय

शिखायै वषट्। तैर्ऋतये, ईश्वराय कवचाय हुम्। वाचव्येः सदाशिवाय नेत्रत्रयाय वौषट्। आग्नेये, सर्वात्मने अस्त्राय फट्। ततददेवताभ्यो नमः मूलेन पुष्पांजलि गृहीत्वा।

अभीष्टसिद्धि में देहि शरणागतवत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्चनम ॥

अनेन पुष्पांजलि दत्वा चतुर्थावरणं पूजयेत्। इति तृतीयावरणम्।

आठ दलों के ऊपर प्राची आदि दिशा के क्रमानुसार आदित्या नमः से आरम्भ कर रवये नमः पर्यन्त पढ़कर चारो दिशाओं के चारों कमल दलों पर अक्षतों का प्रक्षेप करे। आग्नेय कोण में उषायै नमः से आरम्भ कर सन्ध्यायै नमः पर्यन्त चारों कोणों के कमलों पर चावल प्रक्षिप्त करे। पुनः वही अभीष्ट सिद्धि को पढ़कर पुष्पाँजलि समर्पित करे। इसके अनन्तर तीसरे आवरण का अर्चन करे। ब्रह्मणे नमः—हृदयाय नमः—ईशान कोण में हृदय का रुद्राय शिखायै वषट् शिखा का ईश्वराय कवचाय हुम् के द्वारा नैर्ऋत्य कोण में दोनों वाहुओं के मूल का सदाशिवाय नेत्रत्रयाय वौषट् मंत्र से वायव्य कोण में दोनों नेत्रों का सर्वात्मने अस्त्राय भट् से आग्नेय नमः को पढ़ते हुए शरीर के चारों तरफ चुटकी-वादन करे। फिर अभीष्ट सिद्धि में इत्यादि पढ़कर पुष्पांजलि अर्पित करें। इसके अन्नतर-चौथे आवरण अर्चन करें।

चतुर्थम् तद्वहिः पूर्वाद्यष्टदलेषु। अमृतायै नमः। नित्यायै नमः विश्वम्भरायै नमः। ईशान्धे नमः। प्रभायै नमः। जयायै नमः। विजयायै नमः। शान्त्यै नमः मूलेन पुष्पाँजलि गृहीत्वा।

अभीष्टसिद्धिं में देहि शरणागजवत्सले !।
भक्त्यां समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम् ।।
इति पुष्पांजलिं दद्यात् ।

पंचमम् तद्वहिः पुर्वाद्यष्टदिक्षु । ॐ कान्त्यै नमः । दुर्गायै नमः । सरस्वत्यै नमः । विद्यारूपपायै नमः । दिशालाये नमः । ईशादन्त्यै नमः । वायव्यै नमः । विमलायै नमः । मूलमुच्चरन् ।

अभीष्टसिद्धिम्—इति पुष्पांजलि दद्यात् इति पंचावरणम् ।

षष्ठम्—पूर्वाद्यिष्ठदिक्ष । संहारिण्यै नमः । सूक्ष्मायै नमः । विश्वयौन्यै नमः । जयायहार्य नमः । पदमालयाय नमः परायै नमः । शोभायै नम्: रूपाय नमः । मूलन पुष्पांजलिं गृहीत्वा ।

अभीष्टसिद्धि—'इति पुष्पाँजलिं दद्यात् दद्यात् । इति षष्ठावरणम् ।

समर्पित आठ वलों वाले के वाहिर भाग में अष्ट दल पर अमृतायै नमः से लेकर शान्त्यै नमः पर्यन्तः पूर्व आदि दिशाओं के क्रम से दल पर अक्षतों का प्रक्षेप करें। पुष्पा पुष्पांजलि के द्वारा अभीष्ट सिद्धि है देहि पढ़कर पुष्पांजलि दें। क्रम से सभी दिशाओं में क्रम से कान्त्यै नमः मंत्र से लेकर विमलायै नमः पर्यन्त गायत्री मंत्र का उच्चारण कर यजन करे। अन्त में अभीष्ट सिद्धि कहकर पुष्पांजलि अर्पित करे। पाँचवें आवरण के बाहिर प्राची आदि सभी दिशाओं में क्रम से सहारिण्यै नमः इस मंत्र से लेकर रूपायै नमः इस मंत्र पर्यन्त अक्षतों के द्वारा आवाहन करें। पीछे अर्चन कर गायत्री का उच्चारण कर अभीष्ट सिद्धि कहकर पुष्पांजलि दें।

सप्तमम् पूर्वाद्यिष्टदिक्षु। ओ३म् आं ब्राह्यै नमः। ईं माहेश्वय नमः। ओ३म्। कोमायैं नमः। ओ३म् ऋं वैष्णव्यै नमः।

ओ३म् लृं वाराह्यै नमः। ओ३म् ओं चामुण्डायै नमः। ओ३म् अः चण्डिकार्य नमः। मलमुच्चार्य अभीष्टसिद्धिम्—' इति पुष्पाँजलिं दद्यात्। इति सप्तमावरणम्।

अष्टमम्—तव्दहिः पूर्वाद्यष्टदिक्षु। ओ३म् सों सोमाय नमः। ओ३म् बुधाय नमः। ओ३म् शुं शुक्रायः नमः। ओ३म् भौं भौमाय नमः। ओ३म् शं शनैश्चराय नमः। ओ३म् राँ राहवे नमः। ओ३म् कें केतव नमः। मूलेन 'अभीष्टसिद्धिम्।' इति पुष्पांजलि दद्यात्। इत्यष्टकावरणम।

पहले की ही भांति सभी दिशा में पूर्व आरम्भ कर क्रमानुसार ॐ और ब्राह्मे नमः मंत्र से लेकर ऊँ चण्डिकायै नमः मंत्र तक उच्चारण कर अक्षतों का आवाहन कर गायत्री मंत्र को पढ़ें। अन्त में अभीष्ठ सिद्धि बोलकर पुष्पाँजलि दें। सातवें आवरण के बाहिर पूर्व आदि सभी दिशाओं में क्रम से ऊँ सोमाय नमः से आरम्भ कर ॐ कें केतवे नमः बोलकर अक्षतों से आवाहन कर अर्चन करे। साथ ही गायत्री का उच्चारण करते हुए अभीष्ट सिद्धि को बोलते हुए पुष्पाँजलि को अर्पित करें।

नवमम् पूर्वाद्यष्टदिक्षु। ओ३म् लं इन्द्राय नमः। ओ३म् रं अग्नये नमः। ओ३म् यं यमाय नमः। ओ३म् क्षं नैर्ऋत्ये नमः। ओ३म् व वरुणाय नमः। ओ३म् वायवे नमः। ओ३म् सं सोमाय नमः। ओ३म् ई ईशाय नमः। ओ३म् ब्राह्मणे नमः। ओ३म् अनन्ताय नमः। मूलेन 'अभीष्टसिद्धिम—' इति पुष्पाँ-

दशमम्—ओ३म् वं वज्राय नमः। ओ३म् शं शक्तये नमः। ओ३म् दं दंडाय नमः। ओ३म् खड्गाय नमः। ओ३म् पं पाशाय नमः ओ३म् गं गदायै नमः। ओ३म् त्रि त्रिशूलाय नमः। ओ३म्

च चक्राय नमः। ओ३म् अं अम्बुजाय नमः। मूलेन 'अभीष्ट सिद्धिम्—' इति पुष्पांजलिँदद्यात्। इति दशमावरणम्।

सभी दिशाओं एवं ऊपर-नीचे इस रीति से दिशा के क्रम से ऊँ लं इन्द्राय नमः से लेकर ऊँ अनन्ताय नमः पर्यन्त बोलकर अक्षतादि से आवाहन करना चाहिए। फिर गायत्री मंत्र पढ़ते हुए अभीष्ट सिद्धि इत्यादि के द्वारा पुष्पाँजलि दें। प्राची आदि सभी दिशाओं के ऊपर-नीचे ऊँ वज्राय नमः मंत्र से आरम्भ करें ऊँ अम्बुजाय नमः, पर्यन्त बालकर ततत् देवताओं का आवाहन करें। अर्चन करें। फिर मूल मंत्र बोलते हुए अभीष्ट सिद्धि के द्वारा पुष्पांजलि दें।

पुनः पच्चोपचारैः सम्पूज्य नीराजनैः पुष्पाजलि दत्वा, यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपो यज्ञ-कियादिषु।

न्मूनं सम्पूर्णता यातु साद्य वन्दे तमज्युतम्।

इति पूजाँ समर्ण्य जपफलं देव्याः करे समर्प्य, पुष्पाँजलि दत्वा क्षमाप्य स्वहदि उद्वात्य पुनर्शष्यादिन्यास कृत्वा निर्माल्यं विसृजेत्।

समस्त देवों का पंचोप-चारों से यजन करे। नीरा-जन और पुष्पांजलि अर्पित करें यस्यस्मृत्या च नामोक्त्या मंत्र को पढ़ते हुए की अर्चा को अपति करे और नित्य के नियम के अनुसार जप कर भगवती के हस्त में समर्पित कर दे। अन्त में पुष्पाँजलि देकर क्षमा की प्रार्थना कर अपने हृदय में भगवती की स्थापना कर पूर्व वर्णित क्रम से ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। जो देवी पर चढ़ाया हुआ निर्मालय है, उनको हटा दें।

नैमित्तिक पूजन :

गुरुजन्मदिवरो स्वजन्मदिवसे जन्मनक्षत्रे विद्याप्राप्ति दिवसे पूर्णायाँ व्यतीपाते वा विशेषं पूजयेत्। इति नैमित्तिकम्। पूर्णिमा

एवं व्यतीपात में गायत्री देवी का विशेष रूप से अभ्यर्चन करना चाहिए। तद्दशाँशेनं ब्राह्मण भोजनम्। जिस दिन भी पुरश्चरण आरम्भ किया जाये, उस दिन परम सुगन्धित जल से स्नान करना चाहिए। पूजा का जो भी स्थान हो वहाँ पर समतल भूमि में चार द्वारों वाले एक मण्डल की रचना करे। प्रतिदिन नियत संख्यापूर्वक चौबीस लाख गायत्री का जप पूर्ण करे। क्रम क्रम से दुग्ध—पायस-दूर्वा, दुग्ध वृक्ष की काष्ठ और साधक आदि के द्वारा तीन सहस्त्र गायत्री मंत्र से होम कराना चाहिए। जपे हुए मंत्र की सिद्धि के लिए जप का दशम भाग हवन, होम का दशाँश मार्जन और मार्जन का दशाँश विप्रों को भोजन कराना चाहिए।

अथ काम्य पूजन

विद्यार्थी वाग्भावाद्यां, लक्ष्मीकामः श्रीबीज, वश्यार्थे काभ-बीजम् सर्वकामार्थे मायाबीजम्, आयु कामार्थे मृत्यु जयचतुर-क्षरीसहित जपेत्।

विद्या की इच्छा रखने वाले पुरुष को विद्या की प्राप्ति के लिए गायत्री मंत्र में ऊँ ह्रीं ह्रीं लगाकर जप करना चाहिए। लक्ष्मी के पाने के लिए ऊँ श्री इस बीज को लगाये। वशीकरण वास्ते क्लीं और समस्त मनोरथों की सिद्धि के वास्ते मायाबीज का एवं आयु की कामना के लिए मृत्युजय चतुरक्षरी ऊँ क्लीं माँ जीवन पालय लगाकर गायत्री का जप करें। गायत्री मंत्र से तिलों के द्वारा चौबीस सहस्त्र आहुतियाँ दे, तो सभी पापों से छुटकारा मिलता है। आयु भी बढ़ जाती है। केवल आयु की ही कामना हो तो हवि-चुन या केवल घी से या तिलों से तीन सहस्त्र गायत्री के द्वारा होम करना चाहिए। मजीठ,

मधु, शुद्ध, घृत, पलाश, गूलर के पुष्पों से होम करने का विशेष फल है।

अथ न्यास :

वर्णन्यास—ॐ तत्पादांग लिपर्वभ्यां नमः। ओ३म् सपादाँग-लिभ्प्रो नमः। ओ३म् विडङ्धाभ्यां नमः। ओ३म् तुर्जानुभ्यां नमः। ओ३म् व खरुभ्याँ नमः। ओ३म् रे शिश्नाय नमः। ओ३म् णि वृषणभ्याँ नमः। ओ३म् यं कटयै नमः। ओ३म् भर्नाभ्यै नमः। ओ३म् गों उदराय नमः। ओ३म् दे स्तनाभ्याँ नमः। ओ३म् व उरसे नमः। ओ३म् स्य कण्ठाय नमः। ओ३म् धी दन्तेभ्यो नमः। ओ३म् म तालुने नमः। ओ३म् हि नासिकायै नमः। ओ३म् धि नेत्राभ्याँ नमः। ओ३म् यों भ्रूभ्याँ नमः। ओ३म् यो ललाटाय नमः। ओ३म् नः पूर्व मुखाय नमः। ओ३म् प्र दक्षिणमुखाय नमः। ओ३म् चो पश्चिममुखाय नमः। ओ३म् द उत्तरमुखाय नमः। म्ओ३यात् मूर्ध्ने नमः।

ॐ तत्पादागुं लिपर्वभ्याँ नमः—मंत्र का उच्चारण कर वरण की प्रत्येक अंगुलियों की ग्रन्थियों का स्पर्श करना चाहिए। फिर तपादाँगु लिभ्योनम इस मंत्र से पैर की समस्त अंगुलियों का स्पर्श करे। ॐ विजंधाभ्याँ नमः दोनों जाघों का स्पर्श। ॐ र्जानुभ्याँ नमः इस मंत्र से दोनों जानुओं का, ॐ व उरुभ्याँ नमः, कटि के निचले भाग का—ॐ रे शिश्नाय नमः लिंग का स्पर्श, ॐ णि वृषणाभ्याँ नमः अण्डकोष का स्पर्श, ॐ यं कट्य नमः कटिभंग का ॐ र्भनाँभ्यै नमः नाभि का ॐ गो उदारय नमः उदर का—ॐ दे स्तनाभ्याँ नमः दोनों स्तनों का—ॐ दं उर से नमः वक्ष भाग का ॐ स्य कण्ठाय नमः कण्ठ भाग का—ॐ चीं दन्ते भ्यो नमः दातों का स्पर्श, ॐ मतालुने नमः तालुका का, ॐ हि नासिकायै नमः नासिका का, ॐ धि नेत्रभ्याँ नमः दोनों

नेत्रों का स्पर्श, ॐ यो भ्रूभ्याँ नमः दोनों भौंहों का, ॐ या ललाटान एमः ललाट का, ॐ नः पूर्वमुखाय नमः मुंह के पूर्व का ओ३म् प्रदक्षिणाय नमः मुंह के दाहिने भाग का, ऊँचो पश्चिममुखाय नमः मुख के पश्चिम भाग का ॐ दउन्तरमुखाय नम मुंह के उत्तर भाग का ऊँ यात् मूर्ध्ने नमः इस मंत्र से शरीर का स्पर्श करना चाहिए।

करन्यासः—ॐ तत्सवितुरंगुष्ठाभ्यः नमः। ॐ वरेण्यं तर्जनीभ्याँ नमः। ॐ भर्गोदेवस्य मध्यमाभ्याँ नमः। ॐ धीमहि अनामिकाभ्याँ नमः। ॐ धियोयो नः कनिष्ठकाभ्याँ नमः। ॐ प्रचोदयात् करतलपृष्ठभ्याँ नमः।

'ॐ तत्सवितुरंगुष्ठाँभ्याँ नमः अंगूठों का स्पर्श। ऊँ वरेण्यं तर्जनीभ्याँ नमः अपनी अंगुलियों का—ॐ भर्गो देवाय नमः मध्यमाँओं का—ॐ धीमहि अनामिकाभ्याँ नमः' अनामिकाओं का 'ॐ करतल करष्ठाभ्याँ नमः दोनों हथेलियों से हथेलियों का एवं दोनों पीठों का स्पर्श करें।

देहन्यास—ऊँ भूः पादयोः। ॐ भुवः जान्वोः। ॐ स्वनाभौ ॐ महः। हृदये। ॐ भुवः जनः कण्ठे। ॐ तपः ललाटे। ॐ सत्यं मूर्ध्नि। ॐ तत्पादयोः ॐ सवितुर्जान्वोः। ॐ वरेण्यं स्कन्धयो ॐ भर्गो हृदये। ॐ देवस्य कण्ठे। ॐ धीमहि वक्त्रे। ॐ धियो यो नेत्रे। ॐ प्रचोदयात् अस्त्राय फट्।

'ॐ भूः पादयोः' दोनों चरणों का स्पर्श, ओ३म् भुवः जान्योः' दोनों जानुओं का—ओ३म् स्वः नाभि' से नाभिका—'ओ३म् महः' से हृदय का—'ओ३म् जनः' से कण्ठ का—'तपः' से भाल 'ओ३म् सत्य' से मस्तक का स्पर्श, ओ३म तत् पादयोः' से दोनों चरणों का, ओ३म् सवितुर्जान्वो' जानुओं का ओ३म् वरेण्यं कन्धे का, 'ओ३म् भर्गो' से हृदय का, 'ओ३म् देवस्य' कण्ठ का,

ओ३म् धीमहि' मुख का, 'ओ३म् धियो यो नेत्रों' दोनों चक्षुओं का, ओ३म् नमः मुख का स्पर्श करे। 'ओ३म् प्रचोदयात्' कहकर ताली बजाए। करन्यास :—ओ३म् आपः अंगुष्ठाभ्यां नमः। ओ३म् ज्योतिस्तर्जनीभ्यां नमः। ओ३म् रसो मध्यमाभ्याँ नमः। ओ३म् अमृतम् अनामिकाभ्याँ नमः। ओ३म् ब्रह्मकनिष्ठिकाभ्यां नमः। ओ३म् भूर्भुवः स्वरोम् करतलकरपृष्ठाभ्याँ नमः। ओ३म् अग्नये हृदयाय नमः। ओ३म् वायवे शिरसे स्वाहा। ओ३म् सूर्याय शिखायै वषट् ओ३म् ब्रह्मणे कवचाय हुम्। ओ३म् विष्णवे नेत्रत्रयाय वौषट्। ओ३म् रुद्राय अस्त्राय फट्।

इसके बाद करन्यास करना चाहिए ओ३म् आपो अगुष्ठाभ्यां नमः से अंगूठे का, ओ३म् ज्योतितर्जनीभ्यां नमः तर्जन अंगुलिका—ओ३म् रसो मध्यमाभ्यां नमः मध्य के अंगुलिका—ओ३म् अमृतम् अनामिकाभ्यां नमः अनामिका अंगुलिका ओ३म् ब्रह्मा कनिष्ठिकाभ्यां नमः छोटी अंगुलिका स्पर्श करे। ओ३म् भुर्भुवः स्वराम् दोनों करों की हथेलीयों और उनके पृष्ठ भाग का। ओ३म् अग्नये हृदयाय नमः हृदय का, ओ३म् वायवे शिर से स्वाहा से शिर का ओ३म् सूर्याय शिखायै वषट् से शिखा का—ओ३म् ब्रह्माणे कवचाय हुम् से दोनों भुजाओं का स्पर्श। ओ३म् विष्णवे नेत्रत्रयाय वौषट् दोनों नेत्रों का स्पर्श करे। पीछे ओ३म् रुद्राय फट् से ताली बजा दे।

ब्रह्मगायत्रीमन्त्र :

ओ३म् भुः ओ३म् भुवः ओ३म् स्वः ओ३म् महः ओ३म् जनः ओ३म् तपः ओ३म् सत्यं ओ३म् तत्सवितुर्वरण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। यो नः प्रचोदयात्। ओ३म् आपो ज्योती रसोऽमृत ब्रह्मभुर्भुवः स्वरोम्।

ब्रह्म गायत्री मन्त्र का स्वरूप निम्नांकित है—ओ३म् भूः

ओ३म् स्वः ओ३म् महः ओ३म् जल ओ३म् तपः ओ३म् सत्य ओ३म् तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ओ३म् आयो ज्योतो रसोममं भूर्भुवः स्वरोम ।

पूर्व की ओर मुख रखने वाली, त्रिपाद ऋचा से समन्वित, ऋग्वेद स्वरुपा, चौबीस तत्वों से परिपूर्ण ब्रह्मस्त्र संज्ञिका भगवती पूर्व दिशा में हम सबकी रक्षा करें। चारों पावों वाली दक्षिण की ओर मुख रखने वाली यजुर्वेद स्वरूप छत्तीस तत्वों से संयुक्त ब्रह्मदण्डा संज्ञा वाली भगवती दक्षिण दिशा में हमारी रक्षा करें पश्चिम की ओर मुख किए हुए, चार पादों वाली, पचास तत्वों से युक्त, साम स्वरूप वाली ब्रह्म शिर संज्ञिका भगवती पश्चिम दिशा में हम सबकी रक्षा करें। छः पादों वाली चौंसठ कलाओं से युक्त, अत्यन्त सुन्दर अथर्वागिरस स्वरूपा उत्तर की ओर मुख वाली ब्रह्म स्वरूप संज्ञिका भगवती उत्तर दिशा में हम सबकी रक्षा करें। पचास तत्वों से समन्वित, ग्यारह चरणों वाली शताक्षरी जिनका निवास वेदागों में रहता है वह कामाख्या भगवती ऊपर की ओर से हमारी रक्षा करें।

मृग के ऊपर सवारी करने वाली विद्युत के सदृशदेदीप्यमान चार भुजाजों से युक्त, ढाल-तलवार, धनुष-बाण को धारण करने वाली ब्रह्मा संज्ञिका भगवती आग्नेय कोण में हम सबकी रक्षा करें। हंस के ऊपर विराजमान रक्त वर्ण से युक्त, कुमारी की अवस्था से युक्त ब्रह्मशक्ति स्वरूपा भगवती गायत्री देवी नेर्ऋत्य कोण में हमारी रक्षा करें। बैल के ऊपर सवारी करने वाली शकल वर्ण से समन्वित वर, अभय, कपाल और अक्षमाला को अपने करों में धारण करने वाली चार भुजाओं से युक्त वेद माता भगवती पश्चिम दिशा में हमारी रक्षा करें। शक्तियों में परम श्रेष्ठ श्यामा सरस्वती गरुड़ के आसन पर

विराजमान "पदम" शंख असि, और अभयदान को धारण करती हुई वैष्णवी शक्ति ईशान कोण में हमारी रक्षा करें। सिंह के वाहन वाली गौरवर्ण से युक्त चार भुजाओं वाली वेद माता जिसके करों में कमलों का जोड़ा वर और अभय विद्यमान है, ऐसी भगवती नीचे के और से हमारी रक्षा करें। अपनी-अपनी दिशाओं में स्वामिनी के स्वरूप से विराजमान वहां की शक्तियां अपने-अपने प्रत्यधि देवता के सहित तथा स्वकीय वाहन, भूषणों और आयुधों से सुसज्जित होकर उन-उन दिशाओं में हमारी रक्षा करें। मंत्रों के त्रयियति देवता के स्वरूप वाले एवं मुद्रा के अधिष्ठान देवता अपने व्यापक रूप से चरण के तलुवे से लेकर मस्तक तक हमारी रक्षा करें।

तत् यह पद शिर की रक्षा करें। सवितुः यह ललाट की रक्षा करे। और भर्ग—यह पद हमारे दोनों कानों की रक्षा करे—देवस्य—यह पद मेरी नासिका की रक्षा करे। धीमहि—यह पद मेरे मुख की रक्षा करे और धियः—यह पद मेरी जिह्वा की रक्षा करे तथा यः—यह पद हमारे कण्ठ देश की रक्षा करे। नः यह पद दोनों कन्धों की रक्षा करे और प्रचोदयात्—यह पद हमारी भुजाओं की रक्षा करे। परः यह पद हमारे हाथों की रक्षा करे और रजसे—हम सबके चरणों की रक्षा करे। असो—यह पद हमारे हृदय को परित्राण करे, अद—यह हमारे हृदय के मध्य भाग की रक्षा करे ॐ—हम सबकी नाभि की रक्षा करे। ॐ नमः—यह पद साथियों की रक्षा करें और ज्योति यह पद हमारे गुप्त स्थलों का परित्राण करे। रसः यह पद हमारे ऊरुओं की एवं अमृत यह पद जानुओं की रक्षा करे। ब्रह्म—यह पद जंघाओं की, "झ" यह पद हमारे गल्फों की रक्षा करे। भवः यह पद मेरे चरणों को रक्षा करे और स्वः यह पद समस्त शरीर की रक्षा करे।

तपः—यह पद प्राण, धातु, मुख तथा जीव की रक्षा करे। सत्य—पद हमारी आयु की, हंह,—यह पद हमारी बुद्धि की रक्षा करे। शचिषत्—यह पद हमारे शुक्र (वीर्य) की रक्षा करें, "वसु"—यह पद हमारी श्री की तथा "अन्तरिक्ष" पद हमारी मति की रक्षा करें। एवं होता यह हमारे दर्शनों की करे। वेदिठत्। यह पद हमारी विद्या की एवं अतिथि—यह पद हमारे गृह की रक्षा करें। "दरोणसत"—यह पद धर्म की, नषत—यह पद हमारी सम्पत्ति की रक्षा करें। "वरसत्" यह पद मेरी पत्नी की रक्षा करे तथा ऋत सत—यह पद हमारे बालकों की रक्षा करे। व्योमत्—यह पद हमारे बन्धु-बान्धवों की तथा "अब्जा" यह पद हमारे सभी भाई बन्धुओं की सुरक्षा करे। "गीजा" यह पद हमारे सब पशुओं की रक्षा करे। और ऋतजा—यह हमारे जन्म की रक्षा करे। "अद्रिजा"—यह हमारे सभी कुछ की रक्षा करे और "ऋतु" यह पद हमारी सवारी की सुरक्षा करे। अपने शरीर की सुरक्षा के वास्ते जिन स्थलों का नाम लिया गया है और जो भाग शरीर के भीतर एवं बाहिर हैं जिनका नाम इस कथित कवच में नहीं कहा गया है, उन सम्पूर्ण स्थलों की हंस और सोअहम् ये दो पद रक्षा करें।

हे नारद! यह ब्रह्म पंजर नाम वाला स्तोत्र हमने आपको बतलाया है। इस स्तोत्र को जो कोई विप्र दोनों सन्ध्याओं में जप के समय में भक्ति-भाव के साथ बड़ी सावधानी से पाठ किया करते हैं अथवा इसका किसी को भी श्रवण कराया करते है, वह साक्षात् विष्णु—शिव और साक्षात परब्रह्म, अक्षर और स्वयं विराट् स्वरूप बन जाया करता है। देवी के शत अक्षर मंत्र और एक सौ अट्ठाईस नाम जो बहुत ही अधि

गोपनीय है और सनातन है, हे नारद ! मैं आपको बतलाता हूं उसे आप परम सावधान होकर श्रवण कीजिए।

भगवती के वे नाम निम्न प्रकार से हैं—भूतिदा, भुवना, वाणी, वसुधा, सुमना, मही-हरिणी, जननी, नन्दा, सविसर्गा, तपस्विनी, पयस्विनी, सती, त्याग, ऐन्दबी, सत्यवी-रसा, विश्वा तुर्या, परा, रेच्या: निर्घणी, यमिनी, भवा, गो, वैद्या, जरिष्टा, स्कन्दिनी, घी, मति, हिमा, भीषणा, योगिनी, पक्षी, नदी, प्रज्ञा, चोदिनी, धनिनी, यामिनी, पद्मा, रोहिणी, यमिनी, ऋषि सेनामुखी, सामयी, वकुला, दोषजिता, सर्व कामदुधा, सोमोद्भवा, अहंकारत्रजिता, द्विपदा, चतुष्पदा, त्रिपदा, षट्पदा अष्टापदी, नवपदी सहस्त्राक्षरात्मिका।

इन एक सौ अट्ठाईस नामों से संयुक्त सावित्री मंत्र पंजर को जो मर रहे हों, उनको अमर बनाने के लिए और जो भय-भीत हों, उनको निडर करने के लिए इसका श्रवण कराना और पढ़ाना चाहिए। यह मंत्र बहुत से मनोरथों को पूर्ण करने वाला है। जो मुक्ति की इच्छा वाले पुरुष हैं, उनको यह मोक्ष प्रदान किया करता है। अतएव मोक्ष की इच्छा रखने वालों की ओर लक्ष्मी की प्राप्ति की लालसा रखने वालों को तथा युद्ध में विजय पाने की इच्छा रखने वालों को और व्याधियों से छुटकारा पाने वालों को इस मंत्र को अवश्य ही पढ़ना तथा सुनना-सुनवाना चाहिए। किसी को अपने वशीभूत करने के वास्ते, विद्या की प्राप्ति चाहने वालों के लिए दरिद्रता से ग्रसित व्यक्तियों को धन की प्राप्ति के लिए और पापियों को अपने किए हुए पापों की शान्ति के वास्ते इसको अवश्य ही पढ़ना चाहिए और श्रवण करना तथा श्रवण कराना चाहिए।

शास्त्रार्थ की इच्छा रखने वालों को शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त करने के लिए कविगणों को कविता की रचना करने के वास्ते, बुभुक्षितों को भोजन पाने के वास्ते, स्वर्ग में वास पाने की इच्छा वालों को स्वर्ग की प्राप्ति के लिए, इस मंत्र को सुनना-सुनाना तथा पढ़ना चाहिए। पशुओं की वृद्धि की इच्छा रखने वालों को पुत्र प्राप्ति की चाहना रखने वालों को, दुःखितों के दुःखों को दूर भगाने के लिए और अपने शत्रुओं के हृदय में भय उत्पन्न करने के लिए इसको अवश्य ही पढ़ना और सुनना-सुनाना चाहिए। जो राजा के सेवक हैं उनको राजा को वश में करने के लिए विष्णु के भक्तों को सबके अन्तर्यामी भगवान् विष्णुदेव की अविचल भक्ति की प्राप्ति के लिए इस विष्णु पंजर एवं सावित्री पंजर को अवश्य ही सुनना-सुनाना और पढ़ना चाहिए। इससे सब कुछ निश्चय ही प्राप्त हो जाया करता है। यह गृहस्थी मनुष्यों को परम शान्ति देने वाला और काम क्रोधादि से निःस्पृह मुनिजनों को निश्चय रूप से मुक्ति को प्रदान करने वाला है। विशेष रूप से गृहस्थाश्रम में रहने वालों को तीनों वर्गों की प्राप्ति के वास्ते इसका जप अवश्य ही करना चाहिए।

इस स्तोत्र के पाठ करने से यति-संन्यासियों को मोक्ष और मुनिगणों को ज्ञान की प्राप्ति हुआ करती है। चन्द्रमा की किरणों के समुदित होने पर सावित्री देवी का उपस्थान करते हुए दोनों करों की जोड़कर अपने घर में वन में अथवा शिवालय में पवित्र होकर इस सावित्री-पंजर का पाठ करना चाहिए। इसके करने से मानवों के समस्त मनोरथों की सिद्धि अवश्य हो जाया करती है। इसमें कुछ भी संशय नहीं है। इस स्तोत्र से ब्रह्मा अर्थात् मैं और विष्णु दोनों ही परम प्रसन्न हुआ

करते हैं। साधना करने वाला मानव इस कवच से कुशा के द्वारा किसी कोढ़ी और ज्वर-पीड़ित मनुष्य के अंगों पर मार्जन करे तो निश्चित रूप से रोगी को रोग से छुटकारा प्राप्त हो जाया करता है। जो स्त्री मृतवन्ध्या हो, पर जिसके सन्तान उत्पन्न ही नहीं होती हो या जो सिर्फ कन्या ही को उत्पन्न करने वाली हो, उनको जिनके पुत्र दीर्घ-जीवी नहीं होते हैं, उनको इस मंत्र से मार्जन करने पर दीर्घकाल पर्यन्त जीवित रहने वाले पुत्र हुआ करते हैं। काकवन्ध्या आदि सभी तरह की स्त्रियां इस कवच से मार्जन किए जाने पर एक ही वर्ष के भीतर गर्भ धारण कर दीर्घ-जीवी पुत्र को जन्म दिया करती हैं। जिस पत्नी का पति अपनी पत्नी से प्रेमालाप न कर विद्वेष किया करता हो, उस स्त्री के अंगों पर इसके द्वारा मार्जन करने पर उसका पति कामातुर होकर अपनी पत्नी से प्रेम करने लगता है।

राजा को अपने वश में करने के लिए पीपल के नीचे, रूप अथवा लाभ पाने के वास्ते विल्व के वृक्ष के नीचे, विद्या की प्राप्ति के लिए, पलाश वृक्ष के नीचे, तेजो विशेष के लाभ के लिए सूर्यदेव के सामने – कन्या की प्राप्ति तथा शत्रु के हृदय में भय उत्पन्न करने के लिए काली के मन्दिर में इसका पाठ करना या कराना चाहिए। लक्ष्मी की प्राप्ति करने के लिए मन्दिर में शोभा की प्राप्ति के लिए किसी उद्यान में, अरोग्य के लिए अपने घर में, मोक्ष पाने के लिए पर्वत की शिखर पर इसका पाठ करना चाहिए। सभी प्रकार की कामनाओं की प्राप्ति के लिए विष्णु के मन्दिर में इसका पाठ करे, जो मोक्ष की ही कामना रखता है, वह जहां तहां पर भी इस स्तोत्र का पाठ कर सकता है। साधक को जप के आरम्भ काल में गायत्री-हृदय और जप के अन्त में गायत्री कवच का पाठ अवश्य ही

करे। सत्य बात तो यह है कि मनुष्य जो-जो भी कामना किया करता है, वह सभी इस गायत्री पंजर के पाठ से प्राप्त हो जाया करती हैं। इसमें लेशमात्र भी संदेह नहीं है। उपासना समाप्ति के उपरान्त गायत्री की आठ मुद्राएं और बनायी दिखलाई पड़ती हैं। वह इस प्रकार है—

सुरभि (धेनु) : दोनों हाथों की अंगुलियां गूंथकर बाएं हाथ की तर्जनी को दाहिने हाथ की मध्यमा, दाहिने हाथ की तर्जनी से बाएं हाथ की मध्यमा, इसी प्रकार बाएं हाथ की अनामिका से दाहिने हाथ की कनिष्ठा दांये हाथ की अनामिका से निकालें।

ज्ञानम् : दाहिने हाथ की तर्जनी अंगूठा मिलाकर हृदय में तथा इसी प्रकार बाएं हाथ को घुटनों पर सीधा रखें।

वैराग्यम् : दोनों तर्जनियों में अंगूठा मिलाकर घटनों पर सीधा रखें।

योनि : दोनों मध्यमाओं के नीचे से बांयी तर्जनी के ऊपर दाहिनी अनामिका और दाहिनी तर्जनी बांयी अनामिका रखकर दोनों तर्जनियों से बांधकर दोनों मध्यमा ऊपर रखें।

शंख : बाएं अंगूठे को दाहिनी मुट्ठी से घेरकर दाहिने अंगूठे से बांयी अंगुलियों को मिलाए।

पंकजम् : दोनों हाथों के अंगूठे तथा अंगुलियों को मिलाकर ऊपर की ओर करें।

लिंगम् : दाहिने हाथ के अंगूठे को सीधा रख दोनों

हाथों की अंगुलियों को गूंथकर बायां अंगूठा दाहिने अंगूठे की जड़ से ऊपर रखें।

निर्वाणम् : उलटे बाएं हाथ पर दाहिना हाथ सीधा रखकर अंगुलियों को पवाचर गूंथकर दोनों हाथों को अपनी तरफ से घुमाकर दोनों तर्जनियों को सीधी कान के समीप रखें।

गायत्री आदि जप करने के पूर्व २४ मुद्राएं दिखलायी जाती हैं। इनके दिखलाये बिना जपादि करना व्यर्थ कहा गया है—

चतुर्विंशतिमुद्राश्च गायत्र्यासौ प्रदर्शयेत्।
वृथा मन्त्रजपश्चैव स्नानं भोजनमेव च॥
यज्ञश्च निष्फलस्तेषां होमो देवार्चनं वृथा।
तस्मान्मुद्रा सदा ज्ञेया विद्वद्भिर्यत्दमास्थितैः॥

गायत्री जप के पूर्व २४ मुद्राओं का प्रदर्शन अवश्य करना चाहिए। क्योंकि मुद्रा प्रदर्शन के बिना मंत्र का जप, स्नान भोजन, यज्ञ, होम तथा देवपूजन करने वालों के सम्पूर्ण उपर्युक्त कार्य व्यर्थ हो जाते हैं। अतः शास्त्रज्ञ विद्वानों का मत है कि २४ मुद्राओं का ज्ञान अपेक्षित है।

एता मुद्रा न जानाति तस्य देवी न सिद्धति।
शपन्ति देवताः सर्वा गायत्र्यक्षरसंस्थिताः॥

जो गायत्री की २४ मुद्राओं को नहीं जानता उसकी गायत्री सिद्ध नहीं होती। विश्वास है गायत्री मन्त्र के अक्षरों में स्थित समस्त देवता भी उसे शाप देते हैं।

गायत्री मंत्र की शक्ति व महिमा आज किसी भी संसारी में छिपी नहीं। इस संसार की ऐसी कोई भी तपस्या नहीं है, जिसका समाधान इस मन्त्र से न हो सकता है। हां, विधि-

विधान से इसका जाप किया जाये तो चाहे जैसी भी कामना हो उसकी पूर्ति हो सकती है। हां श्रद्धा व विश्वास परम आवश्यक है। गायत्री मंत्र से लाभ उठाने के लिए इतना तो आपको करना ही होगा। मेरी यह बात सदैव स्मरण रखें गायत्री साधना के लिये आपका उपयोगी पात्र होना परम आवश्यक है। गायत्री साधना के लिए पात्रता निम्न बातों से आंकी जा सकती है।

१ यज्ञोपवीतधारी तथा उसके नियम का पालनकर्ता।

२. गायत्री मंत्र की एक माला १२ वर्ष तक जपी हो।

३. ७ वर्ष तक गायत्री की ब्रह्म संध्या नियम से की हो।

४. ५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए प्रतिदिन एक हजार बार मन्त्र जाप किया हो।

५. २८ लाख गायत्री जाप का अनुष्ठान किया हो।

———

गायत्री के चौबीस रूप

वैदिक साहित्य में साधना का महत्वपूर्ण स्थान है। सभी उपासना का आश्रय लेते हैं। सत्य है कि मन्त्रों में शक्ति होती है। परन्तु क्रमबद्धता, शुद्ध उच्चारण और प्रयोग का ज्ञान भी आवश्यक है, जिस प्रकार कई कई सुप्त व्यक्तियों में से जिस व्यक्ति के नाम का उच्चारण होता है, उसकी निद्रा भंग हो जाती है, शेष सोते रहते हैं, उसी प्रकार शुद्ध उच्चारण से ही

मंत्र प्रभावशाली बनते हैं। गायत्री साधना में क्रमबद्धता भी महत्वपूर्ण है। अतः उपासना मंत्रों का शुद्ध उच्चारण तथा क्रमबद्ध प्रयोग करने से ही अर्थ की प्राप्ति की जा सकती है।

गायत्री मंत्र में चौबीस अक्षर है और ये चौबीसों अक्षर देवी शक्तियों के बीज हैं। ग्रन्थों में ऐसा ही लिखा है। गायत्री मन्त्र के प्रत्येक अक्षर का एक-एक देवता है २४ अक्षर, २४ बीज और चौबीस देवता है। प्रत्येक अक्षर-अक्षर में देवता विशेष की शक्ति निहित है। प्रत्येक देवता अलग-अलग गायत्री है। यों चौबीसों अक्षर मिलकर जो विशेष यंत्र बनाता है। उनमें सभी चौबीस देवताओं की शक्ति निहित है। स्पष्ट है गायत्री के उपासक २४ देवताओं की शक्तियों का लाभ प्राप्त होता है। उद्देश्य विशेष के लिए तत्सम्बन्धी देव गायत्री की उपासना करना शुभत्व प्रदान करता है।

१. तत्	२. स	३. वि	४. तुः	५. व
६. रे	७. ण्यं	८. भ	९. गं	१०. दे
११. व	१२. स्यं	१३. धी	१४. म	१५. हि
१६. धि	१७. यो	१८. यः	१९. नः	२०. प्र
२१. चो	२२. द	२३. या	२४. त्	

२० प्र	पुलस्त्य	विष्णु	अक्षर पंक्ति
२१ चो	माण्डूक	वसु	भूः
२२ द	दुर्वासा	रुद्र	भुवः
२३ या	नारद	कुबेर	स्वः
२४ त्	कश्यप	अश्विनी कुमार	ज्योतिषमी

हमारे देश भारत में ऋषि वही कहलाता है जो सांसारिक सुखों को त्याग कर लोभ, क्रोध, मोह के बन्धनों को काटकर तप, जप, भक्ति और ज्ञान द्वारा अलौकिक शक्तियों को प्राप्त करता है।

———

गायत्री स्वरूप

गायत्री, सावित्री, ब्रह्मगात्री, गुरु मंत्रवेदमाता, देवमाता आदि गायत्री के नाम ग्रन्थों में बराबर आए हैं। गायत्री मंत्र का 'गायत्री छंद' है, इसलिए इसको 'गायत्री मन्त्र' कहते हैं। सूर्य से सम्बन्ध होने के कारण इसको 'सावित्री' भी कहते हैं। वेद से सम्बन्ध रखने के कारण इसको 'ब्रह्मगायत्री' कहते हैं। उपनयन के समय द्विज बालक को गुरु के द्वारा गायत्री मन्त्र का उपदेश देने के कारण इसको गुरुमन्त्र कहते हैं। वेदों की जननी होने के कारण 'देव माता' कहते हैं। मंत्रों द्वारा देवी देवताओं का स्मरण एवं उच्चारण करना, अपना मन एकाग्र कर देवी-देवताओं की ओर लगाना और तन्मय हो जाना ही 'मंत्र-जप' और साधना कहलाता है।

मन्त्र जप से मानव की भीतरी शुद्धि होती है। मंत्र जप से मानव का अन्तःकरण पवित्र और बलवान बन जाता है। मंत्र के अस्तित्व को मानकर साधक अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव करता है। मंत्र-जप से देवी-देवता प्रसन्न होकर साधक की रक्षा करते हैं, जिससे उस पर शत्रु के द्वारा चलाये हुए अस्त्र-शस्त्र और मारण-मोहन आदि कर्म व्यर्थ हो जाते हैं।

मंत्र जप से आध्यात्मिक आधिदैविक और आधिभौतिक उन्नति भी होती है तथा मन्त्र जप से साधक सभी प्रकार से निर्भय हो जाता है। मंत्र जप से साधक संशय विपर्यय से मुक्त होकर दृढ़-निश्चयी बनता है। मन्त्र जप से मानव असाध्य कार्य को भी सरलता पर्वक सम्पन्न कर लेता है। मन्त्र से साधक ज्ञानी,

पराक्रमी, यशस्वी और तेजस्वी बनता है। मन्त्र जप से साधक समस्त पापों से मुक्त होकर दीर्घायु, धन-धान्य, पुत्र-पौत्र आदि ऐहलौकिक सुख प्राप्त कर अन्त में पारलौकिक परम पद को प्राप्ति करता है। मंत्र जाप और साधना का यही फल है। उपासना के द्वारा साधक अपना यह लौकिक जीवन सभी प्रकार से सुखद बना लेता है।

गायत्री मंत्र चारों वेदों में भी पाया जाता है—

ऋग्वेद, शकलसंहिता (३/६२/१०) शुक्ल यर्जुवेद, माध्यन्दिनीय संहिता (३/३५, २२/९, ३०/२, ३६/३) कृष्ण यजुर्वेद, तैतिरीयसंहिता (१/५/६/१२, १/५/८/१०, ४/१/११/७) कृष्ण यर्जुवेद, मैत्रायणोसंहिता (४/१०/७७) सामवेद, कोथुम संहिता, उत्तराचिक (१३/३/३/१३/४/३/१) अथर्ववेद, शौनक संहिता (१९/७१/१)

कुछ धार्मिक ग्रन्थों में गायत्री मन्त्र का विस्तार किया गया है। यह और अक्षरों में विस्तृत कर दी गयी है। सौ अक्षर की गायत्री का भी बड़ा महत्व बतलाया गया है।

प्रायः मत्र जाप जो उपासना के समय किये जाते हैं, अपने उच्चारण दोष के कारण प्रभावहीन हो जाया करते हैं। गायत्री मंत्र का शुद्ध उच्चारण करना भी अनिवार्य है। अतएव शुद्ध उच्चारण का तो अवश्य ध्यान रखा जाये। स्वर और अक्षर मंत्र के पर्यायवाची होते हैं। गायत्री मंत्र के सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से यह बतलाया गया है। चौबीस अक्षर का गायत्री मंत्र प्रसिद्ध हैं। स्वर और अक्षर पर्यायवाची हैं। गायत्री मंत्र में २३ अक्षर हैं, चौबीस नहीं। अतः इयादिपरणः इस सूत्र से "इयू" आदेश करके "वरेण्यम्" की जगह 'वरेणियम' मानकर २४ अक्षर समझना चाहिये। 'वरेण्यम् में वरेणियम्' की केवल

भावना करना चाहिये, उच्चारण नहीं। उच्चारण तो जप-काल में वरेण्यम् ही होता है। गाक्त्रयुपदेश काल में 'वरेण्यम्' का ही उपदेश होता जिस प्रकार गायत्रयुपदेश काल में 'वरेण्यम्' का ही उपदेश होता है, जप-काल में 'वरेण्यम्' का उपदेश है, जप-काल में 'वरेण्यम्' ही उच्चारण करना चाहिए। प्राचीन समय में शूद्र और महिलाओं के लिए 'गायत्री साधना' वर्जित थी पर शनैः शनैः इसका स्वरूप बदला है। प्राचीन व्यवस्था के अनुसार 'गायत्री-मंत्र' का अलग-अलग रूप तीनों वर्णों के लिये विभाजित कर दिया गया था। इसका विवरण इस प्रकार है—

ब्राह्मण की गायत्री

"ॐ भूर्भुवः स्वः तत्स वितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।"

क्षत्रिय की गायत्री

'ॐ देवसवितः प्रभुव यंज्ञ प्रसुव यज्ञपति भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाजं नः स्वदतु स्वाहा।'

या

ॐ ता ष सवितुर्वरेण्यस्य चित्रामाहं वृणे सुमति विश्व-जन्याम्। यामस्य कण्वो अदूहत्प्रपीना ष सहस्त्रधारां पयसा महीं गाम्॥

अथवा

ॐ आ देवो यातु सविता सुरत्नोधन्तरिक्षप्रा-वहमानो अश्वैः। हस्ते दधानो नयां पुरूणि निवेशयच्च प्रसुवच्च भूम॥

वैश्य की गायत्री

ॐ विश्वाँ रूपाणि प्रतिमुच्चते कविः प्रासावीद् भद्दं द्विपदे चतुष्पदे। वि नाकमख्यत्सविता व्वरेण्योघ्नु प्रायाणमुबसो व्विराजति।

या

ॐ युज्जते मन उत युज्जते धियो व्विप्रा व्विप्रस्य बृहतो व्विपश्चितः। व्यि होत्रा दधे व्वयुनाविदेक धइन्महो देवस्य सवितुः परिष्टुतिः॥

गायत्री मंत्र के छन्द, देवता, ऋषि, शक्तियां, तत्व और पुष्पों तक का विवरण और विधान प्राप्त है। उसका विवरण इस प्रकार है—

गायत्री में २४ छन्द माने गये हैं।

१. गायत्री, २. उष्णिक्, ३. अनुष्टुप्, ४. बृहती, ५. पंक्ति, ६. त्रिष्टुप् ७. जगती, ८. अतिजगती, ९. शक्वरी, १०. अतिशक्वरी, ११. धृति, १२. अतिधृति, १३. विराट् १४. प्रस्तार पंक्ति, १५. कृति, १६. प्रकृति, १७. आकृति, १८. विकृति, १९. संस्कृति २०. अक्षर पंक्ति, २१. भूः, २२. भुवर, २३. स्वर और २४. ज्योतिष्मती।

गायत्री के वर्णों के २४ देवता इस प्रकार हैं—

१. अग्नि, २ प्रजापति, ३. चन्द्रमा, ४. ईशान, ५. सूर्य, ६. आदित्य, ७. बृहस्पति, ८. मित्रावरुण, ९. भग, १०. ईश्वर ११. गणेश, १२. स्वष्टा, १३. पूषा, १४. इन्द्राग्नि, १५. वायु १६. वामदेव, १७. मैत्रावरुणि, १८. विश्वेदेव, १९. मातृक २०, विष्णु, २१. वसुगण २२. रुद्र, २३. कुबेर और २४. अश्विनी कुमार।

मंत्र साधना में देवता का ही प्रमुख स्थान होता है। गायत्री मंत्र अपनी विशालता के कारण अनेक देवताओं को अपने में समाहित किए हुए हैं। शास्त्रों के अनुसार प्रथम वर्ण के देवता अग्नि, द्वितीय वर्ण के देवता वायु, तृतीय वर्ण के देवता सूर्य चतुर्थ वर्ण के देवता विद्युत, पंचम वर्ण के देवता यम, षष्ठ वर्ण के देवता वरुण, सप्तम वर्ण के देवता बृहस्पति, अष्टम वर्ण के देवता पर्जन्य, नवम वर्ण के देवता इन्द्र, दशम वर्ण के देवता गन्धर्व, एकादश वर्ण के देवता पूषा, द्वादश वर्ण के देवता मैत्रा वरुण. त्रयोदश वर्ण के देवता त्वष्टा, चतुर्दश वर्ण के देवता वासव, पंचदश वर्ण के देवता मारुत, षोडश वर्ण के देवता अंगिरा, अष्टादश के देवता विश्वेदेव, अकोनविशति वर्ण के देवता अश्विनीकुमार, विशति वर्ण के देवता प्रजापति, एक विशति वर्ण के देवता सर्वदेव, द्वाविशति वर्ण के देवता रुद्र, त्रयोविशति वर्ण के देवता ब्रह्मा चतुविशति वर्ण के देवता विष्णु माने गये हैं।

गायत्री के २४ ऋषिगण इस प्रकार हैं—

१. वामदेव, २. अत्रि, ३. वसिष्ठ, ४. शुक्र, ५. कण्व, ६. पराशर, ७. तेजस्वी विश्वामित्र, ८. कपिल, ९. महाभाग शोनक, १०. याज्ञवल्क्य, ११. भारद्वाज, १२. तपोनिधि जमदग्नि, १३. गौतम, १४. मुद्गल, १५, वेदव्यास, १६. लोमश, १७. अगस्त्य, १८. कौशिक, १९. वत्स, २०. पुलस्त्य, २१. माण्डुक, २२. परम तपस्वी दुर्वासा, २३. नारद और २४. कश्यप।

प्रत्येक मंत्र की अपनी-अपनी शक्तियाँ होती हैं। इसी प्रकार गायत्री मंत्र की शक्तियाँ भी हैं। इन शक्तियों को इस प्रकार बतलाया गया है—

१. वामदेवी, २. प्रिया, ३. सत्या, ४. विश्वा, ५. भद्र

विलासिनी, ६. प्रभावती, ७. जया, ८. शान्ता, ९. कान्ता, १०. दुर्गा, ११. सरस्वती, १२. विद्युमा, १३. विशलेशा, १४. व्यापिनी, १५. विमला, १६. तमोअपहारिणी, १७. सूक्ष्मा, १८. विश्वयोनि, १९. जया, २०. वशा, २१. पद्मालया, २२. पराशोभा, २३. भदा और २४. त्रिपदा।

तत्व इस प्रकार है—

१. पृथ्वी, २. जल, ३. तेज, ४. वायु, ५. आकाश, ६. गन्ध ७. रस, ८. रूप, ९. शब्द, १०. स्पर्श, ११. उपस्थ, १२. पायु. १३. पाद, १४. हस्त, १५. वागिन्द्रिय, १६. नासिका, १७. जिव्हा १८. चक्षु, १९. त्वचा, २०. श्रोत्र, २१. प्राण, २२. अपान, २३. व्यान और २४. समान।

गायत्री साधना में २४ प्रकार के पुष्पों का प्रयोग होता है, वह इस प्रकार हैं—

१. चम्पा, २. अतसो के पुष्प, ३. मूंगा ४. स्फटिक, ५. कमल के पुष्प, ६. तरुण सूर्य, ७. शंख-चन्द्रमा-कुन्द के समान, ८. रक्त दल कमल को पंखुड़ी, ९. पद्मराग, १०. इन्द्रनीलमणी, ११. मोती, १२. कुड़कुम, १३. काजल, १४. रक्त चन्दन, १५. वैदूर्य, १६. मधु, १७. हल्दी, १८. कुंई के फूल एवं दुग्ध के समान, १९. सूर्यकान्त मणि, २०. सुग्गे की पूंछ, २१. कमल, २२. केतकी, २३. मल्लिका और २४. कनेर के पुष्प।

गायत्री में ॐ का बड़ा ही महत्व है। ओम् ओमकार के साथ मिलकर कई गुणा प्रभावशाली हो जाती है। प्रणव वेद का मुख्य स्वरूप है, जो वेदों में सर्वप्रथम प्रयुक्त होता है। प्रणव में अकार, उकार तथा मकार ये तीन वर्ण क्रमशः ऋग्वेद, यजर्वेद और सामवेद् के रूप में विद्यमान है।

अतः प्रमाणित है कि प्रणव एवं तीनों व्याहृतियों से युक्त वेद साक्षात गायत्री-स्वरूप हैं। ओंकार शब्द से गायत्री सिद्ध है। गायत्री की उपासना विधि का प्रतिपादक चौबीस अक्षरों का गायत्री-छन्दवाला सावित्री मंत्र कहा जाता है। वह सावित्री मंत्र भूः भुवः, स्वः इन तीन व्याहृतियों से युक्त तत्सवितुर्वरेण्यम् इत्यादि कहा गया है।

जिस प्रकार गायत्री को ओंकार कहा गया है, उसी प्रकार ओंकार को भी गायत्री मंत्र कहा गया है—

ओंकारस्तु परं ब्रह्म गायत्री स्यातदक्षरम्।
एवं मंत्रो महायोगः साक्षात्सार उदाहतः॥

सन्ध्योपासन में गायत्री का जप और सूर्योपासना प्रधान है। इसीलिये सन्ध्योपासन में ब्रह्म-गायत्री का जप और सूर्य की उपासना विशेष रूप से की जाती है। सन्ध्योपासना में गायत्री का जो जप किया जाता है, वह भगवान सूर्य की ही उपासना है। गायत्री-मंत्र सूर्यदेव को ही उद्देश्य करके ही प्रवृत्त हुआ है। अतः गायत्री मंत्र के द्वारा सूर्य की ही उपासना की जाती है। गायत्री का आध्यात्मिक अर्थ परमात्मा है और आधिदैविक अर्थ सूर्य है। प्रेरणे (धातु पाठ ६/१२४) और षूङ् प्राणि-प्रसवे (धातु पाठ ४/२४ के अनुसार विश्व को जन्म देने वाला तथा प्रेरक सविता है, यही परमात्मा है। इसीलिए गायत्री मंत्र में सूर्य के रूप में परब्रह्म की ही उपासना की रीति बनायी गयी है। सूर्य पर ब्रह्म के ही प्रतीक है और उन्हीं की विभूति हैं।

गायत्री मंत्र के कहे गये सवितुः पद से सूर्य का ही अर्थ होता है। सूर्य सविता ही पर्यायवाची शब्द है। गायत्री सविता की शक्ति है। वह इसी शक्ति की उपासना के लिए देवी रूप

में कल्पित की गयी है। गायत्री सूर्य की शक्ति से अनुप्राणित है इसीलिए गायत्री का ध्यान करने से सूर्य का स्वरूप प्रकट होता है। और सूर्य का ध्यान करने से गायत्री का स्वरूप प्रकट होता है। गायत्री और सूर्य का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है।

"सूर्य और गायत्री का परस्पर सम्बन्ध है। सूर्य तो गायत्री साक्षात् वाच्य है और गायत्री उन सविता की वाचिका है।

गायत्री और ॐ का सम्बन्ध बड़ा घनिष्ठ बताया गया है। कुछ ग्रंथों में इसका उल्लेख इस प्रकार है—

गायत्री प्रकृतिर्ज्ञेया ओंग्गुरः पुरुषः स्मृत।
एतयोरेव संयोगाज्जगत्सव प्रवर्त्तते॥
(बृहत्पाराशरस्मृति)

"गायत्री को प्रकृति और ओंकार को पुरुष कहा गया है। इन दोनों का संयोग समस्त जगत् की उत्पत्ति का कारण है।"

गायत्री साउ्भवत् पत्नी प्रणवोउ्भूत पतिस्तदा।
पुनरन्योन्दाम्पत्यादिति ताभ्यामभूज्जगत्॥
(बृहत्पाराशरस्मृति)

"उस समय वह गायत्री स्त्री हुई और प्रणव पति हुआ इन दोनों से ही संसार उत्पन्न हुआ है।

गायत्री प्रकृतिर्ज्ञेया ओंकारः पुरुष स्मृतः।
ताभ्यामुभाभ्याँ संयोगाज्जगत्सर्व प्रवर्त्तते॥
(बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति)।

गायत्री और ओंकार के संयोग से समस्त संसार की उत्पत्ति होती है।"

गायत्री सन्ध्या का सर्वस्व है। सन्ध्या में गायत्री की ही प्रधानता और महत्ता मानी गयी है। जो साधक नित्य सन्ध्या करते हैं, उनकी सन्ध्या के साथ-साथ गायत्री की उपासना स्वयं हो जाती है।

गीता में कहा है कि यज्ञ, दान और तप—ये तीनों ही बुद्धिमान मनुष्यों को पवित्र करते हैं—

"यज्ञे दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्।"

उपरोक्त भगवद्वाक्य विशेष रूप से सन्ध्या में चरितार्थ होता है, क्योंकि इसमें यज्ञ, दान और तप—ये तीन कार्य महत्वपूर्ण हैं, जो गीता के—इन तीनों रूपों में चरितार्थ हो जाते हैं। इससे जो गायत्री का जप किया जाता है, उसे जप-यज्ञ कहते हैं—"यज्ञानां जपज्ञोअस्मि"

सन्ध्योपासन में सूर्य को जो अर्घ्य दिया जाता है, उसे अर्घ्य दान कहा गया है। इसमें जो प्राणायाम किया जाता है, वह "तप" है।

"प्राणायामः परं तपः।"

सन्ध्या में गायत्री जप से तीनों व्याहृतियों द्वारा तीनों देवता, तीनों अग्नि, तीनों प्रकृति और तीनों काल की भावना होती है तथा जप करने वाले की वह सब प्रकार से रक्षा होती है। साधक को सद्बुद्धि प्रदान करती है। उसके मन को निर्मल करती है! इसमें अर्घ्यदान से सूर्य पर असुरों द्वारा किये गये आक्रमणों का निराकरण होता है और तप से ब्रह्मा, विष्णु और महेश—इन तीनों आदि देवों का दर्शन तथा आयु की वृद्धि होती है।

सन्ध्या में गायत्री ही प्रधान है। इसमें गायत्री की साधना

विशेष रूप से की जाती है। जो साधक सन्ध्या नहीं करता, वह गायत्री की उपासना से भी वंचित रहता है।

भगवान मनु ने प्रातःकाल और सायंकाल सन्ध्योपासन के समय गायत्री के जप करने का विशेष महत्व कहा है—

पूर्वा सन्ध्यां जपंस्थिष्ठन्नैशमेनो व्यपोहति।
पश्चिमां तु समासीनो मलं हन्ति दिवाकृतम्॥

"प्रातः सन्ध्योपासन के समय खड़े होकर गायत्री का जप करने से साधक का रात का किया हुआ पाप नष्ट हो जाता है तथा सायं सन्ध्योपासन के समय बैठकर गायत्री के जप से दिन का पाप नष्ट हो जाता है।"

ब्रह्मयोगियाज्ञवल्क्यस्मृति में भी यही श्लोक है।

सन्ध्या और गायत्री का अभिन्न सम्बन्ध है। अतः गायत्री की उपासना करना आवश्यक है। वस्तुतः सन्ध्या ही गायत्री कही गयी है—

"या सन्ध्या सैव गायत्री।"
देवी भागवत्)

"या सन्ध्या सैव गायत्री।"
(गृह्यसूत्रावली)

"या सन्ध्या सा तु गायत्री।" (बृहद्योगियाज्ञवल्वयस्मृति)

सन्ध्या में गायत्री की प्रधानता और महत्ता होने के कारण ब्रह्मा आदि देवगण भी सन्ध्योपासन के समय गायत्री का ध्यान और गायत्री मन्त्र का जप करते हैं—

सर्ववेदसारभूता गायत्र्यास्तु समर्चना।
ब्रह्मादयोपि सन्ध्यायां तां ध्यायन्ति जपन्ति च॥

"गायत्री की अर्चना समस्त वेदों का सारभूत है। ब्रह्मा

आदि भी सन्ध्या करने के समय गायत्री मन्त्र का जप करते हैं। भीष्मपितामह और युधिष्ठिर से लेकर कुरूवंशी राजाओं के द्वारा भी गायत्री—जप करने की परम्परा चली आयी है।

यावन्तोऽस्यां पृथिव्यां तु विकर्मस्था द्विजातयः।
तेषाँ तु पावनार्थाय सन्ध्या सृष्टा स्वयम्भुवा॥
या सन्ध्या सा तु गायत्री विधा भूत्वा प्रतिष्ठिता।
सन्ध्या ह्युपासिता येन तेन विष्णुरुपासितः॥

इस पृथ्वी पर जितने दुष्कर्म करने वाले व्यक्ति हैं, उनको पवित्र करने के लिए ही सृष्टिकर्ता ब्रह्मा ने सन्ध्या और गायत्री का निर्माण किया है। वह सन्ध्या अथवा गायत्री तीन रूपों में प्रतिष्ठित है। अतएव जिसने सन्ध्योपासन किया, उसने यानि भगवान विष्णु की उपासना कर ली। सन्ध्या और गायत्री अत्यन्त प्राचीन और महत्वपूर्ण हैं। परम्पराएं सन्ध्या और गायत्री मनुष्य मात्र के लिये प्रतिदिन अनुष्ठेय हैं। जो साधक गायत्री का जप करता है, वह परम पवित्र और निष्पाप हो जाता है।

सायं प्रातस्तु यः सन्ध्यां समक्षां सेवते द्विजः।
जपन वै पावनीं, देवीं, सावित्रीं लोकमातरम्॥
स तया पवितो देव्या ब्राह्मणो धूतकिल्विषः।
न सीदेत् प्रतिगृह्णानः पृथिवीं च ससागराम्॥
गोघ्नः पितृघ्नो मातृघ्नो भ्रूणहा गुरुतल्पगः।
ब्रह्महा हेमहारी च यस्तु विप्रः सुरां पिबेत्॥
गायत्र्याः शतसाहस्रे जपे भवति वै शुचिः॥
(बृहद्योगियाज्ञवल्क्यस्मृति)

जो द्विज सांयकाल तथा प्रातःकाल नक्षत्र के रहते हुए सन्ध्या करता है तथा गायत्री मन्त्र का जप करता है, वह उन्हीं

की कृपा से पवित्र और पाप रहित हो जाता है। वह सागर के सहित समस्त पथ्वी का दान लेने पर भी पतनोन्मुख नहीं होता है। जो गोघाती, पितृघाती, मातृघाती, गर्भघाती, गुरुपत्नी-गामी, ब्रह्मघाती, और मदिरासेवी, सुवर्णहारी है, वह भी एक लाख गायत्री के जप करने से पवित्र हो जाता है।

सोमादित्यान्वयाः सर्वे राघवाः कुरवस्तथा।
पठन्ति शुचयो दित्यं सावित्रीं परमां गतिम्॥
(महाभारत)

प्रत्येक साधक को, विशेषतः ब्राह्मण को सन्ध्योपासन के समय गायत्री का जप करना चाहिए जो ब्राह्मण सन्ध्योपासना के समय गायत्री का जप नहीं करता, वह शूद्र है और मरने के बाद वह कुत्ता होता है।

सन्ध्यायां च प्रभाते च मध्यान्हे च ततः पुनः।
सन्ध्यां नोपासते यस्तु ब्राह्मणो हि विशेषतः॥

सन्ध्योपासन के समय प्रातःकाल और सायंकाल में विशेष कर जो ब्राह्मण की गायत्री का जप नहीं करता, वह जीते-जी शूद्र के सदृश है और मरने के बाद श्वान योनि को प्राप्त होता है। यही बात अर्थववेद में भी है।

सन्ध्याकाले हाजपन्तः श्व-शूकर-श्रृगाल-कुक्कुट-सर्पयोनिषु वर्षसहस्त्राणि जायन्ते।

सन्ध्योपासन के समय गायत्री का जप न करने वाले कुत्ता, शूकर, श्रृगाल, मुर्गा और सर्प की योनि में एक हजार वर्ष तक रहते हैं।

"य इमां न विन्दन्ति नाधीयते सन्ध्याकाले नोपासते ते

हाश्रोत्रिया भवन्त्यनुपनीता कृत्यहीनाश्छेदन-भेदन-भोजन-मैथुनायभिचरन्तः ।"

जो साधक गायत्री को नहीं जानते हैं, गायत्री का अध्ययन नहीं करते हैं और संध्योपासन के समय गायत्री की उपासना नहीं करते हैं, जो छेदन, भेदन एवं भाजन और मैथुन करते हैं, वह समस्त कर्त्यों से हीन होकर अपवित्र कहलाते हैं। सृष्टि-कर्ता ब्रह्मा ने उच्छृखंल सांसारी को पवित्र करने के लिए ही संध्या और गायत्री को जन्म दिया है।

सांय प्रातश्च यः संध्यामुपास्ते शुद्धमानसः ।
जपन हि पावनीं देवीं गायत्री वेदमातरम् ॥
यावन्तश्च पृथिव्यां हि चीर्णवेदव्रता द्विजा ।
आचीर्णव्रतबेदा वा विकर्मपथमाश्रिताः ॥
तेषां हि पावनार्थाय गायत्री नित्यमेव हि ॥

जो मनुष्य शुद्ध मन से सांयकाल, प्रातःकाल संध्योपासन करता है, जो पवित्र करने वाली वेदमाता गायत्री देवी का जप करता है वह तथा पृथ्वी में जितने वेद का अनुष्ठान करने वाला मनुष्य है और जिन्होंने वेद का अनुष्ठान नहीं किया है तथा जो कुमार्ग में संलग्न हैं, उन सभी को पवित्र करने के लिए गायत्री का नित्य जप कहा गया है।

सायं प्रातश्च संध्यां यो ब्रह्मणोऽभ्युपसेवते ।
प्रजपन् पावनीं देवीं गायत्री वेदमातरम ॥
स तया पवितो देव्या ब्राह्मगो नष्टकिल्विषः ।
न सीदेत प्रतिगृहानो महीमपि ससागराम ॥

जो ब्राह्मण प्रातःकाल और सांयकाल दोनों समय की सन्ध्या करता है और गायत्री मंत्र का जप करता है, वह उन्हीं की कृपा से परम पवित्र और निष्पाप हो जाता है। वह

समस्त पृथ्वी का दान ग्रहण कर ले तो भी किसी संकट में नहीं पड़ता।

ये चास्य चारुणाः केचिद् ग्रहाः सूर्यादियो दिवि।
ते चास्य सौम्यो जायन्ते शिवाः शिवतराः सदा।

आकाश के सूर्य आदि ग्रहों में से जो कोई भी ग्रह मनुष्य के लिए भयंकर होते हैं, वह सब गायत्री-जप के प्रभाव से उसके लिए सदा सौम्य, सुखद एवं परम मंगलकारी हो जाते हैं।

सव नानुगतं चैनं दारुणाः पिशिताननाः।
घोररुपा महाकाया मर्षयन्ति द्विजोत्तनम्॥

भयंकर रूप और विशाल शरीर वाले, समस्त कूरकर्मा, मांसभक्षी राक्षस भी गायत्री जप परायण पर आक्रमण नहीं करते हैं।

देवी भागवत में लिखा है कि जो मनुष्य प्रतिदिन गायत्री का जप करता है, वह संध्योपासना का समस्त फल अवश्य प्राप्त करता है—

ॐ कारं पूर्वमुच्चार्य भूर्भवः स्वततथैव च।
चतुविशत्यक्षरां च गायत्री प्रोच्चरेतत:॥
एवं नित्यं जपं कुर्याद् ब्राह्मणों विप्रपुगंवः।
स समग्रं फलं प्राप्य सन्ध्यायाः सुखमेधते॥

गायत्री का जाप करने से पहले ॐकार उच्चारण करे, पश्चात् भूर्भुवः स्वः कहे। अनन्तर चौबीस अक्षर वाली ब्रह्म गायत्री का जप करे। इस प्रकार जो प्रतिदिन गायत्री का जप करता है, वह सुख को प्राप्त करता है। जो साधक प्रतिदिन गायत्री का जप करता है, वह संध्योपासना और गायत्री जप इन दोनों के फल को प्राप्त करता है। अतः स्पष्ट है कि सन्ध्या

और गायत्री दोनों एक ही हैं। या संध्या सैव गायत्री द्विधा भूता व्यवस्थिता के अनुसार जो संध्या है, वही गायत्री है और दोनों ही संध्या और गायत्री के रूप में हैं।

संध्या में गायत्री देवी के ब्राह्मी, वैष्णवी और रौद्री—इन तीन रूपों का ध्यान किया जाता है, जिससे गायत्री की उपासना ब्रह्मोपासना कही जाती है। संध्योपासन और गायत्री उपासन में ब्रह्मी, वैष्णवी और रौद्री—इन तीनों विशक्तियों की उपासना होती है। त्रिकाल संध्या में उक्त तीनों शक्तियां उपस्थित होती है उसी प्रकार गायत्री मंत्र के जप में भी यही तीनों शक्तियां हैं। संध्योपासना और गायत्री—उपासना ये ब्रह्मोपासना कही जाती है। आपत्तिकाल में गायत्री का जप बड़ा ही बल देता है। "स्मृतार्थ सार" में कहा गया है। कि जब कोई संकट आ पड़े तो उस समय आठ बार गायत्री का जाप करना चाहिए।

श्राद्ध और प्रदोष आदि में गायत्री उपासना का विशेष महत्व बतलाया गया है। कहा गया है, अष्टमी तथा चतुर्दशी तिथि को गायत्री-मंत्र का जप १०८ का आधा अर्थात ५४ वार जप करना चाहिए। प्रतिपदा तिथि में १०८ का चौथा भाग अर्थात २७ बार जप करना चाहिए किसी पर्व के होने पर अत्यल्प जप करना आवश्यक है।

श्राद्ध में प्रदोष में तथा अमावास्या तिथि से गायत्री मंत्र का जप दस बार करना चाहिए। अनध्याय में २८ बार तथा त्रयोदशी तिथि में मानसिक जप करना चाहिए। प्रदोष काल में प्रतिदिन कम से कम ८ वार गायत्री जप आवश्यक बतलाया गया है। इस काल में यह कहा गया है कि जप के आरम्भ काल से जप के समाप्ति के दिन तक प्रतिदिन जप न कम और

अधिक करना चाहिए अर्थात जप प्रारम्भ से समाप्ति तक समान संख्या में करना चाहिए।

गायत्री उपासना या जाप में कुछ अनिवार्य नियम हैं। उपनयन कर्म आवश्यक है। हमारे धर्म शस्त्रों के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का प्रथम जन्म माता से होता है। द्वितीय जन्म यज्ञोपवीत संस्कार से होता है।

यज्ञोपवीत संस्कार के पूर्व ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य आदि एक कहलाते हैं। प्राचीन काल में इन्हें उपनयन के समय आचार्य तीन दिन गुरुकुल में रखते थे। पश्चात तीन दिन के बाद फिर उनका दूसरा जन्म होता था। अतः जो ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य आदि उपनयन के पूर्व एक थे, वह अब आचार्य के द्वारा उपनयन में गायत्री-मंत्र की दीक्षा प्राप्त कर मनुष्य हो जाते थे। अतः स्पष्ट है कि उपनयन-संस्कार के पूर्व जो ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य आदि एक कहे जाते हैं, वे उपनयन-संस्कार में आचार्य के द्वारा गायत्री मंत्र की दीक्षा प्राप्त करने के बाद मनुष्यत्व को प्राप्त करते हैं।

इस प्रकार यज्ञोपवीत जिसका हो गया है वही इसका अधिकारी पाया गया है। यह इस उपासना की आवश्यक शर्त है।

पूर्व में गायत्री, जिसका रंग लाल है, दक्षिण में सावित्री रंग सफेद है. पश्चिम में सरस्वती जिसका रंग काला है, स्थित है। इसी वर्ण में ये ध्यान करने योग्य है। पृथ्वी, अकाश और स्वर्ग इनके विस्तार स्थल और निवास स्थान है। यह तीनों अकार, उकार, मकार हैं। प्रातःकाल की गायत्री इस पर आरुढ़ है। मध्यान्हकाल की गायत्री बैल पर, सांयकालीन

गायत्री गरुड़ आरुढ़ है। पहला रूप उमा का, दूसरा शंकर का और तीसरा विष्णु का माना गया है। चंदन, लाल रूप धारण किये हैं। पाश, अकुंश, अक्षमाला, कमण्डल हाथ है। हंस पर सवारी है।

मध्यान्ह काल की गायत्री जो संध्या है, यौवन सम्पन्न है, स्वच्छ श्वेत ब्रह्मचारी है। वर्ण श्वेत है और आभूषणादि भी श्वेत है। वह हंस पर आरुढ़ है। उसके हाथ में ऋग्वेद है।

सायंकालीन संध्या सरस्वती है। वह बूढ़ी है। काले रंग की है, काले वस्त्रों को धारण किए हुए है। काले गन्धों और मालाओं से युक्त है। शंख, चक्र और गदा लिए हुए हैं। विष्णु उसका अधिदेवता है। हाथ में सामवेद धारण किए हुए हैं।

गायत्री के यह तीन रूप, तीनों ब्रह्मा के बतलाये गये हैं। प्रथमा का निवास पृथ्वी, द्वितीया का निवास आकाश और तीसरे स्वरूप का निवास स्वर्ग माना गया है। इस प्रकार यह गायत्री के तीन सरूप हैं और समयानुसार इनकी ही प्रार्थना, जाप, उपासना साधना होती हैं।

———

गायत्री विधान

गायत्री मंत्र का अपना एक निश्चित विधान है। इसकी व्याख्या अनेक ग्रंथों में की गयी है। गायत्री सनातन धर्म का मूलाधार रही है यह एक चमत्कारीं शक्ति है। श्रद्धा और विश्वास के कारण अनगिनत साधकों ने इन पर साधना कर अनेक सफलताएं प्राप्त की हैं और आश्चर्यजनक परिणाम भी

प्राप्त किए हैं। गायत्री मंत्र का जाप चमत्कारी है। इसका जितना भी जाप किया जाए, विश्वास और श्रद्धा करने वाला उसका उतना ही फल प्राप्त होता है। इसका उल्लेख ग्रंथों में है।

देवी भागवत में विधि पूर्वक १०८, २८ और अशक्त हों तो १० बार जाप करना बतलाया गया है। "आक्षि कर्म" में भगवान शिव ने इसका जाप १००० बार अथवा १० बार करना अनिवार्य बतलाया है। १००८ की संख्या भी कही है।

"गायत्री कल्प" में १०००८ बार, १०८ बार, २८ बार अथवा १० बार का जाप उल्लिखित है। वेदव्यास ने १०८, २८, १० बार की संख्या बतलायी है।

प्रतिदिन १००० बार करना उत्तम, १०० बार करना मध्यम और १० बार करना अधम, अथवा बिल्कुल न करना निकृष्ट बतलाया है।

"नक्षत्रों के उदित हो जाने पर तीन वार प्राणायाम कर गायत्री मंत्र का हजार बार अथवा सौ बार जप करना श्रेष्ठ कहा गया है।

"अष्टकृत्व एकादशकृत्वो द्वादशकृत्वः पंचदशकृत्वः सहस्त्र-कृत्व इति।

गायत्री का जप कम से कम प्रतिदिन आठ बार, ग्यारह बार, बारह बार, पन्द्रह बार, सौ बार और एक हजार वार करना चाहिए।

"ओं पूर्वा गायत्रीमष्टकृत्व एकादशकृत्वो द्वादशकृत्वः पंच-शकृत्वः शतकृत्वः सहस्रकृत्वः श्रेति।"

जिसके पूर्व में ॐ है ऐसी गायत्री का आठ बार, ग्यारह

बार, पन्द्रह बार, सौ बार अथवा एक बार जप करना चाहिए।

सव्याहृति जपं कुर्यादष्टोत्तरशतं तु वा।
दशाष्टाविंशति चैव करमालाक्षमालया॥

व्याहृतिपूर्वक गायत्री का जप एक सौ आठ, दस या अट्ठाइस बार करना उत्तम है।

सहस्रकृत्वः सावित्रीं जपदत्यग्रमानस।
शतकृत्वोऽपि वा सम्यक प्राणायामरो यदि।

सर्तकता और एकाग्रता के साथ एक हजार गायत्री का जप करें अथवा प्राणायाम के साथ सौ बार गायत्री का जप करें।

अत्रि, यम, शौनक और वद्ध आपस्तम्ब ने गायत्री-जप की संख्या इस प्रकार लिखी है—

सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम्।
गायत्री तु जपेन्नित्यं सर्वपापप्रणाशिनीम्॥

समस्त पापों का विनाश करने वाली गायत्री का जप यदि एक हजार की संख्या में हो तो वह श्रेष्ठ है, सौ की संख्या में करे तो मध्यम कोटि का है और दस की संख्या में करे तो वह अधम कोटि का है।

भगवान मनु ने भी गायत्री-जप के विषय में लिखा है—

सहस्रकृत्वस्त्वभ्यसय बहिरेतात्रिकं द्विजः।
महतोऽप्येनसो मासात्वचेवाहिविमुच्यते॥

मनुष्य तीन व्याहृति सहित गायत्री का एकान्त स्थान में हजार बार जप कर एक महीने में बड़े पाप से उसी प्रकार छुटकारा पा जाता है, जिस प्रकार सांप केंचल से।

प्रतिदिन गायत्री जप करने के लिए अनेक संख्या कही गयी है। कुल मिलाकर १००८ जप की संख्या को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है।

ब्रह्मचारी और गृहस्थ को न्यूनतम १०८ बार और वान-प्रस्थी के लिए ६००० बार अनिवार्य बतलाया गया है।

विधिविधान पूर्वक तारागणों के रहते ही प्रातःकालीन संध्या करें और सूर्योदयपर्यन्त गायत्री मंत्र का जप करें। विधि विधान पूर्वक सायंकालीन संध्या सूर्य के रहते ही करना चाहिये और तारकोदपर्यन्त गायत्री मंत्र का जप करता रहे।

"हारीतस्मृति" स्पष्ट रूप से बतलाया गया है।

भारद्वाज स्मृति में कहा गया है कि—

अंगलिभिस्तु रेखाभिः अथवा जपमालया।
जपस्य संख्या विज्ञेया जपकृदभिद्विजोत्तमैः॥
वृथा भवेत्क्रयौ विप्रैः संख्याज्ञानं बिना जपः।
तस्तात्संख्यापरिज्ञानं अवश्यं जपकर्मणि॥

अंगुलियों की रेखाओं से अथवा जपमाला से जप करने वाले मनुष्यों को जप की संख्या जाननी चाहिये। अगर उनके द्वारा संख्या ज्ञान के बिना जप किया जाता है तो वह व्यर्थ होता है। अतः जप से संख्या का ज्ञान अत्यावश्यक है।

यही बाय "लघुघटित" में भी वर्णित है। बिना संख्या का जाप असुर जाप कहा गया है। यामल में कहा गया है कि लाल चंदन, सिन्दूर, गोबर, सूखे गोबर की गुटिका बनाकर जप की गणना की जाती है। जाप में माला का अपना स्थान है। कहा गया है कि जाप गोपनीय रखें। इसके लिए गो-मुखी बनायी जाती है। गोमुखी के विषय में भगवान शंकर ने पार्वती से कहा है।

चतुर्विशांगुलमितं पट्टवस्त्रादिसम्भवम्।
निर्माताष्टांगुलिमुखं ग्रीवायां षड् दशांगुलम्
ज्ञेयं गोमुख्यंत्र च सर्वतन्त्रेषु गोपितम्।
तन्मुखे स्थापयेन्मालां ग्रीवामध्यगते करे॥
प्रजपेद् विधिना गुह्यां वर्णमालाधिकं प्रिये।
निधाय गोमुखे मालां गोपयेन्मातृजारवत्॥

चौबीस अंगुल परिमाण के रेशमी वस्त्र से गोमुखी का निर्माण करना चाहिए। उसका मुख आठ अंगुल का हो ग्रीवा भाग सोलह अंगुल का। इस प्रकार माला रक्षणार्थ समस्त तंत्रों में गोमुख यंत्र अर्थात गोमुखी बनाने की विधि जाननी चाहिये। गोमुखी के ग्रीवा भाग में हाथ रखकर और हाथ के अग्र भाग में माला को गुप्त रख, हे प्रिये। अधिकाधिक जप करना चाहिये। गोमुखी के अन्दर माला का गोपन मातृजर के समान करे।

माला का भी विधान बतलाया गया है। व्यास प्रजापति आदि मुनियों द्वारा इसकी संख्या १०८, ५४, २७ कही गयी है।

कामनाओं के अनुसार भी मनियाँ रखने का विषय है। गौतम मुनि के कथानानुसार—

पच्चीस मनियों से मोक्ष की सिद्धि, तीस मनियों से धन-सिद्धि, सत्ताइस मनियों से सर्वार्थ सिद्धि, पन्द्रह मनियों से मरणादिकी सिद्धि, चौवन मनियों से अभीष्ट सिद्धि तथा एक सौ आठ मनियों से सम्पूर्ण सिद्धि होती है।

मालातंत्र नामक ग्रन्थ में बतलाया गया है कि शास्त्रीय विधि से माला पर जाप करने से जप कर्ता को वास्तविक फल

प्राप्त होता है। माला में प्रत्येक मनि के बीच एक गांठ होना चाहिए। इसमें सुमेरु भी होता है। मुख्य बड़ी मनि को सुमेरु कहा गया है। इसको छोड़कर १०८ मणियों की माला सर्वोत्तम मानी गयी है अंगुलियों के अगले भाग में माला को रखकर किया गया जप तथा सुमेरुल्लंघनपूर्वक किया गया जप और अंगुलियों में रेखाओं में किया गया जप यह सभी निष्फल माने गये हैं।

अपने हाथ को हृदय पर रखकर और अंगुलियों को तिरछी कर एवं हाथ को वस्त्र से ढंककर दाहिने हाथ से जप करना आवश्यक है। माला को अनामिका पर रखकर अंगूठे से स्पर्श करते हुए मध्यमा से फेरना चाहिये। सुमेरु का उल्लंघन कभी नहीं करना चाहिए। दाहिने हाथ की अंगुलियों को मिलाकर हथेली की ओर कुछ टेढ़ी करनी चाहिए। अंगुलियों के अलग-अलग रहने से जप का पूर्ण फल नहीं मिलता है। रुद्राक्ष की माला, श्वेत पद्म की माला तथा स्फटिकमणि की माला से समस्त मन्त्रों का जप उत्तम माना गया है। रुद्राक्ष अगर बड़ा हो, छोटा हो, फूटा हो. वैवर्ण हो, लघु हो, पृथक हो, पहले से रखा हुआ हो, पुराना हो तो भी वह वरदायक माना गया है। सभी कार्यों में एक सौ आठ दानों की माला प्रशस्त मानी गयी है।

मंत्र खंड में कहा गया है कि स्फटिक और मोती की माला काले सूत से गूंथना चाहिए, सम्पूर्ण कार्य की सिद्धि के लिये रुद्राक्ष माला से जप करना चाहिए। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि के लिए पद्माक्ष की माला से जप करना चाहिए नीम, पुत्रजीव, शंख, पदम, मणि, कुशग्रन्थि और रुद्राक्ष की बनी माला सर्वोत्तम मानी गयी है। चन्दन और शंख से बनी

माला से सौ गुना, मूंगा से हजार गुना, स्फटिक से हजारों लक्ष गुना, मोती के लक्ष गुना, चांदी तथा अक्ष से दस लक्ष गुना सोने से कोटि गुना, कुशग्रन्थि तथा रुद्राक्ष से अनन्त गुणित फल प्राप्त होता है।

रंग-बिरंगे सूत से या कमल के तन्तु के समान सूक्ष्म और श्वेत तन्तु से अथवा जिसके मध्य में ब्रह्मा नाड़ी हो ऐसे सूत से गूंथी हुई माला सम्पूर्ण मनोवांछित फल देने वाली होती है।

माला का सूत किस प्रकार का होना चाहिए, इसका भी विवरण दिया गया है। विवरण सनत्कुमार संहिता में दिया गया है।

रूई की सूत से श्रेष्ठ ब्राह्मणों की कन्या द्वारा अगर माला गूंथी गई तो वह धर्म-अर्थ-काम और मोक्षदायिनी है। वह माला क्रमशः सफेद, लाल, पीला, काला और पट्टरूप में गुथी हुई हो। सफेद लाल, पीला, काला आदि वर्णों के सूत्रों में हुई माला क्रमशः शान्ति, वशीकरण, अभिचार, मोक्ष तथा ऐश्वर्य आदि कार्यों में उत्तमा मानी गई है। सभी वर्णों में लाल सूत भी कार्यों को पूर्ण करने वाला होता है। तीन सूत्र तीन बार बांटकर शिल्प शास्त्र के अनुसार माला गूंथनी चाहिए। तार के सहित एक-एक मातृका वर्ण को जपता हुआ विद्वान सूत्र क से मणि को लेकर मध्यभाग से गुंथे इस प्रकार ब्रह्म ग्रन्थियुक्त सुमेरु को बनाकर पहले माला को गूंथकर तब उसका संस्कार करे। गायत्री जाप में माला की प्रतिष्ठा अनिवार्य है। शारदा तिलक में कहा गया है—

पीपल के नवीन पल्लवों से कमल का आकार बना लें फिर मातृका के मूल का उच्चारण करते हुए उस कमल के मध्य

में माला को स्थापित करे। सघ बनाए हुए जल मिश्रित पंच गव्य से उस माला को धोना चाहिए। चन्दन अगर तथा कपूर से "वामदेव" इस मन्त्र से माला को घिसकर "अधोर" मन्त्र से धूप दें, पश्चात तत्पुरुष मंत्र से लेप करें। अन्त में मंत्र से प्रत्येक मनियों को एक-एक बार अभिमन्त्रित कर फिर उसी मंत्र से सुमेरु को भी आमन्त्रित करना चाहिए। जिस मंत्र से माला की प्रतिष्ठा की गई हो। उसी मंत्र का जप करे। जप करने वाले को चाहिए कि वह उस माला में देव का आवृवान कर तथा शक्ति उसकी पूजा कर तत्पश्चात उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करे। इस प्रकार संत्कृत माला हमेशा जपकार्य में अभीष्टदायिनी तथा पाप-विनाशिनी मानी गयी है। सौ मनियों से बनी माला को मध्यमा, अनामिका और अंगुष्ठ पर रखकर घुमाते हुए जप करना चाहिए क्योंकि एक प्रकार के जप का ऐसा ही क्रम बताया गया है।

माला की प्रार्थना और शुद्धिकरण करने में विशेष फल प्राप्त होता। उसका मंत्र इस प्रकार है—

ॐ महामाये महामाले सर्वशक्तिस्वरूपिणि।
चतुर्वगेस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सद्विदा सेव॥
अविघ्नं कुरु माले त्वं गृहणामि दक्षिणे करे।
जपकाले च सिद्धयर्थं प्रसीद मम सिद्धये॥

हे महामाये। हे महामाले। हे सभी शक्तियों के रूपवाली। आपके भीतर धर्म-अर्थ-काम तथा मोक्ष ये सभी स्थापित है। अतः आप मेरे लिए सिद्धि प्रदायिनी हों। हे माले। आप मेरे विघ्नों को दूर करने वाली हों, आपको मैं दाहिने हाथ में ग्रहण कर रहा हूं। जप के समय मेरे मंत्र की सिद्धि के लिए आप प्रसन्न हों।

जप के लिए आसन भी आवश्यक है। आसनों से लोहा, काँसा और शीशा त्याज्य माने गये हैं। रोयेंदार आसन पर बैठ कर किया गया जाप निष्फल होता है। महामुनि वेद व्यास के मतानुसार विभिन्न प्रकार के आसनों पर बैठकर जाप करने से विभिन्न प्रकार के फल प्राप्त होते हैं।

काले मृगचर्म के आसन से ज्ञान की सिद्धि, व्याघ्र चर्म में मोक्ष लाभ, बाँस के बल्कल आदि को चटाई पर व्याधिनाश और कम्बल से दुःख दूर होता है। अभिचार कर्म में नीला आसन किसी को वश में करने के लिए किये जा रहे कर्म में लाल आसन होना चाहिए। ग्रह-पीड़ा, महामारी, आदि की शांति के निमित्त किए जा रहे कर्म में कंबल का आसन उत्तम माना गया है। चित्र कम्बल समस्त कार्यों के लिए कहा गया है। बांस के आसन पर जप से दारिद्रय का पत्थर पर व्याधि, भूमि पर दुःख छिद्र वाले काठ पर दौर्भाग्य, तृणासन पर धन और यश का नाश और पल्लव आसन पर चित्त भ्रम होता है।

प्रायः सभी ग्रन्थों में लिखा है, जो शौच तथा मूत्रोत्सर्ग से युक्त होकर जप तथा पूजनादि कार्य करता है वे सभी कार्य अपवित्र हो जाते हैं। मलिन वस्त्र, मलिन, केश, मुखदुर्गधि युक्त होकर जो जप करता है, तो इस जप को गुप्त रूप से निवास करने वाले देवगण शीघ्र ही जला देते हैं। जप के समय आलस्य, जंभाई, निद्रा, छींक, थूकना, भय, गुप्तांग का स्पर्श तथा क्रोधादि का त्याग करना चाहिए। इस प्रकार कथित विधान से शीघ्रता तथा विलम्ब के बिना पुरश्चरण की सिद्धि के लिये संकलित जप करना चाहिए। ईष्ट गुरु और मंत्र में एकता की भावना रखते हुए मन एकाग्र कर प्रातःकाल से लेकर मध्यान्ह पर्यन्त जप करना चाहिए। जितनी संख्या में जप

प्रारम्भ किया गया हो, उतनी संख्या तक प्रतिदिन जप करे, अगर कम या अधिक जप किया जाय तो वह भ्रष्ट हो जाता है। कृतयुग में जप का फल कल्योक्तानुसार ही मिलता है नेत्रता में द्विगुणित हो जाता है, द्वापर में तिगुना और कलियुग में चार गुणा फल मिलता है।

गायत्री जाप में खान-पान का भी विषय है। साधना, उपासना कला में भी क्या खाना-पीना चाहिए ?

कहा गया है कि साधक को चाहिए कि वह स्निग्ध, गरम, पका हुआ स्वलप भोजन करें. साथ ही ऐसा भोजन करे जिससे इन्द्रिय में कोई विकार उत्पन्न न हो।

गायत्री उपासना में समय का भी महत्व है। कौन समय पवित्र है, कौन-सा अशुभ है. इसकी भी व्याख्या की गई है। ग्रन्थों में इसका विवरण इस प्रकार दिया गया है।

बैशाख, श्रावण, कार्तिक और मार्गशीर्ष उपासना के लिये सर्वोत्तम बतलाये गये हैं। पूर्णिमा, पंचमी, द्वितीया, सप्तमी, त्रयोदशी और दशमी ये तिथियां समस्त कर्मों में प्रशस्त कही गयी हैं।

इन उत्तम समयों के साथ-साथ उन समयों का भी विवरण है, जिससे कि उपासना को वर्जित किया गया है। वैज्ञानिक दृष्टि से वातावरण उस समय अनुकूल नहीं रहता है। साधकों को इसका ध्यान रखना चाहिए। कहा गया है—ज्येष्ठ, अषाढ़ भाद्रपद, पौष और अधिक मास, मंगलवार, शनिवार, व्यतीपात वैधृति, अष्टमी, नवमी, षष्ठी, चतुर्थी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावस्या, प्रदोष, रात्रि, भरणी, कृतिका, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा-धनिष्ठा, श्रवण, जन्मनक्षत्र, मेष, वृष, कर्क तुला, कुम्भ

और मकर ये सभी महीने, दिन योग तिथियां, नक्षत्र और लग्न उपासना में वर्जित है।

इस समय में की गयी गायत्री उपासना, से कुछ भी फल नहीं मिलता है। गायत्री तंत्र में अत्यन्त दृढ़ता के साथ इन अवधियों में की गयी उपासना का वर्णन किया गया है। अतएव साधकों को ध्यान रखना चाहिए।

प्रत्येक उपासना या तंत्र सिद्धि कार्य में आसन आवश्यक है। आसन की लंबाई, चौड़ाई और ऊँचाई का भी अपना विधान है। काली पुराण में कहा गया है कि काष्ठ का आसन २४ अंगुल लम्बा, १६ अंगुल चौड़ा और ४ अंगुल ऊंचा होना चाहिए। ५ अंगुल से ऊँचा न होना चाहिये। वस्त्र का आसन दो हाथ से अधिक लम्बा और डेढ़ हाथ से अधिक चौड़ा न हो। पूजा आदि कार्य में तीन अंगुल ऊंचे आसन का प्रयोग करें। लोहा, काँसा और शीशे को छोड़कर सभी धातुओं का आसन श्रेष्ठ है।

उपासना में साधक को कुछ नियमों का अनिवार्य रूप से पालन करना आवश्यक है। साधक को चाहिये कि वह मैथुन सम्बन्धी बातों का परित्याग करे। साथ ही ऋतुकाल के बिना अपनी स्त्री का गमन भी न करे। कुटिलता, क्षौरकर्म तैलादिमर्दन, बिना निवेदन किया हुआ भोजन, बिना विचारा हुआ कार्य तथा उबटनादिका भी प्रयोग न करे। पंचगव्य तथा से स्नान करे, श्रुति-स्मृति पुराणोक्तमंत्रों से निरन्तर स्नान करे। मंत्र जापक तीन बार स्नान करे। असमर्थ हो तो दो बार नहीं तो, एक बार स्नान अवश्य करे। बिना स्नान किये बिना पितरों का तर्पण किये, अपवित्र हाथ से, अंगों या सिर ढंककर बोलते हुए जो जप किया जाता है, तब वह जप निष्फल होता

है। जप होम और पूजनादि कार्यों में तीखे पदार्थ, नमक, माँस काँस्यपात्र रहित अन्न, कीटादि से दूषित अन्न, असत्य-भाषण अन्याय कार्य तथा दूसरे का पूजन नहीं करना चाहिए। बिना परिश्रम के उचित नित्यनैमित्तिक कार्य को करना चाहिए। स्त्री-शूद्र, पतित, व्रात्य, नास्तिकादि से भाषण न करे तथा जूठे मुंह से न बोले। असत्य भाषण तथा कुटिलता का त्याग करे। परम मित्रों से भी न बोले, मौन धारण करे।

सिर बांधे हुए बंडी पहने, नग्न शिखा खोले हुए, कंठ वस्त्र लगाए हुए अपवित्र शरीर से, अपवित्र हाथ से और बोलते हुए जप नहीं करना चाहिए। एक वस्त्र पहन कर भोजन, वेदपूजन पितृकर्म, दान, होम जप नहीं करना चाहिये। व्याग्रता, आलस्य, क्रोध, पांव फैलाना, दूसरों से बात करना और मिथ्या भाषण आदि का भी त्याग कर दे।

बिना आसन के सोये हुए, चलते हुए, खाते हुए, हाथों को बिना ढंके या सिर ढककर, चिन्ता से व्यग्र चित्त हो, क्षुधावस्था में भ्रान्तावस्था में, भूख से व्याकुल अवस्था में, मार्ग में अपवित्र स्थान में अन्धकार गृह में जूते पहने हुए, यान या शैय्या पर बैठकर, पैर को फैलाकर, वीभत्स आसन पर, यज्ञकाष्ठ पर, पाथर पद, भूमि पद, बिना आसन पर बैठे जप करना वर्जित माना गया है। मन्त्र का मन से ध्यान करें और जिह्वा को नहीं चलाये। सिर और गर्दन को न कंपाये और दाँतों को न दिखायें। उपर्युक्त दोषों के रहने पर यक्ष, राक्षस, भूत, सिद्ध, विद्याधर और सर्प"—ये सभी फल का अपहरण कर लेते हैं। गायत्री-मन्त्र को गुप्त ही रखना चाहिए।

ज्येष्ठ, आषाढ़, भाद्रपद, पौष मलमास तथा गुरू और शुक्र का अस्त इन सब का परित्याग, उपासना प्रयासपूर्वक करना

चाहिये। मंगलवार, शनिवार व्यतीपात, वैधृति लग्न, अष्टमी, नवमी, षष्ठी, चतुर्थी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावस्या, प्रदोष, रात्रि, भरणी, कृतिका, आर्द्रा, आश्लेषा, धनिष्ठा, श्रवण जन्मनक्षत्र, मेष, कर्क तुला, कुम्भ, मकर और अलिक लग्नादि में यह कर्म निश्चित रूप से न करे।

"शंकर संहिता" में इसका स्पष्ट उल्लेख है। उपासना स्थान का भी बड़ा महत्व है। किस स्थान पर करना चाहिए, किस स्थान में नहीं, इसकी भी विस्तृत व्याख्या नाना प्रकार के ग्रंथों में की गयी है। उन सब का सार यह है कि—पर्वतों व शिखर, नदी, किनारे विल्ववृक्ष के नीचे, जलाशय, गौशाला, देव मन्दिर, पीपल के नीचे, उद्यान, तुलसीवन, किसी पुण्यक्षेत्र अथवा गुरू के समीप तथा जहां भी चित्त एकाग्र रह सके, उस स्थान पर उपासना करने वाला पुरुष सिद्धि प्राप्त कर लेता है।

पावित्री धारण कर कुशोदक से जप स्थान को तथा कुशाग्र भाग से आसन को अभिसिञ्चित कर आधारादि स्थलों को नमस्कार कर 'पद्मासन अथवा स्वास्तिकासन सुखपूर्वक लगा-कर "ॐ भूः ॐ भुवः ऊँ स्वः', जपने के पश्चात आसन पर साधक को बैठना चाहिये। शनैः शने स्पष्ट रूप से जप करे जल्दी-जल्दी अथवा रुक-रुक कर तथा कभी कम और कभी अधिक जप न करे। एक स्वर में सीमित संख्या में ही जप करे।

जप की गति एक समान रखना ठीक बतलाया गया है। जाप समाप्त होने पर लम्बी साँस लेना या जाप रोकना वर्जित है। मुख दक्षिण दिशा में रखना वर्जित है। सभी ग्रंथों में कहा गया है कि—जपकर्ता पूर्व, पश्चिम अथवा उत्तराभिमुख होकर कुशासन पर पद्मासन अथवा स्वस्तिकासन से बैठकर गोमुखी में रख गायत्री मन्त्र का जप करे।

अत्यन्त प्रसन्न मन और पूर्व श्रद्धा तथा विश्वास के साथ किया गया, जाप ही फलदायी होता है। उपासना की सफलता आस्था विश्वास पर निर्भर है। उपासना के लिए बतलाया गया कि—प्रातः नाभि के समीप हाथ को रखकर, मध्याह्न में हृदय के समीप रखकर और सायंकाल हाथ को नाक के अग्रभाग के समीप रखकर जप करना चाहिए।

खुला जाप करने के परिणाम में विषय में बृहद् योगियाल-वल्क्य स्मृति में कहा गया है—

यक्षराक्षसभूतानि सिद्धविद्याधरोरगाः।
हरिन्त प्रसभं यस्या तस्माद् गुप्तं समाचरेत्॥

यक्ष, राक्षस, भूत, सिद्ध, विद्याधर तथा सर्प—ये सभी हाथ को बिना ढके हुए जप के फल का हरण कर लेते हैं। अतः माला को ढक्कर ही जप करना चाहिये।

व्यासस्मृति में यही विधान है।

यस्मिन् स्थाने जपं कत्वा शक्रो हरिति तज्जपम्।
तन्मृदा लक्ष्म कुर्वीत ललाटे तिलकाकृतिः॥

जिस आसन पर बैठकर जप किया है, उसके नीचे की मृतिका मस्तक में लगानी चाहिए, अन्यथा जप के फल को इन्द्र ले लेता है।

अप्रोक्षितजपस्थानाच्छक्रो हरति यज्जपम्।
तस्माज्जपान्ते तत्प्रोक्ष्य ललाटे तिलकं क्रियात्॥

बिना जल से मार्जित स्थान में किये गये जप के फल को इन्द्र हरण कर लेता है। अतः जप के बाद उस स्थल को जल से प्रोक्षण कर ललाट में तिलक करना चाहिये।

इसके बिना जाप फलदायी नहीं होता है। साथ ही विधान

है कि दैनिक गायत्री-मंत्र जप करने के बाद जपकर्ता एक बार शताक्षरा गायत्री का और एक बार चौबीस अक्षरों वाली ब्रह्म गायत्री का जप अवश्य करें अन्यथा जपकर्त्ता को जप करने का फल प्राप्त नहीं होता। कई बार जाप में माला छूटकर गिर जाती है। प्रमादवश अगर माला हाथ से छूटकर गिरे तब १०८ बार जप पुनः करे तथा निषिद अंग को स्पर्श कर लेने पर हाथों को धोकर जप करे।

उपासना काल में अगर किसी परिजन की मृत्यु हो जाये तो भी साधक को साधना का त्याग नहीं करना चाहिए। उसे जप करना ही चाहिए।

उपासना का क्रम सूतक में चालू रखा जा सकता है, पर अगर साधक नु मुखाग्नि दी हो तो फिर १३ दिन उपासना स्थगित रखना अनिवार्य है।

मन्दिर के आगे पीछे बायें मूर्ति के समीप गर्भ गृह में और शिवालय में उपर्युक्त प्रकार से जप, प्रदक्षिणा और होम नहीं करना चाहिये। शिव, सूर्य, अग्नि, गुरु तथा प्रज्वलित दीप के समीप किया गया जप उत्तम माना गया है।

जप-साधना के भी भेद हैं। इनका भी वर्गीकरण किया गया है। जप-यज्ञ तीन प्रकार का माना गया है—उपाँशु और मानस। इन तीनों जप-यज्ञों में उत्तमोत्तम जप श्रेष्ठ कहा गया है। उदात्त, अनुदात, स्वरित, पद, अक्षर और शब्द के स्पष्ट होने का ध्यान रखते हुए वाणी से मंत्र का स्पष्ट उच्चारण वाचिक जप कहा जाता है मानसजप समस्त मंत्रों में उत्तम, उपांशुजप मध्यम और वाचिकजप अधम कहा गया है। मन-बुद्धि के द्वारा मंत्र के वर्ण, शब्द और अर्थ का चिन्तन करना हो

मानस जप कहलाता है। दूसरों को सुनायी न दे, इस प्रकार थोड़ा-थोड़ा होंठ हिलाकर मन्द स्वर से मंत्र का उच्चारण करना "उपांशु" जप कहलाता है।"

इस साधना में मनोवांछित फल दिशानुकल भी मिलते है, कहा गया है कि—वशीकरण के लिये पूर्वाभिमुख, अभिचार के लिये दक्षिणाभिमुख, धन के लिये पश्चिमाभिमुख और शान्ति के लिये उत्तराभिमुख होकर जप विधिपूर्वक करना चाहिये। माला के अभाव में "करमाला" का भी विधान है। शास्त्र समस्त करमाला का विधान इस प्रकार है—

जप में तर्जनी, मध्यमा, अनामिका कनिष्ठका—ये क्रमशः चार अगुलियाँ उपयोगी हैं, जिनमें तीन अंगुलियों के तीन-तीन पर्व एवं मध्यमा का एक पर्व उपयोगी है। मध्यमा के अवशिष्ट दो पर्वो को सुमेरू समझना चाहिए। अनामिका के मध्य-पर्व से आरम्भ कर कनिष्ठा के मूल से होते हुए तर्जनी के मूल पर्व तक दस पर्वो में जप करना चाहिए। हथेली के थोड़ा झुकने पर अंगुलियों को अलग-अलग न होने दें, क्योंकि अंगुलियों के अलग-अलग होने पर जो छिद्र होता है, उसमें जपस्त्रवित हो कर क्षीण हो जाता है। अंगुली के अग्रगभाग में तथा सुमेरू के लंघन में जो जप किया जाता है और जो जप पर्वो के सन्धियों या जोड़ों में किया जाता है, वह सब का सब निष्फल हो जाता है। गणनाविधि का उल्लंघन कर जो जप किया जाता है, उसे राक्षस ग्रहण कर लेते हैं। अतः साधक को चाहिये कि वह गणनाविधि से सर्वथा संख्या में ही जप करे। जप की संख्या करनी चाहिये।

हाथ को हृदय में लगाकर हाथ की अंगुलियों को तिरछा कर तथा वस्त्र से हाथों को आच्छादित कर दाहिने हाथ से

सदा जप करे। अनामिका के मध्य से आरम्भ कर तर्जनी के मलपर्व तक विहित दस पर्वो में क्रमशः जप करना चाहिये। मध्यमा अंगुलि के मल में जो दो पर्व होते हैं, उन्हें सुमेरू जानना चाहिये और इसका उल्लंघन जप में कभी भी न हो।" उपाँशु-जप मध्यमा अंगुली के मध्य में जपमाला रखकर करे। तर्जनी द्वारा माला का स्पर्श कर जप कभी न करे। सुमेरू का उल्लंघन करने पर जप का फल नहीं प्राप्त होता है। सुमेरू के पास जप करते-करते जब पहुँचे, तो उसको लाँघे नहीं, वरन् वहीं से जप करता हुआ लौटे।

गायत्री उपासना का यह सम्पूर्ण विधान ध्यान में रखकर साधक को साधना की तैयारी करनी चाहिए। साधना काल में गायत्री का चिंतन करना चाहिए। चिंतन इस प्रकार करे—

भगवती गायत्री के पाँच मुख, दश भुजायें और पन्द्रह नेत्र है। पाँचों मुख क्रम से मोती, मूंगा, सुवर्ण, स्वच्छ एवं शुभ्र है। जो रमा सरस्वती, माया चामर और दर्पण से समन्ति है—जिसके रूपादि अवश्य षडंग देवता तथा मंत्रों के द्वारा ज्ञात होते हैं, जो दुर्गा के स्वरूप से सिंह पर, महेश्वरी के रूप से बैल, पर, वैष्णवों के रूप से गरूड़ पर एवं ब्रह्माणी के स्वरूप से हंस के वाहन पर विराजमान रहा करती हैं। जिनका मुकुट और किरीट अर्धचन्द्र से समन्वित है और कुण्डल मणियों से युक्त है, रत्नों से जड़े हुए कर्ण भूषण, सौभाग्य समन्वित ग्रैवेयक (कण्ठ-हार) नूपुर, अंगुठी, केयर और कंकण आदि आभूषणों से अलंकृत हैं। यह देवियों विविध वस्त्रों और भषणों से एवं मालाओं से विभूषित होकर सूर्य मण्डल में निवास करती है इनके कर कमलों में वरदान, अभयदान, पद्मा का जोड़ा, शंख, चक्र, गदा, अंकुश, शुभ्र कपाल, जयमाला शोभायमान हैं।

साधक उपरोक्त सभी बातों का ध्यान रखकर अगर गायत्री का जाप करें तो सफलता प्राप्त होना लगभग निश्चित रहता है।

अब गायत्री जाप के बाद होम में पूर्णाहुति का विधान प्रस्तुत है।

पूर्णाहुति

"ॐ अद्येत्यादि देश कालो संकीर्त्य-मम मनोअभिलषित धर्मार्थ कामादियथप्सिता युरारोग्यैश्वर्य पुत्र-पशु-सखि-मुहत्सम्बन्धिवन्ध्वादि प्राप्तये ब्राह्मण द्वारा मत्कारिते अमुक कर्मणि श्रीगणपति गोर्याद्यावाहितेष्ट देवता प्रीतये च स्वैनेन्त्रैर्य-वतिल तण्डुलाज्याहुतिभिः परिपूर्णता सिद्वर्य वसोर्धारा समन्वित पूर्णाहुति होममहं करिष्ये।"

इस प्रकार से संकल्प करके पान, सुपारी, फल, चावल आदि के साथ भीतर शुद्ध घी भरे हुए नारियल को कोशेय पट्ट, कौशुम्भ सूत्र फूलों की माला आदि से लपेटकर 'पूर्णाहुत्यै नमः' कह फिर उसकी पंचोपचार पूजा करें। इसके बाद उसे स्त्रुवा में रखकर हृदय में गायत्री का ध्यान करें। उस समय शंख और घण्टी बजाए। इसके बाद उस नारियल का होम कर दिया जाए। होम करते समय निम्न मंत्र पढ़ें।

"ॐ मूर्धन दिवो अरति पृथ्विया
वैश्वानमृत आजातमग्निम्।
कदि सम्राजमतिथिच्जनानामासनना
पात्रं जनयन्त देवाः॥

ॐ पूर्णा दवि परापत सुपूर्णा पुनरापत वस्नेव विक्रीणा वहां इष मूर्ज शत क्रतो स्वाहा।"

'स्वाहा' उच्चारण के साथ दोनों हाथों से होम दें इसके बाद—

इदमग्नये वैश्वानराय वसुरुद्रादित्येभ्यः शतक्रतवे सप्तवते अग्नये अद्भ्यः पुरुषार्थं श्रियै च न मम ॥

इसके बाद शुद्ध घी की धारा दें।

"ॐ वसोः पावत्रमसि शतधार वसोः पवित्रमसि सहस्त्र-धारम।

देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्ता कामपुक्षा स्वाहा।

इदं वाजादिभ्योअग्नये विष्णवे रुद्राय सौमाय वैश्वानराय च न मम।"

अग्नि प्रार्थना—

"ॐ श्रद्धाँ मेघा यशः प्रज्ञां विद्यां पुष्टिं श्रियं बलम्।
तेज आयुष्यमारोग्यं देहि में हव्य वाहन ॥
भो भो अग्ने। महाशक्ते सर्व कर्म प्रसाधन।
कर्मान्तरेअपि सम्प्राप्त सान्निध्यं कुरु सर्वदा ॥"

भस्म विधान—

त्र्यायुष करणच्च-ततः कुण्डात्स्थण्डिलाद्वारा दग्धी भुता-पूर्णाहुति नारिकेलात सुवाविपुष्ठेन विभूति गृहीत्वा दक्षिणा अनामिकया तिलक धारणमित्याचार्यः पूर्वात्मनः पश्चाद् यज-मानस्य भस्माडकये तंत्र मंत्र—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्ननेरिति ललाटे (अनामिका से मस्तक के अग्रभाग पर तिलक करें।

कश्यस्य त्र्यायुषमिति ग्रीवायाम (कण्ठ पर तिलक)
यद्यवेषु त्रयायुषमिति दक्षिण बाहु मूले (दाँए बाँये)।

———

गायत्री सिद्धियां

गायत्री साधना एवं उपासना के द्वारा व्यक्ति नाना प्रकार की सिद्धियां, उपलब्धियां प्राप्त कर सकता है। श्रद्धा, नियम और विश्वास के कारण उनमें अलौकिक शक्तियां स्वयं आ जाती हैं। जीवन में वह सर्व सुख प्राप्त कर सकता है। साधक को सफलता मिल रही है अथवा नहीं, इसका आभास उसे होने लगता है और साधना में सफलता या सिद्धि प्राप्त हो रही है या नहीं इसका निरीक्षण परीक्षण करते रहना चाहिए, क्योंकि सफलता न मिलने पर विधि विधान की त्रुटियों की ओर ध्यान देकर उन्हें दूर करने का यत्न करना चाहिए। साधक ने जो साधना की है, उसके अनुरूप ही उसे सिद्धि प्राप्त होनी चाहिए। सिद्धि के संकेत प्रत्येक साधक को दिखलायी देते हैं। अनुमान लगाया जा सकता है कि सिद्धि का मार्ग कहां तक सशक्त हो चुका है। सिद्धि के मूल लक्षण प्रस्तुत हैं—

विधि विधान से साधना के नियमों का रीति से पालन करने पर गायत्री साधना के परिणाम शीघ्र और आशाजनक निकलते हैं। गायत्री साधना कभी निष्फल नहीं जाती है। जप आरम्भ करते ही साधक के मन में एक विशेष हलचल-सो होती है, एक अद्‌भुत चैतन्यता और परिवर्तन की अनुभूति होती है साधना अनुकूल दिशा में चल रही है तो तप का फल सिद्धि है। जितना तप किया जायेगा, उतनी ही सफलता मिलती है। साधक स्वयं अनुभव करता है कि साधना आरम्भ करने के पूर्व जो उसका स्तर था, वह उससे ऊंचा उठ रहा है। विचारों, और वृत्तियों में परिवर्तन हो रहा है। दिन-दिन नया जीवन,

नई शक्ति और स्फूर्ति आ रही है। कार्य करने को उमंगें मन में उठती हैं, लगता है उसके शरीर के रोम-रोम में चैतन्य शक्ति भर गयी है। यौवन काल में जैसा उत्साह बना रहता है, उससे भी अधिक साधक को अनुभव होता है। वह अपने में क्रियाशीलता पाता है। आशा की लहरें हृदय में हिलोरें लेती रहती हैं। अग्नि में मैली वस्तुओं का मैल छूट जाता है। तप की अग्नि में तपने से साधक के विचार, कु-प्रवृत्तियां स्वयं नष्ट होने लगती हैं, विचार पवित्र होते हैं। असुरता देवत्व में परिणत होने लगती है। विवेक और ज्ञान का उदय होता है, आत्म निरीक्षण की क्षमता प्राप्त होती है। चरित्र में परिवर्तन आता है। जिन छोटी-समस्याओं में उलझा रहता था, वे सब अनावश्यक लगती हैं। साधक को माकसिक शान्ति की अनुभूति होती है। ऐसा लगता है कि लगातार अमृत रस टपक रहा है। अशान्ति उत्पन्न करने वाली परिस्थितियां का कुछ प्रभाव नहीं पड़ता है। स्थिरता गुण उत्पन्न होते हैं। सांसारिक दुःख उसे अपने पथ से विचलित नहीं कर सकता। अभाव उसे निराश नहीं करते। संकट में भी हंसने की शक्ति आ जाती है। वह सभी को प्रिय समझता है, किसी से ईर्ष्या, द्वेष व घृणा नहीं करता। परमार्थ वृत्ति उसके जीवन का अंग बन जाती है। इस वृत्ति से प्रेरित होकर वह सबको सहयोग देता है। बुराइयों के विरुद्ध आवाज उठाता है। पशु पक्षियों आत्मवत् व्यवहार करता है। उनके वासनाओं के ताण्डव स्वयं ही शांत हो जाते हैं। स्त्री जाति का सम्मान करता है। गायत्री के साधक को आर्थिक समस्याओं का सामना भी नहीं करना पड़ता परिस्थितियां अनुकूल बनती जाती है। व्यापार में उत्थान के लक्षण दिखलाई देते हैं आवश्यकताओं की पूर्ति होती रहती है। सहयोग मिलते रहते हैं विद्वता और प्रतिभा बढ़ती है।

मस्तिष्क में सदैव नवीन विचारों का सृजन होता रहता है। सिद्ध पुरुषों का आर्शीवाद प्राप्त हो जाता है। उसमें वरदान देने की क्षमता प्राप्त हो जाती है। भविष्य में होने वाली घटनाओं का पूर्व आभास पहले होने लगता है। दृष्टि पैनी हो जाती है। असाध्य रोगों को दूर कर देता है। वन्ध्या स्त्री की गोद को भर देता है, साधक के नेत्र चमकते रहते हैं। त्वचा कोमल व चिकनी हो जाती है। शरीर में हल्कापन आता है।

गायत्री मंत्र की साधना करने वाले साधक के मुख मंडल पर तेज, ओज, आकर्षण प्रभाव उत्पन्न हो जाता है। नेत्रों में एक आकर्षण उत्पन्न हो जाता है। वाणी में प्रभाव, गम्भीरता और सत्यता प्रकट होती है।

गायत्री मन्त्र की साधना करने वाला साधक कुछ समय बाद अपने भीतर एक शक्ति, तेज, ओजस्विता, प्रकाश का अनुभव करने लगता है। अंग-प्रत्यंग में एक शक्ति का जन्म हो जाता है।

गायत्री मंत्र का प्रभाव रोग-मुक्ति के लिए चमत्कारिक है। साधक को चाहिए कि वह स्वयं को अथवा किसी अन्य को रोग-मुक्त करने से पूर्व यह ज्ञात अवश्य कर ले कि रोग किस प्रकार का है। वातज अथवा कफजनित। तदनुसार वह मन्त्र जपते समय प्रत्येक बार मन्त्र के अंत में तीन बार इस बीजाक्षर का उच्चारण करे—कफ एवं पित्त के रोगों में 'ऐं' और वात रोग में 'हूं'।

गायत्री मंत्र की साधना करने वाला साधक कुछ समय बाद उस अवस्था में पहुंच जाता है जहां सांसारिक, दैहिक, रागात्मक, भोगात्मक मायामोह क्षीण समाप्त हो जाते हैं।

वह हर्ष व विषाद से परे जीवनयापन करता है। वह अपनी शक्ति और तप का कुछ भाग दूसरों को भी दे सकता है। यौगिक भाषा में इसे शक्ति-पात कहा जाता है। शक्ति को विद्युत तरंगे पास बैठे व्यक्तियों को भी शान्ति प्रदान करती है। उसके सम्पर्क में रहने वाले व्यक्तियों को यह अनुभव होता है कि उसमें अलौकिक, अद्भुत असाधारण और चमत्कारी शक्तियां का अवतरण, हुआ है। गायत्री साधना के संबंध में अनेक ग्रंथों में विवरण इस प्रकार है —

राक्षसाश्च पिशाचाश्च महासर्पाश्च भीशणाः।
जपितान्नोपसर्पन्ति दूरादेव प्रयानित ते॥

गायत्री जप से राक्षस, पिशाच और सर्प ये साधक के समीप नहीं आते, वे दूर भाग जाते हैं।

स्तुता मया वरदा वेदमात
प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयुः प्राण प्रजां पशु कीति द्रविणं
ब्रह्मवर्चसं महां दत्वा ब्रजत ब्रह्मलोकम्॥

जपेन देवता नित्यं स्तूयमाना प्रसीदति।
प्रसन्ने विपुलान् गोत्रान् प्राप्नुवन्ति मनीषिणः

गायत्री मंत्र के जप से स्तुति करने पर देवता प्रसन्न होते हैं। देवताओं के प्रसन्न होने पर बुद्धिमान साधक अपने वंश की वृद्धि प्राप्त करते हैं।

जपेन देवता नित्यं स्तुवतः सम्प्रसीदति।
तस्मात्स्वाध्याय सम्पन्नो लभेत् सर्वान् मनोरथान्॥

गायत्री के जप से देवता प्रसन्न होते हैं। गायत्री का स्वाध्याय करने वाला समस्त मनोरथों को प्राप्त करता है।

जपेन येनेह कृतेन पुंसों
ददाति मार्गं सतिताअपि कुर्तु: ।।
अयंहि सर्वेष्टिकृतां वरिष्ठो
विधेः पदं यास्यति निर्विकल्पम् ।।

गायत्री के जप करने से जहकर्ता को सविता भी मार्ग देता है। यह गायत्री जप समस्त यज्ञों में श्रेष्ठ है, इसके जप से मनुष्य ब्रह्मपद को प्राप्त करता है।

सावित्रयाश्चैव माहात्म्यं ज्ञात्वा चैव यथार्थतः।
तस्यां मदुक्तं चोपास्य ब्रह्मभूयाय कल्पते ।।

गायत्री मंत्र के महत्व की यथार्थरूप से जानकर उसमें जो तत्व वर्णित है, उसकी उपासना कर जपकर्ता ब्रह्म रूप हो जाता है।

गायवी पावनीं जप्त्वा ज्ञात्वा याति परां गतिम्।
न गायत्रीविहीनस्य भद्रमत्र परम् च ।।

जो गायत्री मंत्र को जपकर और उसके महत्व को जानकर जप करता है, वह परम गति को प्राप्त करता है। जो गायत्री से रहित है, उसका न तो इस लोक में और न परलोक में कल्याण होता है।

यं यं पश्यति चक्षुर्भ्यां यं यं स्पृशति पाणिना।
यं यमाभाषते किंचित् तत्सर्वं पूतमेव च ।।

गायत्री जप करने वाला जिसको नेत्रों से देखता है, हाथों से स्पर्श करता है और वाणी से जो कुछ कहता है, वह पवित्र हो जाता है।

जो द्विज प्रतिदिन गायत्री का जप करता है, वह करोड़ों

जन्मों में किये हुये समस्त प्रकार के पापों से मुक्त होकर ब्रह्म की पदवी को प्राप्त करता है—

गायत्री यो जपेन्नित्यं प्राणायामसन्विताम् ।
प्रत्यक्षरामरैर्युक्तां स्वांगे विन्यस्यतामपि ।।
सर्वपापाद् विनिर्मुक्तो जन्मकोटि कृतादपि ।
ब्रह्मणः पदवीं प्राप्य स गच्छेत्प्रकृतेः परम् ।।

जो गायत्री के प्रत्येक अक्षर का उसके देवता सहित अपने शरीर में न्यास करके प्रतिदिन उसका जप करता है, वह करोड़ों जन्मों के किए हुए समस्त पापों से छुटकारा पा जाता है। इतना ही नहीं, वह ब्रह्मपद को प्राप्त होकर मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।

गायत्रया अक्षमालायां सायं प्रातश्च यो जपेत् ।
चतुर्णा खलु वेदानां समग्रं लभते फलम् ।।

जो प्रातः और सांय रुद्राक्ष की माला पर सौ बार (१०८—१००) का जप करता वह निश्चय ही चारों वेदों के अध्ययन का समस्त फल प्राप्त करता है।

गायत्री मक्षमालायाँ सांय प्रातश्च यो जपेत् ।
चतुर्णामपि वेदानां फलं प्राप्नोत्यसंशयम् ।।
त्रिसन्ध्यं योजपेन्नित्यं गायत्रीं हायनं द्विजः ।
तस्य पापं क्षयं याति जन्मकोटि-समुन्द्रवम् ।।
गायत्रयुच्चारमात्रेण पापकूटात्पुनाति च ।
स्वर्गाबर्गमाप्नोति जप्त्वा नित्यं द्विजोत्तमः ।।

जो प्रातः और सांय को रुद्राक्ष की माला पर गायत्री का जप करता है, वह चारों वेदों का फल प्राप्त करता है। जो एक वर्ष तक तीनों समय गायत्री का जप करता है, उसके

करोड़ों जन्मों के उपार्जित पाप नष्ट हो जाते हैं। गायत्री के उच्चारण मात्र से पाप से छुटकारा मिल जाता है। जो प्रतिदिन गायत्री का जप करता है, उसे स्वर्ग और मोक्ष—ये दोनों प्राप्त होते हैं।

जो द्विज प्रतिदन तीनों कालों में गायत्री का जप करता है, वह धार्मिक बन जाता है, जिससे उसका चित कभी भी अधर्म में प्रवृत्त नहीं होता—

प्रातः प्रदोषे रात्रौ वा जपेद् ब्रह्म मनोभवन्।
सर्वपापविमक्तोअसौ नाधर्मे कुरुते मनः॥

जो प्रातः, प्रदोष के समय में अथवा रात्रि में ब्रह्म में अपना चित्त लगाकर गायत्री का जप करता है, वह समस्त प्रकार के पापों से मुक्त हो जाता है और उसका मन कभी अधर्म में प्रवृत्त नहीं होता है।

गायत्रीं जपते यस्तु द्वौ कालौ ब्राह्मणः सदा।
तया राजन् स विज्ञेयः पंक्तिपावनपावनः॥

राजन्! जो ब्राह्मण दोनों समय गायत्री का जप करता है, वह उसके प्रभाव से पड्शक्ति-पावनों को भी पवित्र कर देता है।

गायत्री जपते यस्तु कल्पमुत्थाय वै द्विजः।
लिप्यते न स पापेन पदमपत्रमिवाम्भसा॥

जो द्विज प्रातःकाल उठकर गायत्री का जप करता है, वह पाप से वैसे ही लिप्त नहीं होता, जैसे कमल का पत्ता जल से लिप्त नहीं होता।

सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम्।
गायत्रीं जो जपेन्नित्यं न स पापैहि लिप्यते॥

हजार गायत्री का जप उत्तम सौ गायत्री का जप मध्यम और दस गायत्री का जप अधम कहा गया है। जो प्रतिदिन उत्तम, मध्यम अथवा अधम रूप में कही गई किसी भी प्रकार की गायत्री का जप करता है, वह पापों से लिप्त नहीं होता।

भीष्म पितामह ने युधिष्ठिर से कहा है—धर्मज्ञ नरेश्वर। जो रात-दिन गायत्री-मंत्र का जप करता है, वह पापों से लिप्त नहीं होता।

सावित्रीजाप्यनिरतः स्वर्गमाप्नोति मानवः।
गायत्रीजाप्यनिरतो मोक्षोपायं च विन्दति॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन स्नातः प्रयतमानसः।
गायत्रीं तु जपेद भक्तया सर्वपापप्राणशिनीम्।

जो मनुष्य गायत्री के जप में तत्पर है, वह स्वर्ग को प्राप्त करके मोक्ष को भी प्राप्त करता है। अतः सर्वथा प्रयत्नपूर्वक स्नान कर शुद्ध चित्त से समस्त पापों का विनाश करने वाली गायत्री का भक्ति पूर्वक जप करे।

इस प्रकार शंख सहिता में भी लिखा है।

गायत्री संस्मरेद्योगाट् स याति ब्रह्मणः पदम्।
गायत्रीजप्यनिरतो मोक्षोयाश्च विन्दति॥

जो गायत्री का स्थिर चित होकर स्मरण करता है, वह ब्रह्मपद को प्राप्त करता रहता है और जो गायत्री के जप में अनुरक्त रहता है, वह मोक्ष के उपाय को भी प्राप्त करता है।

'ऐहिकामुष्मिकं सर्व गायत्री जपतो भवेत।"

गायत्री जप से इहलोक और परलोक दोनों सुखद वन जाते हैं।

गयात्री जप्यनिरता गच्छन्त्यमततां द्विजाः
जो गायत्री जप में संलग्न हैं वे मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

न तथा वेदजपतः पापं निर्दहते द्विजः ।
तथा सावित्री जपतः सर्वपापैः प्रमुच्यते ।।

केवल वेद के स्वाध्याय से उस प्रकार अपने पापों को दग्ध नहीं कर सकता, जिस प्रकार वह सावित्री-जप के द्वारा समस्त पापों को दग्धकर मुक्त हो जाता है।

गायत्र्यास्तु पर नास्ति शोधनं पापकर्मणाम् ।।
महाव्याहृतिसंयुक्तां प्राणायामेन संयुताम् ।।
गायत्रीं प्रजपन् विप्रः सर्वपापैः प्रमुच्यते ।।

गायत्री से बढ़कर पाप-कर्मों का नाश करने वाला और कोई मन्त्र नहीं है। महाव्याहृति और प्राणायाम के सहित गायत्री का जप करने वाला ब्राह्मण समस्त पापों से मुक्त हो जाता है।

सर्वपापानि नश्यन्ति गायत्रीजपतो नृप ।

हे राजन्। गायत्री के जप से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं।

गायत्रीजपकृद भक्त्या सर्वपापैः प्रमुच्यते ।

भक्तिपूर्वक गायत्री के जप करने से मनुष्य समस्त पापों से मुक्त हो जाता है।

सावित्रीमप्यधीयीत शुचौ देशे मिताशनः ।
अहिंसो मन्दको जप्यो मुच्यते सर्वकिल्विः ।।

जो पवित्र स्थान में मिताहारी होकर, हिंसा का सर्वथा त्यागकर, राग-द्वेष, मान-अपमान आदि से शून्य होकर मौन-भाव से सावित्री का जप करता है, वह सब पापों से मुक्त हो जाता है।

जपेन पापं शमयेदशेषं
यतत्कृतं जन्मपरम्परासु ।
जतेन भोगान् जयते च मृत्युं
जपेन सिद्धि लभते च मुक्तिम् ।।

जो पाप पूर्व जन्म-परम्परा से किये हैं, वे समस्त पाप गायत्री जप से नष्ट हो जाते हैं। गायत्री जप से मनुष्य भोगों को और मृत्यु को जीत लेता है। गायत्री जप से सिद्धि और मुक्ति की प्राप्ति होती है।

गायत्रीजप्य निरतो मुच्यतेअसत्प्रतिप्रहात

जो गायत्री के जप में संलग्न रहता है, वह असप्प्रतिग्रह-जनित पाप से मुक्त हो जाता है।

सप्रभं सत्यमानन्दं हृदये मण्डलेअपि च।
ध्यायन् जपेत्तदित्येतन्निष्कामो मुच्यतेअचिरात् ।।

जो द्विज अपने हृदय में एवं सूर्य, चन्द्र आदि मण्डल में सत्य आनन्दस्वरूप और प्रभायुक्त ब्रह्मा का ध्यान करता हुआ, निष्काम भाव से गायत्री-मंत्र का जप करता है, वह संसार के समस्त बंधनों से शीघ्र ही मुक्त हो जाता है।

योअधीतेअहन्येतां गायत्रीं वेदमातरम् ।
विज्ञायाँथ ब्रह्मचारी स याति परमां गतिम् ।"

जो ब्रह्मचारी वेदमाता गायत्री का प्रतिदिन अर्थज्ञान के साथ अध्ययन करता है, वह परम गति को प्राप्त होता है।

योअधीतेअहन्यहन्येतां सावित्रीं वेदमातरम् ।
विज्ञायार्थं ब्रह्मचारीं स याति परमां गतिम् ।।

जो ब्रह्मचारी वेदमाता सावित्री का प्रतिदिन अध्ययन करता है, वह परम गति को प्राप्त करता है।

योअधीतेअहन्यहन्येताँ सावित्रीं वेदमातरम् ।
विज्ञातार्थं ब्रह्मचारी स याति परमाँ गतिम् ।

जो ब्रह्मचारी वेदमाता गायत्री का प्रतिदिन अर्थज्ञान के साथ अध्ययन करता है, वह परम गति को प्राप्त करता है।

योअधीतेअहन्यहन्येतांस्त्रीणि वर्षाण्यतन्द्रितः
स ब्रह्मा परमभ्येति वायुभूतः खमूर्तिमान् ।

जो साधक आलस्य को त्यागकर तीन वर्ष तक प्रतिदिन एकाग्रचित होकर गायत्री का जप करता है, वह पवन रूप और आकाश रूप होकर परब्रह्मा पद को प्राप्त करता है।

इसी प्रकार बृहद योगियाज्ञवल्क्यस्मृति में भी लिखा है।

एतदक्षमेताँ च जपन् व्याहृतिपूविकाम् ।
सन्ध्ययोर्वेदविद् विप्रो वेदपुण्येन युज्जयते ॥

इस ॐ अक्षर और व्याहृतिपूर्वक सावित्री का दोनों सन्ध्याओं में जप करता हुआ वेदज्ञ ब्राह्मण समस्त वेदाध्ययन पाठ करने का पुण्य-फल प्राप्त करता है।

बृहद् योगियाज्ञवल्क्यस्मृति में भी यही लिखा है।

गायत्रया वेदमातुस्तु जपमात्रेख केवलम् ।
ब्रह्मण्यं सुस्थिरं सम्यग् गायत्री तादशी शिवा ॥

वेदमाता गायत्री के केवल जप-मात्र से ब्राह्मणत्व सदा-सर्वदा सुरक्षित रहता है तथा उसी प्रकार गायत्री भी सदा कल्याणकारी होती है।

गायत्रीजप्यनिरता ब्राह्मण ब्रह्मचिन्तकाः ।
सूर्योपस्थाननिरतास्तस्य सायुज्यभागिनः ॥

जो ब्राह्मण गायत्री-जपपरायण तथा ब्रह्मचिन्तक एवं सूर्यो-

पस्थान करने वाले हैं, वे उस परब्रह्म परमात्मा के सायुज्य रूप के भागी हैं।

इदमाह्निकमव्यग्रं कुर्वदिनियतैः सदा।
नृपैर्भरतशार्दूल प्राप्यते श्री रनुत्तमा॥

भरतसिंह! जो राजा मन और इन्द्रियों को वश में कर शान्तिपूर्वक प्रतिदिन गायत्री का मंत्र का जप करते हैं, उन्हें सर्वोतम सम्पत्ति प्राप्त होती है।

यक्ष-विद्याधरत्वं वा गन्धर्वत्वमथापि वा।
देवत्वमथवां राज्यं भूलोके हतकण्टकम्॥

गायत्री के जप से मनुष्य यक्षयोनि, विद्याधरयोनि अथवा गन्धर्वयोनि अथवा देवयोनि तक को प्राप्त करता है अथवा भू लोक में निस्कण्टक राज्य प्राप्त करता है।

भगवती गायत्री देवी ने भी स्वयं अपने जप का महत्व इस प्रकार कहा है—

मदीयेन तु जाप्येन जन्मभिस्तु त्रिभिः कृतम्।
ब्रह्महत्यासमं पापं तक्षणादेव नश्यति॥
दशभिजन्मभिर्जातं शतेन च पुराकृतम।
त्रियुगेन सहस्त्रेण गायत्री हन्ति किल्विषम्॥
एवं ज्ञात्वा सदा पूता जाप्ये तु मम वे कृते।
भविष्यध्यं न सन्देहो नात्र कार्या विचारणा।
प्रणवेन त्रिमात्रेण सार्द्धं जप्त्वा विशेषतः।
पूताः सर्वे न सन्देहो जप्त्वा माँ शिरसा सह॥
अष्टक्षरा स्थिता चाहं जगद्व्याप्तं मयात्विदम्।
माताऽहं सर्ववेदानां पदैः सर्वैरलङ्कृता॥

जप्त्वा माँ भक्तितः सिद्धि यास्यन्ति द्विजसत्तमा ।
प्राधान्यं मम जाप्येन सर्वेषां वो भविष्यति ॥
गायत्रीमातसारोऽपि वरं विप्रः सुसंयतः ।
नायन्त्रितश्चत्वेंदी सर्वाशी सर्वबिक्रयी ॥
(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड)

मेरे जप करने मात्र से तीन जन्मों के किये गये ब्रह्महत्या के पाप तत्काल हो जाते हैं। गायत्री दस बार जपने से वर्तमान जन्म के, सौ बार जपने से पिछले जन्म के और एक हजार बार जपने से तीनों युगों के पाप नष्ट हो जाते हैं। ऐसा जानकर मेरे जप करने मात्र से ही आप सभी सदा पवित्र हो जायेंगे, इसमें सन्देह की तनिक भी गुंजाइश नहीं है। तीन प्रणव के साथ जप कर तथा विशेषकर गायत्री शीर्षक के साथ जप कर भी पवित्र होते हैं इसमें सन्देह की कोई बात नहीं। मेरे प्रत्येक पाद में आठ-आठ अक्षर हैं। मुझमें समस्त संसार व्याप्त है। मैं समस्त वेदों की जननी हूँ और समस्त पदों से विभूषित हूँ। श्रेष्ठ द्विजगण भक्तिपूर्वक मेरे जप करने से सिद्धि को प्राप्त करते हैं। मेरे जप मात्र से आप से आप सभी को प्रधानता होगी। केवल गायत्री मंत्र से ही सन्तुष्ट रहने वाला जितेन्द्रिय ब्राह्मण श्रेष्ठ है, किन्तु चारों वेदों को जानने वाला भी जो असंयमी, सर्वभक्षी और सर्वविक्रेयी है, वह श्रेष्ठ नहीं है।

कामकामो लभेत्काम गतिकामस्तु सद्गतिम् ।
अकामस्तु तदाप्नोति यद्विष्णोः परमं पदम् ॥
(विष्णुधर्मोत्तरपुराण)

जपकर्त्ता अगर किसी कामना के लिए जप करे तो वह उस कामना को प्राप्त करता है। अगर वह उत्तम गति की इच्छा से गायत्री जप करे तो सद्गती को प्राप्त करता है। अगर वह

अकाम होकर निष्कामभाव से गायत्री का जप करे, तो भगवान विष्णु का जो परम पद है, उसे प्राप्त करता है।

यथा कश्चित्ञ्जप्तैषा देवी परमपावनी।
सर्वकामप्रदा प्रोक्ता विधिना किं पुनर्नृपः॥

राजन्, चाहे जिस किसी प्रकार भी जपी हुई यह परम पावन देवी समस्त कामनाओं को देने वाली कही गई है। अगर विधि-विधान से जपी गई हो, तो फिर कहना ही क्या है।

सकृज्जपश्च गायत्र्याः पापं दिनभवं हरेत्।
दशबारं जपेनैव नश्येत्पापं दिवानिशम्॥
शतबारं जपश्चैव पापं मासार्जितं हरेत्।
सहस्रधा जपश्चैव कल्मषं वत्सरार्जितम्॥
लक्षो जन्मकृतं पापं दशलक्षोऽन्यजन्मजम्।
सर्वजन्मकृतं पापं शतलक्षाद् विनश्यति॥
करोति मुक्तिं विप्राणां जपो दशगुणस्ततः।
(देवीभागवत)

गायत्री का एक बार जप करने से दिन में किए हुए समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। दस बार जप करने से दिन और रात के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। सौ बार जप करने से महीने भर के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। एक हजार बार जप करने से साल भर के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। एक लाख बार जप करने से इस जन्म के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। और दस लाख बार जप करने से दूसरे जन्म के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और एक करोड़ जप करने से समस्त जन्मों के किए हुए पाप नष्ट हो जाते हैं और दस करोड़ जप करने से ब्राह्मणों की मुक्ति हो जाती है।

एकधा दशधा वायः शतधा वा एठेदिमाम्।
एकाकी बहुभिर्वापि संसिद्ध्येदुत्तरोत्तरम्।

गायत्री मंत्र को एक बार, दस बार अथवा सौ बार पढ़े। गायत्री मंत्र को एक बार अथवा अनेक बार पढ़ने से मनुष्य उत्तरोत्तर सिद्धि को प्राप्त करता है।

हवन के फल

पद्मानां लक्षहोनेन घृताक्तानां हुताशने।
प्राप्नोति निखिलं मोक्षं सिध्यत्येव न संशय॥

एक लाख घृताक्त कमल के पुष्पों से हवन करने पर साधक सम्पूर्ण मनोरथों को प्राप्त कर लेता है। मुक्ति भी सुलभ हो जाती है, इसमें कोई संशय नहीं।

पंचविशतिलक्षेण दध्ना क्षीरेण वा हुतात्।
स्वदेहे सिध्यते जन्तुर्महर्षीणां मतं यथा।

पच्चीस लाख गायत्री के जप तथा दही और दूध से हवन करने पर साधक सिद्धि हो जाता है, यह महर्षियों का कथन है।

गुडूच्याः पर्वविछिन्नाः पयोक्ता जुहुयाद् द्विजः।
एवं मृत्युञ्जयो होम सर्वव्याधिविनाशनः॥
आम्रस्य जुहुयात्पत्रै पयोक्तैर्ज्वरशान्तये।
वचाभिः पयसाक्ताभिः क्षयं हुत्वा विनाशयेत्॥
मधुत्रितयहोमेन राजयक्ष्मा विनश्यति।
निवेद्य भास्करायान्नं पायसं होमपूर्वकम्॥
राज्यक्ष्माभिभूतं च प्राशयेच्छान्तिमाप्नुयात्।
लताः पर्वसु विच्छिद्य सोमस्य जुहुयाद् द्विजः॥
सोमे सूर्येण संयुक्ते पयोक्ताः क्षयशान्तये।
कुसुमैः शंखवृक्षस्य हुत्वा कुष्ठं विनाशयेत्॥

अपस्मारविनाशः स्यादपामार्गस्य तण्डुलैः ।
क्षीरवृक्षसमिद्धोमान्दुमान्दोऽपि विनश्यति ।।
औदुम्बरसमिद्धोमादतिमेहः क्षयं व्रजेत् ।
प्रमेहं शमयेद् हुत्वा मधुनेक्षुरसेन वा ।।
मधुत्रितयहोमेन नयेच्छांति मसूरिकाम् ।
कपिलासर्पिषा हुत्वा नयेच्छार्न्ति मसूरिकाम् ।।
उदुम्बरवटाश्वत्थैर्गागजाश्वामयं हरेत् ।
पिपीलिका मधुवल्मीके गृहे जाते शतं शतम् ।।
शमीसमिद्भिरन्नेन सर्पिषा जुहुयाद् द्विजः ।
तदुत्थं शान्तिमायाति शेषैस्तत्रः बलिं हरेत् ।।
अभ्रस्तनितभूकम्पा लक्ष्यादौ वनवेतसः ।
सप्ताहं जुहुयादेवं राष्ट्रे राज्यं सुखी भवेत् ।।

देवी भागवत

द्विज को चाहिए कि गुरुच को टुकड़े-टुकटे कर उन्हें क्षीर में भिगोकर अग्नि में आहुति दे । इस प्रकार के होम को 'मृत्युज्जय' कहते हैं । इसमें सम्पूर्ण व्याधियों का नाश करने की शक्ति है । ज्वर की शान्ति के लिए दुग्ध में भिगोये हुए आम के पत्रों से हवन करे । क्षोराक्त मीठे वचन का हवन करने से क्षयरोग दूर होता है । दूध, दही और घृत से किये हुए होम में राज-यक्ष्मा को दूर करने की शक्ति है । खीर का हवन कर उसे भगवान सूर्य को अर्पण करे । फिर प्रसाद के रूप से स्वयं खाये तो राजयक्ष्मा का उपद्रव शान्त हो जाता है । सोमलता को गांठों पर से अलग-अलग करके उसे दूध में भिगोकर क्षयरोग की शान्ति के लिए द्विज अमावस्या तिथि को हवन करे । शंख के वृक्ष के पुष्पों से हवन करके कुष्ठ रोग का निवारण करे । अपामार्ग के बीज से यदि हवन किया जाय, तो मृगी दूर हो

सकती है। क्षीरी वृक्ष की समिधा से हवन करने पर उन्माद रोग शान्त हो जाता है। गूलर की समिधा का हवन करने से असाध्य प्रमेह रोग दूर हो जाता है। मधु अथवा ईख के रस से हवन करके पुरुष प्रमेह रोग को शान्त करे। दूध, दही और घृत के हवन से चेचक रोग शान्त होता है। कपिला गौ के घृत से हवन करके भी चेचक रोग को शान्त किया जा सकता है। गूलर बट और पीपल की समिधाओं से शांत हवन कर गौ, घोड़े और हाथी के रोग को दूर करे। पिपीलिका और मधु-बल्मीकि संज्ञक जन्तुओं द्वारा घर में उपद्रव उपस्थित होने पर द्विज शर्मा की समिधाओं, खीर और घृत से प्रत्येक कार्य के लिए दो सौ बार हवन करे। इस प्रकार करने से वह उपद्रव शांत हो जाता है। अवशिष्ट पदार्थों से वहां बलि प्रदान करनी चाहिये। बिजली गिरने और भूकम्प आदि के लक्षित होने पर जंगली बेंत की समिधा से सात दिनों तक हवन करे। ऐसा करने से राष्ट्र में राज्य सुख विद्यमान रहता है।

अथ पुष्टिं श्रियं लक्ष्मीं पुष्पैर्हुत्वाऽऽप्नुयाद् द्विजः,
श्रीकामो जुहुयात् पद्मै रक्तैः श्रियमवाप्नुयात्।
हुत्वा श्रियमवाप्नोति जातीपुष्पैर्नवैः शुभैः,
शालितण्डुलहोमेन श्रियमाप्नोति पुष्कलाम्।
समिद्भिर्बिल्ववृक्षस्य हुत्वा श्रियमावाप्नुयात्,
बिल्वस्य शकलैर्हुत्वा पत्रैः पुष्पैः फलैरपि।
श्रियमाप्नोति परमां सूलस्य शकलैरपि,
समिद्भिर्बिल्ववृक्षस्य पायसेन च सर्पिषा।
शतं शतं च सप्ताहं हुत्वा श्रियमावाप्नुयात्,
लाजैस्त्रिमधुरोपेतैर्होमे कन्यामवाप्नुयात्।

अनेन विधिना वरमाप्नोति वाञ्छितम्,
रक्तोत्पलशतं हुत्वा सप्ताहं हेम चाप्नुयात्।
सूर्यबिम्बे जलं हुत्वा जलस्थं हेम चाप्नुयात्,
अन्नं हुत्वाऽऽप्नुयादन्नं व्रीहीन् व्रीहिपतिर्भवेत्।
करीषचूर्णेर्वत्सस्य हुत्वा पशुमवाप्नुयात्,
प्रियङ्ग-पायसाज्यैश्च भवेद्धोमादिभिः प्रजा।
निवेद्य भास्करायान्नं पायसं होमपूर्वकम्,
भोजयेदृतुस्नातां पुत्रं परमवात्नुयात्।
सप्रहोराभिरार्द्राभिरायुर्हुत्वा समाप्नुयात्,
समिद्भिः क्षीरवृक्षस्य हुत्वाऽऽयुषमवाप्नुयात्।
सप्ररोहाभिरार्द्राभिः रक्तभिर्मधुरत्रयै,
व्रीहीणां च शतं हुत्वा हेम चायुरवाप्नुयात्।
सुवर्णकुड्मलं हुत्वा शतमायुरवाप्नुयात्,
दूर्वाभिः पयसा वापि मधुना सर्पिषाऽपि वा।
शतं शतं च सप्ताहमपमृत्युं व्यपोहति,
न्यग्रोधसमिधो हुत्वा पायसं होमयेत्ततः।
शतः शतं च सप्ताहमपमृत्युं व्यपोहति।

तदन्तर पुष्टि श्री और लक्ष्मी की प्राप्ति के लिए द्विज को चाहिए कि पुष्पों की आहुति दे। लक्ष्मी चाहने वाला पुरुष लाल पुष्पों से हवन करे, इससे उसे लक्ष्मी प्राप्त हो जाती है। बिल्वफल के खण्डों, पत्रों और पुष्पों से हवन कर पुरुष उत्तम लक्ष्मी प्राप्त कर लेता है। समिधाएं भी बिल्ववृक्ष की ही होनी चाहिये। दूध और घृत से मिश्रित हवन करे। सात दिनों तक प्रतिदिन दो-दो सौ आहुतियां देने पर वह लक्ष्मी को पाने का अधिकारी होता है। तीन मधुओं से युक्त लाजा का हवन करने

से पुरुष को कन्या प्राप्त होती है। इस विधि का पालन करने से कन्या अभिलषित वर प्राप्त कर लेती है। एक सप्ताह तक लाल कमल की सौ आहुति देने पर सुवर्ण की प्राप्ति होती है। गायत्री मन्त्र का उच्चारण करके सूर्य का तर्पण करने से जल में छिपा हुआ सुवर्ण प्राप्त कर लेता है। अन्न का हवन करने से अन्न के तथा व्रीहि का हवन करने से पुरुष व्रीहि के स्वामी हो जाते हैं। बछड़े के गोबर के खण्डों का हवन करने से पुरुष पशुधन प्राप्त करता है। दूध और घृत मिश्रित प्रियङ्गु के हवन से प्रजा की अनुकूलता प्राप्त करता है। खीर बनाकर हवन करे और उसे भगवान सूर्य को अर्पण कर ऋतुस्नाता ब्राह्मणी को भोजन कराये तो पुरुष को श्रेष्ठ पुत्र की प्राप्ति होती है। पलाश के अग्रभाग से युक्त समिधा का हवन करके पुरुष दीर्घ आयु प्राप्त करता है। पीपल, गूलर, बट और पाकर की समिधा का हवन दीर्घ आयु प्रदान करने वाला है। क्षीरी वृक्षों की अग्रकाग युक्त समिधाओं से, जो तीनों मधुओं से आर्द्र हों तथा भीहियों से सौ आहुति देकर पुरुष सुवर्ण और दीर्घायु प्राप्त करता है। सुनहरे रंग के कमल से आहुति देने पर सौ वर्ष की आयु प्राप्त होती है। दूर्वा, दूध, मधु अथवा घृत से प्रतिदिन सौ-सौ आहुति देने पर एक सप्ताह में अपमृत्यु दूर होती है। ऐसे ही शमी की समिधा, अन्न, और घृत की एक सप्ताह एक दी हुई सौ सो आहुतियां अपमृत्यु का विनाश करती हैं। न्यग्रोध की समिधा का हवन करके खीर का हवन करे। एक सप्ताह तक प्रतिदिन सौ-सौ आहुतियाँ होनी चाहिये। इसके प्रभाव से अप मृत्यु दूर हो जाती है।

बिल्वं हुत्वाऽऽप्नुयाद्राज्यं समूलफलपल्लवम्।
हुत्वा पद्मशतं मासं राज्यमाप्नोत्यकण्टकम्॥

यवागूं ग्राममाप्नोति हुत्वा शालिसमन्वितम् ।
अश्वत्थसमिधो हुत्वा युद्धाद्धौ जयमाप्नुयात् ॥
अर्कस्य समिधौ हुत्वा सर्वत्र विजयी भवेत् ।
संयुक्तैः पयसा पत्रः पुष्पैर्वा वेतसस्य च ॥
पायसेन शतं हुत्वा सप्ताहं वृष्टिप्राप्नुयात् ।
नाभिदघ्ने जले जप्त्वा सप्ताहं वृष्टिमाप्नुयात् ॥
जले भस्म शतं शतं हुत्वा महावृष्टि निवारेयत् ।
पलाशाभिरवाप्नोति समद्भिर्ब्रह्मवर्चसम् ॥
पलाशकुसुमैर्हुत्वा सर्वमिष्टमवाप्नुयात् ।
पयो हुत्वाऽऽप्नुयान्मेधामाज्यं बुद्धिमवाप्नुयात् ॥
अभिमन्त्र्य पिबेद् ब्राह्मं रसं मेधावाप्नुयात् ।
पुष्पपोमे भवेद् वासस्तन्तुभिस्ताद्विधं पटम् ॥
लवणं मधुसम्मिश्रं हुत्वेत्टं वशमानेयत् ।
नयोदिष्टं वशं हुत्वा लक्ष्मीपुष्पैर्मधुप्लतैः ॥
(देवीभागवत्)

"मूल, फल और पल्लव सहित बिल्व की आहुति राज्य प्रदान करती है। कमल की सौ आहुति देने पर मानव निष्कंटक राज्य प्राप्त करता है। अगहनी के चूर्ण की लपसी का हवन युद्ध आदि के अवसर पर विजय प्रदान करता है। मदार की समिधा के हवन से मनुष्य सर्वत्र विजयी होता है। खीर के संयुक्त बेंत के पत्रों से अथवा खीर से यदि सौ आहुति दी जाय, तो सप्ताह में वृष्टि होती है अथवा नाभिपर्यन्त जल में खड़े होकर एक सप्ताह तक जप करने पर वृष्टि होती है। जल में भस्म की सौ आहुति देने से घोर वृष्टि बन्द हो जाती है। पलाश की समिधा से हवन करने पर ब्रह्मतेज प्राप्त होता है।

पलाश के पुष्पों की आहुतियाँ सम्पूर्ण अभीष्ट प्रदान करती है। दूध की आहुति मेधा तथा घृत की आहुति बुद्धि की प्राप्ति में सहायक होती है। ब्राह्मणी बूटी के रस को गायत्री मन्त्र से अभिमन्त्रित करके यदि पान किया जाय तो निर्मल बुद्धिप्राप्त होती है। ब्राह्मी बूटी के पुष्पों का हवन करने से सुगन्ध तथा तत्तुओं के हवन से उसी सदृश पट प्राप्त होते हैं। मधु-मिश्रित बिल्व-पुष्पों की आहुति इष्ट को वश में करने वाली है।

ध्यानकाले पापहरा हुतैषा सर्वकामदाः।
गायत्रयास्तु तिलैर्होमः सर्वपापप्रणाशनः॥
शांतिकामो यवैः कुर्यादायुष्कामो घृतेन च।
सिद्धार्थकै कर्मसिद्धयै पयसा ब्रह्मवर्चसे॥
पुत्रकामस्तथा दध्ना धान्यकामस्तु शालिभिः।
क्षीर वृक्षसमिद्भक्तु ग्रहपीडीशान्तये।
धनकामस्तथा बिल्वैः श्रीकामः कमलैस्तया॥
आरोज्यकामो दूर्वाभिर्गुरूत्पाते स एव हि।
सौभाग्येच्छुर्गुग्गुलानां विद्यार्थी पायसेन च॥
अयुतेनोक्तसिद्धिः स्याल्लक्षेण मनसेप्सितम्।
कोत्या ब्रह्मावधांमुक्तः कुलोद्धारी हरिर्भवेत्॥

ध्यान के समय अर्थात् ध्यान करने से गायत्री सब पापों को हर लेती है। यदि गायत्री का हवन किया जाय, तो यह सब कामनाओं को देती है। गायत्री का तिलों द्वारा किया गया होम सब पापों का विनाशक है। ग्रहपीड़ा आदि की शान्ति की कामना वाला पुरुष यवों से गायत्री का हवन करे, दीर्घजीवन की कामना वाला पुरुष घृत गायत्री का हवन करे। कार्य की सिद्धि के लिए पीले सरसों से, ब्रह्मावर्चस के लिये दूध से पुत्र

की कामना वाला पुरुष दही से, धान्यों की कामना वाला पुरुष धानों से, ग्रह पीड़ा की उपशान्ति के लिए क्षीरी दूध वाले बड़ आदि वृक्षों की समिधाओं से गायत्री का हवन करे। धन की अभिलाषा वाला पुरुष बिल्वफलों से, लक्ष्मी की कामना वाला पुरुष दूब से, कोई बड़ा भारी उत्पात आकर उपस्थित हो तो उसमें भी वही पूर्वोक्त प्रकार से ही अवलम्बनीय है अर्थात् दूर्वा से ही हवन करना चाहिये। सौभाग्य चाहने वाला गुग्गुलों से, विद्या चाहने वाला खीर से देवी का गायत्री का हवन करे। गायत्री मन्त्र के द्वारा दस हजार हवन से पूर्वोक्त सिद्धि होती है।

हुता देवी विशेषेण सर्वकामप्रदायिनी।
सर्वपापक्षयकारी वरदा भक्तवत्सला॥
शान्तिकामस्तु जुहुयात् सावित्रीमक्षतैः शुचिः।
हन्तुकामोऽपमृत्युं च घृतेन जुहुयात्तथा॥
श्रीमामस्तु तथा पद्मैर्बिल्वैः काञ्चनकामुकः।
ब्रह्मवर्चसकामस्तु पयसा जुहुयात्तथा॥
घृतप्लुतैस्तिलैर्वह्निं जुहुयात् सुसमाहितः।
गायत्र्ययुतहोमाच्च सर्वपापैः प्रमुच्यते॥
पापात्मा लक्षहोमेन पातकेभ्यः प्रमुच्यते।
अभीष्टं लोकमाप्नोति काममीप्सितम्॥
(शंखस्मृति)

वरदायिनी और भक्तवत्सला देवी गायत्री के उद्देश्य से यदि हवन किया जाय तो वह विशेष रूप से समस्त कामनाओं की पूर्ति करती है और सब प्रकार के पापों का विनाश करती है, शान्ति की कामना हो तो पवित्र होकर तन्दुलों से गायत्री का हवन करना चाहिये। यदि अपमृत्यु के निवारण की कामन

हो घृत से गायत्री का हवन करना चाहिये। लक्ष्मी की कामना वाले को कमलों से, सुवर्ण की कामना वाले को बिल्वफलों से और ब्रह्मवर्चस् को कामना वाले को दूध से गायत्री का हवन करना चाहिए। घृत से खूब सने हुए तिलों से एकाग्र मन होकर यदि अग्नि से हवन करें तो इस प्रकार के गायत्री के दस हजार आहुतियों के होम से होमकर्त्ता समस्त पापों से छुटकारा पा जाता है। पापात्मा घृताक्त तिलों के द्वारा लक्ष होम करने से समस्त पातकों से मुक्त हो जाता है और वह इस लोक में इच्छित कामनाओं को प्राप्त करता है तथा वह मरने के उपरान्त अभीष्ट को प्राप्त करता है।

त्रिरात्रोपोषितः सम्यग् घृतं हुत्वा सहस्रशः।
सहस्रं लाभमाप्नोति हुत्वाऽग्नो खदिरेन्धनम्॥

पालाशैः समिधैश्चैव घृताक्तानां हुताशने।
सहस्रं लाभमाप्नोति राहु-सूर्यसमागमे॥

हुत्वा तु खदिरं वह्नौ घृतावतं रक्तचन्दनम्।
सहस्रं हेममाप्नोति राहु-चन्द्रसमागमे॥

रक्तचन्दनमिश्रं तु सघृतं हव्यवांहने।
हुत्वा गोमयमाप्नोति सहस्रं गोमयं द्विजः॥

जाती-चम्पक-राजार्क-कुसुमानजां सहस्रशः।
हुत्वा वस्त्रमवाप्नोति घृताक्तानां हुताशने॥

सूर्यमण्डलबिम्बे च हुत्वा तोयं सहस्रशः।
सहस्रं प्राप्नुयाद् हैमं रौप्यमिन्दुमये हुते॥

'हवनकर्ता तीन रात्रि उपवासकर खैर की लकड़ी को घृत में डुबाकर उससे हवन करे तो हजारों की प्राप्ति होती है। पलाश की लकड़ी घी में डूबोकर सूर्य ग्रहण के समय गायत्री के

मंत्र से एक हजार हवन करे तो हजारों का लाभ होता है। खैर की लकड़ी और लाल चन्दन को घृत में डुबोकर चन्द्र ग्रहण में गायत्री-मंत्र से एक हजार हवन करे सुवर्ण की प्राप्ति होती है। लाल चन्दन से और घी से मिले हुए गाय के कण्डे को गायत्री-मंत्र से जो ब्राह्मण अग्नि में हवन करता है, उसको हजारों गोमेय (रत्न विशेष) की प्राप्ति होती है। मालती, चम्पा और राजार्क (मदार) के पुष्पों को घृत में मिलाकर गायत्री मंत्र से हवन करे तो हजारों वस्त्रों की प्राप्ति होती है। सूर्यमण्डल के बिम्ब में गायत्री के मंत्र से प्रतिदिन एक हजार जल द्वारा अर्घ्य-दान करे, तो सुवर्ण की प्राप्ति और चन्द्र मण्डल में गायत्री मंत्र से प्रतिदिन जल द्वारा अर्घ्य दान करे, तो चांदी की प्राप्ति होती है।

गोघृतेन सहस्त्रेण लोध्रणे जुहुयाद् यदि।
चौराग्निः मारुतोत्थानि भयानि न भवन्ति वै ॥

लोध का पुष्प गौ के घृत के साथ गायत्री-मंत्र से प्रतिदिन एक हजार हवन करे तो चोर अग्नि और वायु से उत्पन्न होने वाले भय निश्चित ही नहीं होते।

हुत्वा वेतसपत्राणि घृताक्तानि हुताशने।
लक्षाधिपस्य पदवीं सार्वभौमं न संशयः ॥
लक्षेण भस्महोमस्य हुत्वा ह्युत्तिष्टते जलात्।
आदित्याभिमुख स्थित्वा नाभिमात्रजले शुचौ ॥
गर्भपातादिप्रदरश्चान्ये स्त्रीणां महारुजः।
नाशमेष्यन्ति ते सर्वे मृतवत्सापिदुःखदाः ॥
तिलानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
सवकामसमृद्धात्मा परं स्थानमवाप्नुयात् ॥

यवानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
सर्वकामसमृद्धात्मा परां सिद्धिमवाप्नुयात् ॥

घृतस्याहुतिलक्षेण सर्वान् कामानवाप्नुयात्।
पञ्चगव्याशनो लक्षं जपेज्जातिस्मृतिर्भवेत् ॥

तदेव ह्यनले हुत्वा प्राप्नोति बहुसाधनम्।
अन्नादि-हवनान्नित्यमन्नाद्यं च भवेत् सदा ॥

जुहुयात् सर्वसाध्यानानाहुत्यायुतसंख्यया।
रक्तसिद्धार्थकान्-हुत्वा सर्वान् साधयते रिपून् ॥

लवणं मधुसंयुक्तं हुत्वा सर्ववशी भवेत्।
जुहुयात् सर्वसाध्यानानाहुत्यायुतसंख्यया।
रक्तसिद्धार्थकान्-हुत्वा सर्वान् साधयते रिपून् ॥

लवणं मधुसंयुक्तं हुत्वा सर्ववशी भवेत्।
हुत्वा भल्लातकं तैलं देशादेव प्रचालयेत्।
हुत्वा तु निम्बपत्राणि विद्वेषं शान्तये नृणाम् ॥

रक्तानां तण्डुलानाँ च घृताक्तानां हुताशनु।
हुत्वा बलमवाप्नोति शत्रुभिर्न स जीयते ॥

प्रत्यानयनसिद्ध्यर्थं मधुसर्पिः समन्वितम्।
गवाँ क्षीरं प्रदीप्तेऽग्नौ जुह्वतस्तत्प्रशाम्यति ॥

(गायत्रोपटल)

वेंत के पत्ते को घी में मिलाकर गायत्री मंत्र से अग्नि में हवन करने से मनुष्य लक्षाधिपति और सार्वभौम बन जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है। जो ग्रीष्म ऋतु में नाभिमात्र जल में खड़ा होकर गायत्री-मंत्र से एक लाख भस्म की आहुति देता है और जल के बाहर होकर पुनः गायत्री-मंत्र से सूर्य का उत्थान करता है, तो उसके प्रभाव से स्त्रियों के गर्भपात, प्रदर और

मृतवत्सा आदि समस्त दोष निश्चय ही नष्ट हो जाते हैं। घृत में तिल को मिलाकर गायत्री-मंत्र से अग्नि में एक लाख हवन करने से मनुष्य की समस्त कामनाएं पूर्ण हो जाती हैं और वह श्रेष्ठ स्थान को प्राप्त करता है। यव को घी में मिलाकर गायत्री मंत्र से अग्नि में एक लक्ष हवन करने से मनुष्य की सभी कामनाएँ पूर्ण हो जाती है और उसको समस्त सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। गायत्री मन्त्र से गौ के घृत के द्वारा एक लाख आहुति करने से सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं। पंचगव्य का पानकर एक लाख गायत्री जप करने से मनुष्य को पूर्व जन्म का स्मरण हो जाता है और प्रतिदिन विविध प्रकार के अन्नादि द्वारा हवन करने से सदा अन्न आदि की प्राप्ति होती है। गायत्री मंत्र से लाल सिद्धार्थक (लाल सरसों) का दस हजार हवन करने से समस्त शत्रु वश में हो जाते हैं। मधु में सेंधा नमक को मिलाकर दस हजार गायत्री मंत्र द्वारा हवन करने से सभी वश में हो जाते हैं। लाल कर-बीर के पुष्पों से हवन करने से सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं। गायत्री मंत्र से लोध के तेल की एक लाख हवन करने से शत्रु दूसरे देश में चला जाता है और एक लाख नीम के पत्तों से हवन करने से मनुष्यों के विद्वेष की शान्ति हो जाती है। लाल चावल को घी में मिलाकर एक लक्ष हवन करने से मनुष्य बलवान् होता है और उसका शत्रु उसको कभी पराजित नहीं कर सकता। गौ का दुग्ध और मधु को घृत में मिलाकर गायत्री मंत्र से एक लाख हवन करने से विदेश में गया हुआ मनुष्य अपने घर वापस आ जाता है।

शमी-बिल्व-पलाशानामस्य तु विशेषतः।
पुष्पाणां समिधश्चैव हुत्वा हेममवाप्नुयात्॥
(गायत्रीपटल)

गायत्री मंत्र से शमी, बैल, पलाश और मदार के पुष्पों से और इनकी लकड़ियों से एक लाख हवन करने से सुवर्ण की प्राप्ति होती है।

बिल्वानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
परां श्रियमवाप्नोति यदि न भ्रणद्दा भवेत्॥

पाद्मानां लक्षहोमेन घृताक्तानां हुताशने।
प्राप्नोति राज्यमखिलं सुसम्पन्नमकण्टकम्॥

पञ्चविंशतिलक्षेण दधि-क्षीरं हुताशने।
स्वदेहे सिद्धयते जन्तुः कौशिकस्य मतं यथा॥
(गायत्रीपटल)

गायत्री मंत्र से घृत में मिलाकर बेल की लकड़ियों से अग्नि में एक लाख हवन करने से मनुष्य को लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यदि वह मनुष्य भ्रूणहा अर्थात् गर्भस्थ शिशु की हत्या करने वाला न हो तो गायत्री-मंत्र के द्वारा घृत से मिले हुए कमल के पुष्पों से एक लाख अग्नि में हवन करने से अकण्टक, समस्त सम्पत्तिशाली राज्य की प्राप्ति होती है। गायत्री-मंत्र गौ के दुग्ध और दधि से पच्चीस लाख अग्नि में हवन करने से मनुष्य इसी शरीर से सिद्धि को प्राप्त कर लेता है, यह विश्वामित्र का मत हैं।

गोघ्नः पितृघ्न-मातृलघ्नौ ब्रह्महा गुरुतल्पगः।
स्वर्णहारी तैलहारी यस्तु विप्रः सुरां पिबेत्॥

चन्दनद्वयसंयुक्तं कपूर्रं तण्डुलं यवम्।
लवङ्ग सुफलं चाज्यं सिता चाम्रस्य दारुकैः॥

अयं न्यूनविधिः प्रोक्तो गायत्र्याः प्रीतिकारकः।
एवं कृते महासौख्यं प्राप्नोति साधको ध्रुवम्॥

अन्नाज्यभोजनं हत्वा कृत्वा वा कर्म गर्हितम् ।
न सीदेत् प्रतिगृह्णानो महीमपि ससागराम् ॥
(गायत्रीपटल)

गौ, पिता, माता और ब्राह्मण का वध करने वाला गुरु-पत्नी से गमन करने वाला, सुवर्ण और तेल को चुराने वाला और मद्यपान करने वाला ब्राह्मण गायत्री-जप से लाल और सफेद चन्दन, कपूर, चावल, यव, लवंग, सुन्दर फूल, घृत और मिश्री से तथा आम की लकड़ी से एक लाख हवन करने वाले के ऊपर प्रसन्न होकर उसको अनेक प्रकार के महान सुखों को देती हैं। अज्ञात रूप से निकृष्ट कार्य करने पर घी से मिले हुए अन्न से अग्नि में हवन करने से किए हुए अज्ञात निकृष्ट कार्यों का क्षय हो जाता है और सागर पर्यन्त पृथ्वी का लेने वाला भी पतित नहीं हो सकता।"

तत्वसंख्यासहस्राणि समन्त्रं जुहयात् तिलैः ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो दीर्घमायुश्च विन्दति ॥
आयुष्य साज्यहविषा केवलेनाथ सर्पिषा ।
पर्वाङ्कतैस्तिलर्मन्त्री जुहुयात् त्रिसहस्रकम् ॥
अरुणाक्षैस्त्रिमध्वाज्यैः प्रसूनैर्बह्मवृक्षजैः ॥
(गायत्रीपद्धति)

"गायत्री-मन्त्र से तिलों के द्वारा चौबीस हजार हवन करने से मनुष्य समस्त पापों से मुक्त हो जाता है और वह दीर्घायु को प्राप्त करता है। दीर्घायु की कामना के लिए घी के सहित हवि से अथवा केवल घृत से अथवा तिल से गायत्री-मन्त्र द्वारा तीन हजार हवन करे। मजीठ मधु, घृत पलाश, गूलर के पुष्पों से विशेष फल प्राप्त होता है।"

"गायज्याः लक्षहोमेन मुच्यते सर्वपातकः।"
(वृहद यमस्मृति)

"गायत्री-मन्त्र द्वारा लक्ष होम करने से मनुष्य समस्त पापों से मुक्त हो जाता है।"

इसी प्रकार अनेक पुराणों में, स्मृतियों में और गायत्री सम्बन्धी स्तोत्रादिकों में भी गायत्री के हवन का फल विशेष विस्तार से लिखा है।

जानुदघ्ने जले जप्तवा सर्वान् दौषाञ्छमं नयेत्।
कण्ठदघ्ने जले जप्त्वा मुच्येत्प्राणान्तिकाद् भयात्॥
सर्वेभ्यः शान्तिकर्मभ्यो निमज्याऽप्मु जपः स्मृतः।
(देवीभागवत)

"जनुपर्यन्त जल में रहकर गायत्री का जप करने से पुरुष के समस्त दोष शान्त हो जाते हैं। कण्ठपर्यन्त जल में जप करने से प्राणान्तकारी भय दूर हो जाता है। सभी प्रकार की शान्ति के लिए जल में डूबकर गायत्री का जप करना चाहिए, ऐसा कहा गया है।"

निखने मुच्यते तेभ्यो लिखने मध्यतोऽपि च।
मण्डले शूलमालिख्य पूर्वोक्ते च क्रमेऽपि वा॥
अभिमन्त्र्य सहस्रं तन्निखनेत्सर्वशान्तये।
सौवर्णं राजतं वाऽपि कुम्भं ताम्रमयं च वा॥
मृण्मयं वा नवं दिव्यं सूत्रवेष्टितमव्रणम्।
स्थण्डिलै सैकते स्थाप्य पूरेयेन्मन्त्रविज्जलैः॥
दिग्भ्य आहृत्य तीर्थानि चतसृभ्यो द्विजोत्तमैः।
एला-चन्दन-कर्पूर-जाती-पाटख-मल्लिकाः॥

बिल्वपत्रं तथा क्रान्तां देवीं व्रीहियवांस्तिलान् ।
सर्षपान् क्षीरवृक्षाणां प्रवानि च निःक्षिपेत् ॥
सर्वाण्यभिविधायैव कुशकूर्चसमन्वितम् ।
स्नातः समाहितो विप्रः सहस्रं मन्त्रयेद् बुधः ॥
दिक्षु सौरानधीयीरन् मन्त्रान् विप्रास्त्रायीविदः ।
प्रोक्षयेत् पाययेदेनं नीरं तेनाभिषिञ्चयेत् ॥
भूतरोगाभिचारेभ्यः स निर्मुक्तः सुखी भवेत् ।
अभिषेकेण मुच्येत मृत्यारास्यगता नरः ॥
अवश्यं कारयेद् विद्वान् राजा दीर्घजिजीविषुः ।
गावो देयाश्च ऋत्विग्भ्य अभिषेके शतं मुने ! ॥
दक्षिणा येन वा तुष्टिर्यथाक्तयाऽथवा भवेत् ।
(देवीभागवत)

"भूमि में चतुष्कोण मण्डल लिखकर उसके मध्य में गायत्री मन्त्र पढ़कर त्रिशूल धंसा दें। इससे पिशाचों के आक्रमण से पुरुष बच सकता है अथवा सब प्रकार की शान्ति के लिए पूर्वोक्त कर्म में ही गायत्री के एक हजार मंत्र से अभिमन्त्रित कर त्रिशूल गाड़े। वहीं सुवर्ण, चांदी, तांबा अथवा मिट्टी का नवीन दिव्य का कलश स्थापित करे। उस कलश में छिद्र नहीं होना चाहिए। उसे वस्त्र से वेष्टित कर दे। बालू से बनी हुई वेदी पर उसे स्थापित करे। मन्त्रज्ञ पुरुष जल से उस कलश को भर दे। फिर श्रेष्ठ द्विज चार दिशाओं के तीर्थों का उसमें आह्वान करें। इलायची, चन्दन कर्पूर, जायफल, गुलाब, मालती, बिल्वपत्र, विष्णुकांता, सहदेवी, धान, यव, तिल, सरसों तथा क्षीरवृक्ष वाले वृक्ष अर्थात पीपल, गूलर, पाकर और बट के कोमल पल्लव उस कलश में छोड़ दे। उसमें सताईस

कुशों से निर्मित एक कूर्च रख दे। तब सभी विधि सम्पन्न हो जाने पर स्नान आदि से पवित्र हुआ जितेन्द्रय बुद्धिमान ब्राह्मण एक हजार गायत्री के मन्त्र से उस कलश को अभिमन्त्रित करे। वेदज्ञ ब्राह्मण चारों दिशाओं में बैठकर सूर्य आदि देवताओं का मन्त्रों का पाठ करे। साथ ही इस अभिमन्त्रित जल से प्रोक्षण, पान और अभिषेक करे। इस प्रकार की विधि को सम्पन्न करने वाला पुरुष भौतिक रोगों और उपचारों से मुक्त होकर परम सुखी हो सकता है। इस अभिषेक के प्रभाव से मृत्यु के मुख में गया हुआ मनुष्य भी मुक्त हो जाता है। विद्वान् पुरुष दीर्घ समय तक जीवन धारण करने की इच्छा वाले राजा को ऐसा अनुष्ठान करने की अवश्य प्रेरणा करे। तब अभिषेक समाप्त हो जाने पर ऋत्विजों को दक्षिणा में सौ गौएं दे। दक्षिणा उतनी देनी चाहिए, जिससे ऋत्विक्गण सन्तुष्ट हो सकें अथवा जिसकी जैसी शक्ति हो, तदनुसार दक्षिणा दी जा सकती है।

जपेदश्वत्थमालभ्य मन्दवारे शतं द्विजः।
भूतरोगाभिचारेभ्यो मुच्यते महतां भयात्॥

द्विज शनिवार के दिन पीपल के वृक्ष के नीचे गायत्री का सौ बार जप करे। इससे वह भौतिक रोग एवं अभिचारजनिक महान भय से मुक्त हो जाता है।"

यां दिशं शतजप्तेन लोष्टेनाभिप्रताडयेत्।
ततोऽग्निमारुतारिभ्यो भयं तस्य विनश्यति॥
मनसैव जपेदेनां बद्धो मुच्येत बन्धनात्।
भूतरोगविषादिभ्यः स्पृशञ्जप्त्वा विमोचयेत्।
भूतादिभ्यो विमुच्येत जलं पीत्वाऽभिमन्त्रितम्।

अभिमन्त्र्य शतं भस्मन्यसेद् भूतादिशान्तये ॥
शिरसा धारयेद् भस्य मन्त्रयित्वा तदित्यृचा ॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तः सुखी जीवेच्छतं समाः ।
अशक्ताः कारयेच्छान्ति विप्रं दत्वा तु दक्षिणाम् ॥
(देवीभागवत)

"जो पुरुष सौ बार गायत्री-मंत्र का जप करके जिस दिशा में लोष्ट द्वारा प्रताड़न करता है, वहां अग्नि, पवन और शत्रुओं से भय नहीं हो सकता। इस गायत्री का जप मानसिक ही करना चाहिए। ऐसा करने से बन्धन में पड़ा हुआ मनुष्य उससे मुक्त हो जाता है। गायत्री का जप करके कुश से स्पर्श करता हुआ पुरुष भौतिक रोग और विष आदि के भय से रोगी को मुक्त कर देता है। गायत्री-मन्त्र से अभिमन्त्रित जल का पान करके भूत, प्रेत आदि के उपद्रवों से मनुष्य मुक्त हो जाते हैं। भूतादि के उपद्रव को शान्त करने के लिए गायत्री-मन्त्र का सौ बार उच्चारण करके अभिमन्त्रित किए हुए भस्म को सिर पर धारण करें। ऐसा करने से पुरुष सम्पूर्ण व्याधियों से मुक्त होकर सौ वर्षों तक सुख पूर्वक जीवन धारण कर सकता है। यदि स्वयं ऐसा करने में मनुष्य अशक्त हो तो दक्षिणा देकर ब्राह्मण द्वारा करवाने की चेष्टा करे।

क्षीराहारो जपेन्मृत्योः सप्ताहाद् विजयी भवेत् ।
अनश्नन् वाग्यतो जप्त्वा त्रिरात्रं मुच्यते यमात् ॥
निमज्ज्याअप्सु जपेदवं सद्यो मृत्योर्विमुच्यते ।
जपेद् बिल्वं समाश्रित्य मासं राज्यमवाप्नुयात् ॥
(देवीभागवत)

"जो पुरुष केवल दूध पीकर गायत्री का जप करता है।

यदि मौन रहकर बिना कुछ खाये-पीये जप करे तो तीन रात में यम के पाश से मुक्त हो जाता है। यदि जल में डूबकर जप करे तो उसी क्षण मृत्यु से छुटकारा मिल जाता है। अगर बिल्व वृक्ष के नीचे बैठकर जप करे तो एक महीने में राज्य मिल सकता है।"

नित्यमज्जलिनाअत्मानभिषिज्जेज्जले स्थितः।
मतिमारोग्यमायुष्यमग्रयं स्वास्थ्यमवाप्नुयात्॥
कुर्याद्विप्रोअन्यमुद्दिश्य सोअपि पुष्टिमवाप्नुयात्।
(देवीभागवत)

"जल में खड़े होकर गायत्री-मन्त्र को पढ़ते हुए प्रतिदिन अञ्जलि से अपने ऊपर अभिषेक करे। ऐसा करने से पुरुष बुद्धि, आरोग्यता, उत्तम आयु और स्वास्थ्य प्राप्त करता है। अगर ब्रह्मण दूसरे के निमित्त से करे तो उस अन्य पुरुष को भी तुष्टि प्राप्त होती है।"

अथ चारुविधिर्मासं सहस्रं प्रत्यहं जयेत्।
आयुष्स्कामः शुचौ देशे प्राप्नुयादायुरुत्तमम्॥
आयुरारोग्यकामस्तु जपेग्माशद्वयं द्विजः।
भवेदायुष्यमारोग्यं श्रियै मासत्रयं जपेत्॥
आयुः श्रीपुत्रदाराद्याश्चतुर्भिश्च यशो जपात्।
पुत्रदाराऽऽयुरारोग्यश्रियं विद्या च पञ्चभिः॥
एवमे वोतरान् कामान् मासैरेवोतैर्व्र जेतृ।
(देवीभागवत)

"आयु की कामना वाला द्विज किसी पवित्र स्थान पर बैठ कर उत्तम विधि के साथ एक मास तक प्रतिदिन एक हजार गायत्री मन्त्र का जप करें। इससे उत्तम आयु की प्राप्ति होती है।

यदि आयु और आरोग्य दोनों की कामना हो तो द्विज को चाहिए कि दो मास तक एक हजार गायत्री मन्त्र का नियम से जप करे। आयु, आरोग्यता और लक्ष्मी चाहने वाले तो तीन महीने तक गायत्री मन्त्र का जप करना चाहिए। आयु, लक्ष्मी, पुत्र, स्त्री और यश की कामना वाला द्विज चार मास तक गायत्री-मन्त्र का जप करे। पुत्र, स्त्री, आयु, आरोग्य, लक्ष्मी और विद्या—इनकी कामना करने वाले को पांच मास तक एक हजार नियम से जप करने का विधान है। यों जितने-जितने मनोरथ अधिक हो, उसी के क्रम से महीने की संख्या भी बढ़ना चाहिये।"

एकपादो जपेदूर्ध्वबाहुः स्थित्वा निराश्रयः।
मासं शतत्रयं विप्रः सर्वान् कामानवाप्नुयात्॥
एवं शतोत्तरं जप्त्वा सहस्रं सर्वमाप्नुयात्।
रुद्ध्वा प्राणमपानं च जपेन्मासं शतत्रयम्॥
यदिच्छेत्तदवाप्नोति सहस्रात्परमाप्नुयात्।
एकपादो जपेदूर्ध्वबाहू रुद्ध्वाऽनिलं वशः॥
मासं शतमवाप्नोति यदिच्छेदिति कौशिकः।
एव शतत्रयं जप्त्वा सहस्रं सर्वमाप्नुयात्॥
निमज्याऽऽप्सु जपेन्मासं शतमिष्टमवाप्नुयात्।
एवं शतत्रयं जप्त्वा सहस्रं सर्वमाप्नयात्॥

"एक पैर पर खड़े होकर बिना किसी अवलम्ब के बाहों को ऊपर उठाये हुए तीन सौ मन्त्रों का प्रतिदिन महीने भर जप करने से द्विज को सम्पूर्ण कामनाएं प्राप्त होती हैं। इस प्रकार ग्यारह सौ मन्त्रों का महीने भर जप करने से द्विज की कोई भी अभिलाषा अधूरी नहीं रह सकती। यदि प्राण और

अपान वायु को रोककर तीन सौ गायत्री-मन्त्र का एक महीना जप करे तो वह जिस वस्तु की इच्छा करे, वह उसे प्राप्त हो जाय। यों ग्यारह सौ मन्त्रों का जप करने पर पुरुष सर्वस्व पा जाता है। कौशिक जी का कथन है कि एक पैर पर खड़े होकर बाहें ऊपर उठाकर श्वास रोकते हुए सौ मन्त्रों के क्रम से एक महीना जप करे तो उसकी यथेष्ट कामनाएं पूरी हो जाती है। इस प्रकार तेरह सौ मन्त्रों का प्रतिदिन महीने भर जप करने से सम्पूर्ण मनोरथ प्राप्त हो जाते हैं। जल में डूबकर सौ मन्त्रों के नियम से एक मास तक जप करे तो पुरुष अपना अभीष्ट प्राप्त कर लेता है। यो तेरह सौ मन्त्रों का महीने भर जप करने से द्विज की सारी कामनाएं पूर्ण हो जाती हैं।"

एकपादो जपेदूर्ध्वबाहू रुद्ध्वा निराश्रयः।
नक्तमश्नन् हविष्यान्वं वत्सराद ऋषितामियात्॥

गीरमोधा भवेदेवं जप्त्वा सम्वत्सरद्वयम्।
त्रिवत्सरं जपेदेवं भवेत् त्रैकालदर्शनम्॥

आयाति भगवान् देवश्चतुः सम्वत्सरं जपेत्॥
पञ्चभिर्वत्सरैरेवमणिमादिगुणो भवेत्।

एव षड्वत्सरं जप्त्वा कामरूपित्वमाप्नुयात्॥
सप्तभिर्वत्सरैरेदममरत्वमवाप्नुयात्।

एकादशभिराप्नोति प्राजापत्यं, ब्रवत्सः।
ब्रह्मत्वं प्राप्नुमादेवं जप्त्वा द्वादश वत्सरान॥

(देवी भागवत)

अगर एक पैर से, बिना किसी सहारे बाहें ऊपर उठाकर खड़े होकर एक वर्ष तक गायत्री का जप करें और रात्रि में केवल हविष्यान्न खाये तो वह पुरुष "ऋषि" हो जाता है।

यों यदि दो वर्ष तक गायत्री का जप करे तो उसकी वाणी अमोघ हो जाती है अर्थात वह जो कहता है, सो हो जाता है। इस नियम से तीन वर्षों तक जप करने पर मनुष्य त्रिकालदर्शी हो जाता है। यदि चार वर्षों तक जप करे तो स्वयं भगवान् सूर्य उसके सामने आकर दर्शन देते हैं। पांच वर्षों तक जप करने से अणिमादि सिद्धियों की प्राप्ति होती है। इस प्रकार यदि छः वर्षों तक जप करे, तो पुरुष में इच्छानुसार रूप धारण करने की योग्यता प्राप्त हो जाती है। सात वर्षों तक जप करने से इन्द्र पद प्राप्त हो सकता है: ग्यारह वर्षों तक जप करने से पुरुष प्रजापति तथा बारह वर्षों के जप करने से ब्रह्मा योग्यता प्राप्त हो जाती है।

अथ शुद्धयै रहस्यानां त्रिसहस्रं जपेद् द्विजः।
मासं बुद्धो भवेत् स्तेयात्सुवर्णस्य द्विजोत्तमः॥

जपेन्मासं त्रिसाहस्रं सुरापः शुद्धिमाप्नुयात्।
मासं जपेत् त्रिसाहस्रं शुचिः स्यात् गुरुतल्पगः॥

त्रिसहस्रं जपेन्मासं कुटीं कृत्वा वने वसन्।
ब्रह्महा मुच्चयते पापादिति कौशिकभाषितम्॥

द्वादशाह निमज्यात्सु सहस्रं प्रत्यहं जपेत्।
त्रिसाहस्रं जपेन्मासं प्राणानायम्य वाग्यतः॥

महापातकयुक्तो वा मुच्चयते महतो भयात्।
प्राणायामसहस्रेण ब्रह्महापि विशुद्धयति॥

षट्कृत्वस्त्वभ्यसेदूर्ध्वं प्राणापानौ समाहितः।
प्राणायामो भवेदेष सर्वपापप्रणाशनः॥

सहस्रमभ्यसेन्मासं क्षितिपः शुचितामियात्।
द्वादशाहं त्रिसाहस्रं जपेद्धि गोवधे द्विजः॥

अगम्याऽऽगमनस्तेयसननाभक्ष्यभक्षणे ।
दशसाहस्रममभ्यस्ता गायत्री शोधयेद् द्विजम् ॥
प्राणायामशतं कृत्वा मुच्यते सर्वकिल्विषात् ।
सर्वेषामेव पापानां संकरे सति शुद्धये ॥
सहस्रमभ्यसेन्मासं नित्यजापी वने वसन् ॥
उपवाससमं जप्यं त्रिसहस्रं तदित्यृचम् ।
चतुर्विंशति साहस्रमभ्यस्तात्कृच्छसंज्ञिता ॥
चतुःषष्टिहस्त्राणि चान्द्रायणसमानि तु ।
शतकृत्वोऽभ्यसेन्नित्यं प्राणानायभ्य सन्ध्ययोः ॥
तदित्यृचमवाप्नोति सर्वपापक्षयं परम् ।
निमज्याप्सु जपेन्नित्यं शतकृत्वस्तदित्यृचम् ।
ध्यायन् देवीं सूर्यरूपां सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥
(देवी भागवत)

"अब पाठकों की शुद्धि के लिए साधक को चाहिए कि तीन हजार गायत्री मन्त्र का जप करें। प्रतिदिन तीन हजार गायत्री-मन्त्र का महीने भर जप करने वाला मनुष्य यदि गु"तल्पगामी हो तो भी पवित्र हो जाता है वन में कुटी बनाकर वहीं रहते हुए एक महीने तक प्रतिदिन तीन हजार गायत्री का जप करे।

कौशिक मुनि कहते हैं कि ऐसा करने से पुरुष ब्रह्म-हत्या के पाप से मुक्त हो जाता है। जल में डूबकर बारह दिनों तक प्रतिदिन एक-एक हजार गायत्री का जप करे तो महान पापी द्विज समस्त पापों से छूट जाता है। प्राणायामपूर्वक मौन होकर एक मास तक प्रतिदिन तीन हजार गायत्री का जप करने से महान पाप का व्यक्ति भी असीम भय से मुक्त हो जाता है।

एक हजार प्राणायाम करने से ब्रह्म हत्यारा भी शुद्ध हो सकता है। प्राण और अपान-वायु को ऊपर चढ़ाकर गायत्री मन्त्र का छः बार अभ्यास करे।

यह प्राणायाम सम्पूर्ण पापों का नाशक है। मास-पर्यन्त प्रतिदिन एक हजार गायत्री का अभ्यास करने से राजा पवित्र हो जाता है। साधक को चाहिए कि यदि गौवध की हत्या लग जाय, तो उसकी शुद्धि के लिए बारह दिनों तक तीन-तीन हजार गायत्री का जप करें।

दस हजार गायत्री का जप द्विज को अभ्यागमन, चोरी, प्राणिहिंसा और अभक्ष्य-भक्षण के पाप से शुद्ध कर देता है। सौ बार प्राणायाम कर पुरुष समस्त पापों से छूट जाता है।

अगर साधक सम्पूर्ण मिश्रित पापों से ग्रस्त हो गया हो तो उनकी शुद्धि के लिए वन में रहकर एक मास तक प्रतिदिन गायत्री के एक हजार मन्त्रों का अभ्यास करना चाहिए। चौबीस हजार गायत्री के अभ्यास को "कृच्छव्रत" कहते हैं। चौसठ हजार गायत्री का जप "चान्द्रायण" के समान है। अगर प्रातः और सायं दोनों सन्ध्याओं के समय प्रतिदिन प्राणायाम करके गायत्री के सौ मन्त्र जप किया जाय, तो उससे समस्त पापों का क्षय हो जाता है। जल में डूबकर सूर्य-मयी गायत्री देवी का ध्यान करते हुए त्रिपदा गायत्री का प्रति-दिन सौ बार जप करने वाला पुरुष सभी प्रकार के पापों से छुटकारा पा जाता है।

बुद्धि का विकास :

गायत्री बुद्धि को तेज करने का मन्त्र है। इससे मन्द बुद्धि बालक बुद्धिमान हो जाता है। जिन बालकों को स्कूल का पाठ

भली प्रकार याद नहीं हो पाता है वे निश्चित रूप से इस साधना से लाभान्वित हो सकते हैं।

साधना इस प्रकार करें कि मस्तक को जल से भिगोयें और सूर्योदय की प्रथम किरणें उस पर पड़ने दें। पूर्व की ओर मुख करके बैठे आंखों को अधखुला रखें और गायत्री मन्त्र से पहले ३ बार "ॐ" का पाठ करते हुए गायत्री मन्त्र का श्रद्धापूर्वक जप करें। जप १०८ मन्त्रों का अथर्पत् एक माला का तो होना ही चाहिए। अधिक सुविधा हो तो ३, ५, ७, ९, ११ मालाओं का जप किया जा सकता है। जप के बाद दोनों हाथों की हथेलियों को सूर्य की ओर करें और भावना करें कि उनमें सूर्य की शक्ति प्रविष्ट हो रही है। गायत्री मन्त्रों का उच्चारण करते हुए हथेलियों को आपस में रगड़ें और उनको मस्तक सिर, नेत्रों, मुख गले, कान आदि सभी गले के ऊपरी भागों पर फेरें।

लक्ष्मी प्राप्ति हेतु :

आर्थिक रूप से पिछड़े व्यक्तियों के लिए यह साधना सर्वोत्तम है। नीचे दिए विधान से गायत्री साधना करनी चाहिए :

लक्ष्मी की प्राप्त करने के लिए गायत्री मन्त्र के अन्त में ३ बार "श्री" बीज मन्त्र का सम्पुट लगाकर जप करना चाहिए। जप कम से कम एक माला का होना चाहिए। जितना अधिक किया जायेगा उतना ही लाभ शीघ्र होगा। पीत वर्ण लक्ष्मी का प्रतीक माना जाता है। हाथी पर सवार, पीताम्बर धारी गायत्री का ध्यान करें। पूजा में आसन, जनेऊ (यज्ञोपवीत) वस्त्र, पुष्प सभी पीले होने चाहिए। भोजन में पीली वस्तुओं का ही प्रयोग करना चाहिए। रविवार को उपवास करें।

शुक्रवार को तेल में हल्दी मिलाकर मालिश करें। जप साधना करते हुए इस प्रकार ध्यान करें, कि गायत्री माता प्रसन्न होकर सफलता का आर्शीवाद दे रही है।

रोग निवृत्ति हेतु :

रोगी अगर स्वयं साधना पर बैठ सके तो हरे वस्त्र धारण किए वृषभ वाहिनी गायत्री का ध्यान करे। बैठना संभव न हो तो गायत्री का मानसिक जप करते रहना चाहिए और तन्त्र के मन्त्र में बीज मन्त्र का सम्पुट लगाना चाहिए। रोग निवारण के लिए ५ प्रकार सम्पुट लगाये जाते हैं। प्राय: रोगों के ३ कारण होते हैं - कफ, पित्त, बात। इन्हीं के अनुसार ३ बीज मन्त्रों का विधान रोगों में "ऐं" बीज मन्त्र, बात प्रधान रोगों में "हूं" बीज मन्त्र का सम्पुट लगाना चाहिए और भावना करनी चाहिए कि गायत्री की सविता शक्ति मन्त्रोच्चारण के साथ मेरे शरीर में प्रविष्ट हो रही है और रोग को समूल नष्ट कर रही है। परिणाम स्वरूप मेरा शरीर स्वस्थ्य व सबल हो रहा हैं। अगर कोई गायत्री सिद्ध साधक किसी दूसरे रोगी का उपचार करना चाहता हो तो ध्यान और बीज मन्त्रों का प्रयोग उपरोक्त विधि से ही रहेगा। उपचारकर्ता को मन्त्र का उच्चारण करते हुए पीड़ित अंगों पर हाथ फेरना चाहिए और अभिमन्त्रित जल का मार्जन अवश्य करना चाहिए।

रक्षा कवच :

मानसिक सुख शान्ति. शारीरिक रोगों से निवृत्ति, आर्थिक बाधाओं व अन्य विपदाओं को दूर करने के लिए यह कवच धारण किया जाता है। किसी रविवार या अन्य शुभ दिन देख कर उपवास रखना चाहिए। गोरोचन, जायफल, जावित्री,

कस्तूरी, केशर—इन पांच वस्तुओं को मिलाकर स्याही बना लें। भोज पत्र पर अनार को कलम से पांच प्रणव लगा कर गायत्री मन्त्र लिखें। इसे चांदी के ताबीज के भीतर बन्द कर धारण करना चाहिए।

सुखी प्रसव हेतु :

कांसे की थाली में अनार की कलम से उपरोक्त विधि से बनी 'स्याही से पांच प्रणव युक्त गायत्री मन्त्र लिखें और प्रसव कष्ट के समय प्रसूता को दिखलावें। फिर थाली में जल डाल-कर गायत्री मन्त्र का उच्चारण करें और घोलकर गर्भवती स्त्री को पिलायें इससे प्रसव सुखपूर्वक होता है।

भूत-प्रेत बाधा हेतु :

भूत-प्रेत बाधा के लिए गायत्री हवन श्रेष्ठ है। इसमें गायत्री मन्त्र से अहुतियां दें और हवन कुण्ड के पास रखा हुआ जल जो अग्नि से तप चका है, रोगी को पिला दें। यज्ञ भस्म रोगी के विभिन्न अंगों मस्तक, नेत्र, हृदय, मुख, कण्ठ नासिका, कान आदि पर लगायें, इससे लाभ उसे होगा।

पुत्र प्राप्ति हेतु :

गर्भ की स्थापना ही न होती हो, गर्भ गिर जाते हों, अथवा लड़कियां ही होती हो तो गायत्री की इस प्रकार साधना करनी चाहिए—

इस साधना को पति पत्नी दोनों करें। कमल पुष्प हाथों में धारण किये हुए, किशोर अवस्था वाली, श्वेत वस्त्र व आभूषणों से विभूषित गायत्री माता का ध्यान करना चाहिए। माला चन्दन की होनी चाहिए। "य" बीज मन्त्र के तीन

सम्पुट लगाकर गायत्री जप करें। प्राणायाम की विधि इस प्रकार है—

पूरक में धीरे-धीरे पेडू तक पूरी सांस लें। अन्त में कुम्भक में जब श्वास रोके तो ३ बार "य" बीज मन्त्र का सम्पुट लगाकर गायत्री का जप करना ही चाहिए। फिर धीरे-धीरे श्वास को बाहर निकाल दें। रेचक में उतना ही समय लगाना चाहिए जितना कि पूरक में लगाया था। बाह्य कुम्भक में भीतरी कुम्भक के समान समय लगाना चाहिए। इस प्रकार १२ बार नित्य प्रणायाम करने का विधान है इस प्रकार पेड में गायत्री शक्ति का आर्षण किया जाता है और गर्भाशय या वीर्य कोष में शुभ्र वर्ण ज्योति का ध्यान किया जाता है। जब तक साधना चले, प्रत्येक रविवार को भोजन में श्वेत वस्तुओं का ही प्रयोग करना चाहिए। इनमें दूध, दही, चावल श्रेष्ठ माने जाते हैं। गायत्री शक्ति को धारण कराने वाली इस साधना से चरित्रवान्, बुद्धिमान और स्वस्थ बालक की ही आशा करनी चाहिए। ऐसा ही विधान है।

विष निवृति हेतु :

विषैले जीवों के काटने पर अनेकों प्रकार के प्रयोग व औषधियों का प्रयोग किया जाता है। गायत्री मन्त्र का निम्न प्रयोग भी लाभदायक सिद्ध होता है। प्रयोग करते समय जो भी स्वर चल रहा हो, उसी हाथ पर थोड़ी सी पीपल वृक्ष की समिधाओं से किए हवन की भस्म को लेकर दूसरे हाथ से उसे अभिमन्त्रित करें और बीच में "हूं" बीज मन्त्र का सम्पुट लगाते चले और रक्तवर्ण अश्वारुढ़ा गायत्री का ध्यान करते हुए भस्म को काटे स्थान पर मलें। सर्प काटे पर प्रयोग करना हो तो चन्दन की लकड़ी से किए गए गायत्री हवन की

भस्म को मसलना चाहिए। अभिमन्त्रित करके रोगी को शुद्ध घी पिलायें। साथ-साथ पीली सरसों का उपरोक्त विधि से अभिमन्त्रित करें और पीस कर सभी इन्द्रियों के मुखों पर लगा दें। इससे सर्प विष का नाश होता है।

शत्रुता के दमन हेतु :

शत्रु हानि के लिए लाल वस्त्र धारण कर, ऊन का आसन बिछायें। जिस व्यक्ति की द्वेष भावना को दूर करना हो, उसका नाम पीपल के पत्ते पर लाल चन्दन की स्याही और अनार की कलम से लिखें। फिर उल्टा करके अपने सामने रख दें। चार "क्लीं" बीज मन्त्री का सम्पुट लगाकर गायत्री मन्त्र का उच्चारण करें। प्रत्येक मन्त्र के उच्चारण के पश्चात चम्मच से कुछ जल पत्ते पर छोड़ते जायें और यह भावना करें कि वह शत्रुता को भूलकर हम से बात-चीत कर रहा है। इस तरह कम से कम १०८ मन्त्रों का जप करना चाहिए। सिंह की सवारी किए हुए, हाथ में खड्ग लिए, विकराल भाव बनाये हुए दुर्गा वेशधारी गायत्री का जप करना चाहिए। जप लाल चन्दन की माला से करना चाहिए।

चोरी से बचाव हेतु :

प्रातःकाल शौचादि से निवृत्त होकर पूर्वाभिमुख होकर एक माला जप करें और इस प्रकार ध्यान करें कि लक्ष्मण रेखा की तरह मकान के चारों ओर विद्युत की एक चमकती हुई रेखा खिंची हुई है, जिसे पार करना किसी आसुरी प्रवृत्ति वाले मनुष्य के लिए संभव नहीं है। मुख्य द्वार पर सिंहारुढ़ खड्ग हस्ता, विकराल बन्दना, दुर्गा वस्त्र धारी गायत्री सुरक्षा में तत्पर हैं और द्वार की ओर बालों को वह अपने अस्त्र शस्त्रों

के तेज से नष्ट कर रही हैं। रात्रि को सोते समय भी ३ बार गायत्री का मानसिक उच्चारण करते हुए यही ध्यान करना चाहिए।

दुस्वप्न हेतु :

कभी-कभी ऐसे स्वप्न आते हैं, जो बुरे भविष्य का संकेत करते हैं अगर इसकी आशंका बनी रहे तो नित्य प्रति ११ माला गायत्री का जप करना चाहिए। गायत्री सहस्त्रनाम का पाठ भी बुरे स्वप्नों के नाश के लिए उपयोगी है।

अनिष्ट-नाश हेतु :

किसी बुरे शकुन या मुहूर्त के उपस्थित होने पर जब किसी कार्य को आरम्भ करने में आशंका हो तो गायत्री की एक माला का जप कर वह कार्य आरम्भ किया जा सकता है। विवाह आदि में चन्द्रमा, बृहस्पति व सूर्यादि की कोई बाधा बतलाई जाती हो, विवाह न बन रहा हो या ऐसी ही कोई रुकावट हो तो गायत्री का नौ दिन का २४००० जप का एक लघु अनुष्ठान कर लेना चाहिए। इससे इस प्रकार की सभी बाधायें शान्त हो जाती हैं।

गायत्री साधना के साथ ब्रह्मचर्य का पालन करना आवश्यक है। ब्रह्मचर्य में शक्ति है। केवल विषय भागों से बचना ही ब्रह्मचर्य नहीं है, वरन् कामवासना का मानसिक चिन्तन भी इस परिधि के अन्तर्गत आता है। अपनी पत्नी के अतिरिक्त नारी मात्र को माता पुत्री व बहिन की पावन दृष्टि से देखें। अनुष्ठान काल में एक समय अन्न और एक समय फल लिया जा सकता है। यह आरम्भिक उपवास है। दोनों समय फल, दूध, दही पर रहना चाहिए। उपवास काल में जल का खुला उप-

योग करना चाहिए। इसे बिना प्यास भी पीना चाहिए। नींबू मिला जल विशेष लाभदायक होता है। नमक व मीठे के उपयोग से भोजन की विभिन्न वस्तुएं स्वादिष्ट बनती है। इनका प्रयोग न करना अस्वाद व्रत कहलाता है। पहले तो केवल रविवार को ही यह व्रत रखना चाहिए। फिर ९ दिन के लघु अनुष्ठान में किया जा सकता है। अधिक बोलते रहने से शक्ति का व्यय होता है। मौन रहने से शक्ति का व्यय रुकता है। देवी तत्वों व चित्त की एकाग्रता के लिए मौन व्रत का पालन करना चाहिए। पहले इसको केवल सप्ताह में एक दिन रविवार को ही करना चाहिए। फिर सप्ताह में २-३ दिन का अभ्यास बढ़ाया जा सकता है। अनुष्ठान काल को पूरी अवधि में इसका पालन किया जाए तो अत्यन्त श्रेष्ठ है।

सहन शक्ति को बढ़ाना इसका उदेश्य है। गर्मी के मौसम में पंखा, छाता, बर्फ की अत्यन्त आवश्यकता रहती है। इसके त्याग से सहन शक्तियों का परिचय मिलता है। सर्दी में भी कम से कम वस्त्रों का उपयोग इस व्रत का पालन करना है। साधना काल में भूमि या तख्त पर सोना चाहिए। जहां तक संभव हो, अपने काम स्वयं करने चाहिए, समय की सुविधा हो तो वस्त्र धोना भोजन बनाना, बर्तन साफ करना, जैसा काम स्वयं ही करे। बर्तनों के प्रयोग का भी त्याग किया जा सकता है। जहां संभव हो सवारी का उपयोग न कर पैदल यात्रा करनी चाहिए। खड़ाऊं का उपयोग करें।

अपने दोषों को छिपाना एक कमजोरी है, जिससे मन की गांठें बन जाती हैं और पाप करने का स्वभाव ही बन जाता है। इन गांठों को बनने से रोकने के लिए आवश्यक है कि इन

दोनों का प्रकाशन किया जाता रहे। कुछ ऐसे गुप्त दोष होते हैं जिनका प्रकाशन अपने हित में नहीं होता या समाज असम्मान का भय होता है। अतः ऐसे विश्वसनीय मित्रों को चुनना चाहिए, जिन पर अपने दोषों को प्रकट किया जा सके। दोष बतलाने से पापों का बोझ हल्का हो जाया करता है। स्वार्थ को छोड़कर परमार्थ पथ पर चलना दूसरों से लेने की नहीं वरन् दूसरों को देने की प्रवृत्ति को अपनाना चाहिए। औरों को किस प्रकार लाभ पहुंचा सकते हैं, दान और सहायता केवल धन की नहीं होती है, यह अनेक प्रकार की होती है। दूसरों को सहयोग देने की भावना का विकास करना ही इसका उद्देश्य है।

मनुष्य स्वभाव से दुर्बल है। न चाहते हुए भी अनेक पाप अनजाने में हो जाते हैं। उस पाप का दण्ड भुगतना ही होगा। फिर भी अगर वह अपनी भूल को मान जाए, प्रायश्चित कर ले और कुछ अल्प दण्ड सहन कर ले तो ईश्वरीय दण्ड की सीमा कम हो जाती है। शास्त्रों ने कहा है—

अनादिष्टेषु पापेषु शुद्धिश्चान्द्रायणेन तु।
धर्मार्थं यश्चरेदंतच्चन्द्रस्यति सलोकताम्॥

पाप निवृत्ति के जहां प्रायश्चित—विधान उपलब्ध न हों, वहां चान्द्रायण व्रत ही उत्तम समझना चाहिए। इस व्रत को आत्म शुद्धि के लिए जो तप समझकर करता है, वह परम गति को प्राप्त होता है।

———

श्री गायत्री चालीसा

प्रिय साधको ! अगर इन स्तोत्रों का पाठ सम्भव न हो तो श्री गायत्री चालीसा का नियमित पाठ भी किया जा सकता है। उपरोक्त स्तोत्रों के पाठ के उपरान्त भी इसका पाठ किया जा सकता है। इसमें श्रद्धा विश्वास और एकाग्रता अनिवार्य शर्ते हैं। श्री गायत्री चालीसा का पाठ निम्न प्रकार से है—

दोहा—ह्रीं, श्रीं क्लीं मेधा, प्रभा, जीवन ज्योति प्रचण्ड।
शान्ति, कान्ति, जागृति, प्रगति रचना शक्ति अखंड ॥
जगत जननि मंगल करनि, गायत्री सुरधाम।
प्रणवों सावित्री स्वधा, स्त्राहा पूरन काम ॥

भूर्भुवः स्वः 'ॐ' युत जननी। गायत्री नित कलिमल दहनी।
अक्षर चौबीस चरम पुनीता। इनमें बसें शास्त्र, श्रुति, गीता ॥
शाश्वत सतोगुणी सतरूपा। सत्य सनातन सुधा अनूपा।
हंसारूढ़ पीताम्बर धारी। स्वर्ण कान्ति शुचि गगन बिहारी ॥
पुस्तक पुष्प कमण्डलु माला। शुभ्र वर्ण तनु नयन विशाला।
ध्यान धरत पुलकित हिय होई सुख उपजत दुःख दुरपति खोई ॥
कामधेनु तुम सुरतरु छाया। निराकार की अद्भुत माया ॥
तुम्हारी शरण गहै जो कोई। तरै सकल संकट सो सोई ॥
सरस्वती. लक्ष्मी तुम काली। दियै तुम्हारी ज्योति निराली ॥
तुम्हरी महिमा पार न पावें। जो शारद शत मुख गुन गावें ॥
चार वेद की मातु पुनीता। तुम ब्रह्माणी गौरी सीता ॥
महामन्त्र जितने जग माहीं। कोऊ गायत्री सम नाहीं ॥
सुमिरत हिय में ज्ञान प्रकासा। आलस पाप अविद्या नासा ॥

सृष्टि बीज जगजननी भवानी। कालरात्रि वरदा कल्याणी॥
ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र सुर जेते। तुम सों पावें सुरता तेते॥
तुम भक्तन की भक्त तुम्हारे। जननिहि पुत्र प्राण ते प्यारे॥
महिमा अपरम्पार तुम्हारी। जै जै जै त्रिपदा भयहारी॥
पूरति सकल ज्ञान विज्ञाना। तुम सम अधिक न जग में आना॥
तुमहिं जानि कछु रहे न शेषा। तुमहि पाय कछु रहु न क्लेशा॥
जानत तुमहिं तुमहिं ह्वै जाई। पारस परसि कुधातु सुहाई॥
तुम्हारी शक्ति दियै सब ठाईं। माता तुम स बठौंर समाई॥
ग्रह, नक्षत्र, ब्रह्माण्ड घनेरे। सब गतिवान् तुम्हारे प्रेरे॥
सकल सृष्टि की प्राण विधाता। पालक, पोषक नाशक, त्राता॥
मातेश्वरी दया व्रत धारी। तुम सन तरे पातकी भारी॥
जा पर कृपा तुम्हारी होई। तापर कृपा करैं सब कोई॥
मन्द बुद्धि त बुद्धि बल पावैं। रोगी रोग रहित ग्रहै जावैं॥
दारिद्र मिट, कटे सब पीरा। नासै दुःख हरै भव भीरा॥
गृह क्लेश चित्त चिन्ता भारी। नासै गायत्री भयहारी॥
सन्तति हीन सुसन्तति पावें। सुख सम्पति युत मोद मनावें॥
भूत पिशाच सबै भय खावें। यम के दूत निकट नहिं आवें॥
जो सधवा सुमिरै चित्त लाई। अछत सुहाग सदा सुखदाई॥
घर वर सुखप्रद लहैं कुमारी। विधवा रहें सत्य व्रत धारी॥
जयति जयति जगदम्ब भवानी। तुम सम और दयालु न दानी।
जो सद्गुरु सौं दीक्षा पावें। सो साधन को सफल बनावें॥
सुमिरन करै सुरुचि बड़भागी। लहैं मनोरथ गृहि विरागी॥
अष्ट सिद्धि नव निधि की दाता। सब समर्थ गायत्री माता॥
ऋषि मुनि जति तपस्वी योगी। आरत अर्थी चिन्तित भोगी॥
जो जन शरण तुम्हारी आवें। सो सो निज वांछित फल पावें॥

बल बुद्धि विद्या शील सुभाऊ। धन वैभव यश तेज उछाहू ॥
सकल बढ़ें उपजै सुख नाना। जो यह पाठ करै धर ध्याना ॥

दोहा—यह चालीसा भक्तियुत, पाठ करे जो कोय।
तापर कृपा प्रसन्नता, गायत्री की होय ॥

विसर्जन

अन्त में विसर्जन मन्त्र का उच्चारण करना चाहिये जो इस प्रकार है:—

उत्तमे शिखरे देवि भूम्याँ पर्वत मूर्धनि।
ब्राह्मणेभ्योह्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुखन् ॥

अर्घ्यदान

जल पात्र में रखे जल से सूर्य भगवान् को अर्घ्य देना चाहिए। मन्त्र इस प्रकार है :—

ॐ सूर्य देव सहस्राँशो तेजो राशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां भवत्या गृहाणर्घ्यं दिवाकर ॥

उपरोक्त दैनिक गायत्री साधना का क्रम और विधान ब्रह्म मुहूर्त का समय सर्वश्रेष्ठ बतलाया गया है, सुविधा होने पर सायं काल की बेला में भी साधना करनी चाहिए। सायं सूर्यास्त होने के लगभग एक घण्टे के उपरान्त गायत्री साधना की जा सकती है। प्रातःकाल सूर्योदय के दो घण्टे पूर्व से जाप किया जा सकता है। मैंने यह श्री गायत्री साधना बहुजन हिताय के उद्देश्य से प्रस्तुत की है।

श्री गायत्री कवचम्

ॐ अस्य श्री गायत्रीकवचस्य ब्रा ऋषिर्गायत्रीच्छान्दो गायत्री देवता ॐ भूः बीजम् भुवः शक्तिः स्वः कीलकम् गायत्रीप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

पञ्चवक्त्रां दशभुजां सूर्यकोटिसमप्रभाम् ।
सावित्रीं ब्रह्मवरदां चन्द्रकोटिसुशीतलाम् ।।
त्रिनेत्रां सितवक्त्रां चमुक्ताहारविराजिताम् ।
वराभयाङ् कुशयशाहेमपात्रक्षमालिकाः ।।
शंखचक्राब्जयुगलं कराभ्यां दधती पराम् ।
सितपंकजसंस्थां च हंसारूढां सुरवस्ताम् ।
ध्यात्वैवं मानसाम्भोजे गायत्रीकवचं जपेत् ।।

———

आरती गायत्री जी की

जय जय जय गायत्री माता।

ॐ जय जय गायत्री माता।

सकल सृष्टि की जननी तुम हो, तुम ही भाग्य विधाता।

ॐ जय जय गायत्री माता।

परब्रह्म की पराशक्ति हो, अरु वेदों की माता।
जीव मात्र की तुम संरक्षक, घट-घट की हो ज्ञाता।

ॐ जय जय गायत्री माता।

ब्रह्म-ज्ञान औ दिव्य-दृष्टि की तुम ही मातु प्रदाता।
सुर नर मुनि जो तुमको ध्यावे, अष्ट सिद्धियां पाता।

ॐ जय जय गायत्री माता।

ब्रह्मा विष्णु महेश और, देवेश तेरा यश गाता।
सूर्य तुम्हारा दिव्य तेज ही, तहिं लोक फैलाता।

ॐ जय जय गायत्री माता।

लक्ष्मी दुर्गा शिवा सरस्वति, विविध रूप में माता।
तू ही सब दुःख हरने वाली, और सर्व सुख दाता।

ॐ जय जय गायत्री माता।

भक्ति प्रेम औ ज्ञान धर्म का, सागर-सा लहराता।
जब यह पतित पुत्र है जननी, शरण तेरी पा जाता।

ॐ जय जय गायत्री माता।

———

आरती गायत्री जी की

जयति जय गायत्री माता, जयति जय गायत्री माता ।
आदि शक्ति तुम अलख निरंजन जग पालन कत्री ।।
दुःख शोक भय क्लेश कलह दारिद्रय दैन्य हत्री ।
ब्रह्म रूपिणी, प्रणत पालिनी, जगतधातृ अम्बे ।
भवभयहारी, जन हितकारी सुखदा जगदम्बे ।।
भय हारिणी भव तारिणी अनघे, अज आनन्द राशी ।
अविकारी, अघहरी अविचलित अमले, अविनाशी ।।
कामधेनु सत् चित् आनन्दा जय गंगा गीता ।
सविता की शाश्वती शक्ति तुम सावित्री सीता ।।
ऋग्, यजु, साम, अथर्व प्रणयिनी, प्रणव महामहिमे ।
कुण्डलिनी, सहस्रा, सुषम्ना शोभा गुण गरिमे ।।
स्वाहा, स्वधा शची ब्रह्माणी राधा रुद्राणी ।
जय शतरूपा वाणी विद्या कमला कल्याणी ।।
जननी हम हैं दीन हीन दुःख दारिद्र के घेरे ।
यदपि कुटिल कपटी कपूत तऊ बालक हैं तेरे ।।
स्नेह सनी करुणामयी माता चरण शरण दीजै ।
बिलख रहे हम शिशु सूत तेरे दया दृष्टि कीजै ।।
काम, क्रोध, मद, लोभ, दम्भ, दुर्भाव, द्वेष हरिये ।
शुद्ध बुद्धि-निष्पाप हृदय, मन को पवित्र करिये ।।
तुम समर्थ सब भांति तारिणी, तुष्टि, पुष्टि त्राता ।
सत् मारग पर हमें चलाओ जो है सुख दाता ।।
जयति जय गायत्री माता । जयति जय गायत्री माता ।

"ॐ नमो देवी भगवती गायत्री नमो नमः"

———

और अब अन्त में....

अंततः पुस्तक पूर्ण हो गयी है। गायत्री उपासना पूर्णतया वैज्ञानिक है। अंधविश्वास अथवा कपोल कल्पना बिल्कुल नहीं है।

समय सदैव से परिवर्तनशील रहा है। सृष्टि के प्रारम्भ से कालचक्र निरन्तर अबाध गति से घूम रहा है और उसने साधक के अगणित उत्थान-पतन देखे हैं। अतीत के गर्भ में न जाने कितने युग, दबे पड़े हैं। समय ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता है, सम्पर्क में आई घटनाएं, वातावरण, साधक और स्थान सब पीछे छूटते हैं। मानव की बौद्धिक-संचेतना इतिहास का निर्माण करती हैं।

आज का मानव विज्ञान के युग में चल रहा है। साधना, उपासना, अराधना को हमें इसी संदर्भ में देखना होगा। अध्यात्म, दर्शन, आयुर्वेद, ज्योतिष, नोति-शास्त्र आदि ने मानव-जीवन को सृष्टि के साथ समन्वय की प्रेरणा दी।

मंत्र-शक्ति का प्रभाव अपरिमित है। उसका वर्णन सहज नहीं है। साधकों की संख्या भले ही कम हो, पर साधना अभी लुप्त नहीं हुई है। कहीं न कहीं, किसी न किसो रूप में वह उपस्थित है। जहां विज्ञान परास्त, और विवश हो जाता है, वहां मंत्र-शक्ति का चमत्कार आज भी अवाक् कर देता है।

भारतीय ऋषि मुनियों में साधना की जड़ें इतनी पुष्ट कर दी हैं कि काल भी उसे नष्ट नहीं कर सका। भारतीय साधक

सुदूर एकान्त में गिरि-कन्दरावासी हो गये—जहां सहसा कोई जाने की सोच भी नहीं सकता था।

आज हम मंत्र साधना की जो हलचल देख रहे हैं, यह चेतना का फल है—तंत्र की धरोहर, जो समय के अन्तराल में खो गई थी, अब प्रकाश में आ गई है और जो बुद्धि जीवि उसे काल्पनिक कहते थे, आज उसके अस्तित्व में सादर अर्घ्य दे रहे हैं।

महर्षि विश्वामित्र अपने समय के महान संत वैज्ञानिक और दिव्य पुरुष थे। मेनका ने उनका ब्रह्मचर्य अवश्य भंग कर दिया था, वह उनकी धर्मपत्नी बनकर भी रही, पर क्या अप्सरा किसी एक की बनकर रह सकती है? और अगर रहना भी चाहे तो क्या इन्द्र इस कड़ुवे सच को स्वीकार करेगा? नहीं मेनका वापस मंदाकिनी चली गयी। इसके बाद भी इस तपस्वी ने भारतीय आध्यात्य को एक नयी दिशा दी और स्वयं एक नयी सृष्टी रचकर ब्रह्मा को भी चकित कर दिया था। उन्होंने ही गायत्री छंद की रचना की थी यह भारतीय तपस्वीयों और मनस्वीयों की साधना शक्ति का ज्वलंत उदाहरण है।

तंत्र विज्ञान और तांत्रिक सम्प्रदाय का यह अटूट विश्वास है जीवन तो उतना ही जिया हुआ माना जाएगा जो साधना में जिया हो। ८० वर्ष की जिंदगी में केवल दस दिन ही आदमी जीता है। बाकी का जीवन भ्रांति में बीत जाता है। कई संसारी अनर्थ, अनीति, काले-सफेद धंधे करके जीते हैं। भौतिक सुख जीते हैं। हम शांति से सो भी नहीं सकते। क्या आप उसे सुख मानते हैं? नहीं, सुखी तो वही है जो साधना के समीप और सत्य के करीब रह कर जीता है। नीति धर्म और सदाचार का पालन करके जीता है। साधक को संकल्प करना चाहिए

सुख भले ही कम मिले मगर साधना के बिना नहीं जीना है।

हम भारतीय हैं हमें अपने आदर्शों का पालन करना है। अगरबत्ती जमीन पर पड़ी हो अथवा डिब्बे में, बहुत कम स्थान घेरती है मगर जब उसे जलाओगे तो सारे घर को सुगंधित कर देगी। हम साधक अगरबत्ती की संतान है। इसे प्रज्जवलित करने की आवश्यकता है। प्रज्जवलित होते ही इसकी सुगन्ध सारे संसार में फैल जायेगी। भगवान एक दिन हमसे पूछेंगे कि आपको जन्म दिया है। आपने संस्कृति का गौरव कितने दिन बढ़ाया? तब हम क्या जवाब देंगे? हम व्यर्थ में दिन-रात घूम रहे हैं। क्या एक दिन भी साधना के लिए नहीं निकाल सकते? आओ आज हम संकल्प लें कि आज से हम भी जितना हो सकेगा उतना समय साधना के लिए अवश्य देगें। हम अपना जीवन आदर्श बनाएंगे।

महाभारत में जब युधिष्ठिर की विजय हुई तब कुरुक्षेत्र के मैदान में घुटनों तक माँस का ढेर जमा हो गया था। उसमें से पांडव लाल पांव से बाहर निकले। युद्ध में बहुत सैनिक मर गये थे। जब पांडव कुरुक्षेत्र के मैदान से बाहर आए तो सवाल पैदा हुआ कि पांव कहां धोयें। कुटम्बियों के खून से रंगे लाल पांव को कौन-सा पानी धो सकेगा? तब सहदेव ने कहा कि भैया बरसात का पानी, यमुना का पानी, सरयू और गोमती का पानी इसे नहीं धो सकेगा। युधिष्ठिर बोले तो फिर? सहदेव ने कहा ये पांव वह धोयेगी जो स्त्री विधवा हो गई है, जिसका बेटा मर गया है, भाई का देहांत हो गया है। ऐसी स्त्रियों के आंसू जहां पड़ेगें, उन आंसुओं से जो तालाब तैयार होगा उसमें ये पांव धोये जा सकेंगे। धर्मराज भयभीत हो गये

तब हिमालय पर पश्चाताप के लिए पांचों भाइयों और द्रोपदी को जाना पड़ा। तब रास्ते में उनको एक स्त्री मिली। जिसने आग की चुनरी और पानी के कपड़े पहने हुए थे। वह नारी धरती थी। उसने पांडवों से कहा कि मैं आज तक किसी की नहीं हुई और किसी को होने वाली भी नहीं। फिर किस लिए इतना संघर्ष किया ? अगर आज का तांत्रिक और साधक वर्ग इस तथ्य को समझ ले कि जिस माया के पीछे वह भाग रहा है, वह उसकी होने वाली नहीं है, तो साधना का मार्ग और अधिक सरल हो जायेगा।

साधना के लिये सबसे उत्तम गायत्री उपासना है। इस दिशा में यह मेरा विनम्र प्रयास है। आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है आप सबको पसन्द आयेगा। संशय अथवा जिज्ञासा के समाधान के लिए मैं सदैव उपस्थित हूं।

शुभकामनाओं सहित।

तांत्रिक बहल

'तंत्र सबके लिए मिशन'
डी-4 राधापुरी, कृष्णानगर
(जमुनापार) देहली-1100051

चारों वेदों का सार

संपादित : उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर'

ऋग्वेद-सार

इस पुस्तक में 'ऋग्वेद' का ज्ञानामृत १०८ सूक्तियों में संकलित हैं। ऋग्वेदामृत से परिपूर्ण सूक्तियों की इस सूक्ति-माला को जीवन में व्यवहारिक रूप से जपेंगे तो कर्म के लिए तत्पर होंगे। एक बार पढ़कर तो देखें, आपको लगेगा—जीवन में आत्म-ज्ञान का अनुपम मार्ग मिल गया।

यजुर्वेद-सार

इस पुस्तक में 'यजुर्वेद' का ज्ञानामृत १०८ सूक्तियों में संकलित हैं। यजुर्वेदामृत से परिपूर्ण सूक्तियों की इस सूक्ति-माला को जीवन में व्यवहारिक रूप से जपेंगे तो कर्म के लिए तत्पर होंगे। एक बार पढ़कर तो देखें, आपको लगेगा—उन्नत पथ पर बढ़ने का उत्कृष्ट कर्म-ज्ञान मिल गया।

सामवेद-सार

इस पुस्तक में 'सामवेद' का ज्ञानामृत १०८ सूक्तियों में संकलित है जिसे पढ़ व समझकर व्यवहार में लायेंगे तो ज्ञान का संवर्धन होगा। सामवेदामृत से परिपूर्ण सूक्तियों की इस सूक्ति-माला को जीवन में व्यवहारिक रूप से जपेंगे तो उन्नति पथ अवश्य प्रशस्त होगा। एक बार पढ़कर तो देखें, आपको लगेगा—अशान्त जीवन में शान्ति पाने का अनुपम मार्ग मिल गया।

अथर्ववेद-सार

इस पुस्तक में 'अथर्ववेद' का ज्ञानामृत १०८ सूक्तियों में संकलित है। अथर्ववेदामृत से परिपूर्ण सूक्तियों की इस सूक्ति-माला को जीवन में व्यवहारिक रूप से जपेंगे तो ज्ञान से कर्म के लिए तत्पर होंगे। एक बार पढ़कर तो देखें, आपको लगेगा—ज्ञान, कर्म और भक्तियोग का अनुपम मार्ग पा लिया।

रणधीर प्रकाशन
रेलवे रोड (आरती होटल के पीछे) हरिद्वार उ.प्र.
दूरभाष (0133) 426297-426195